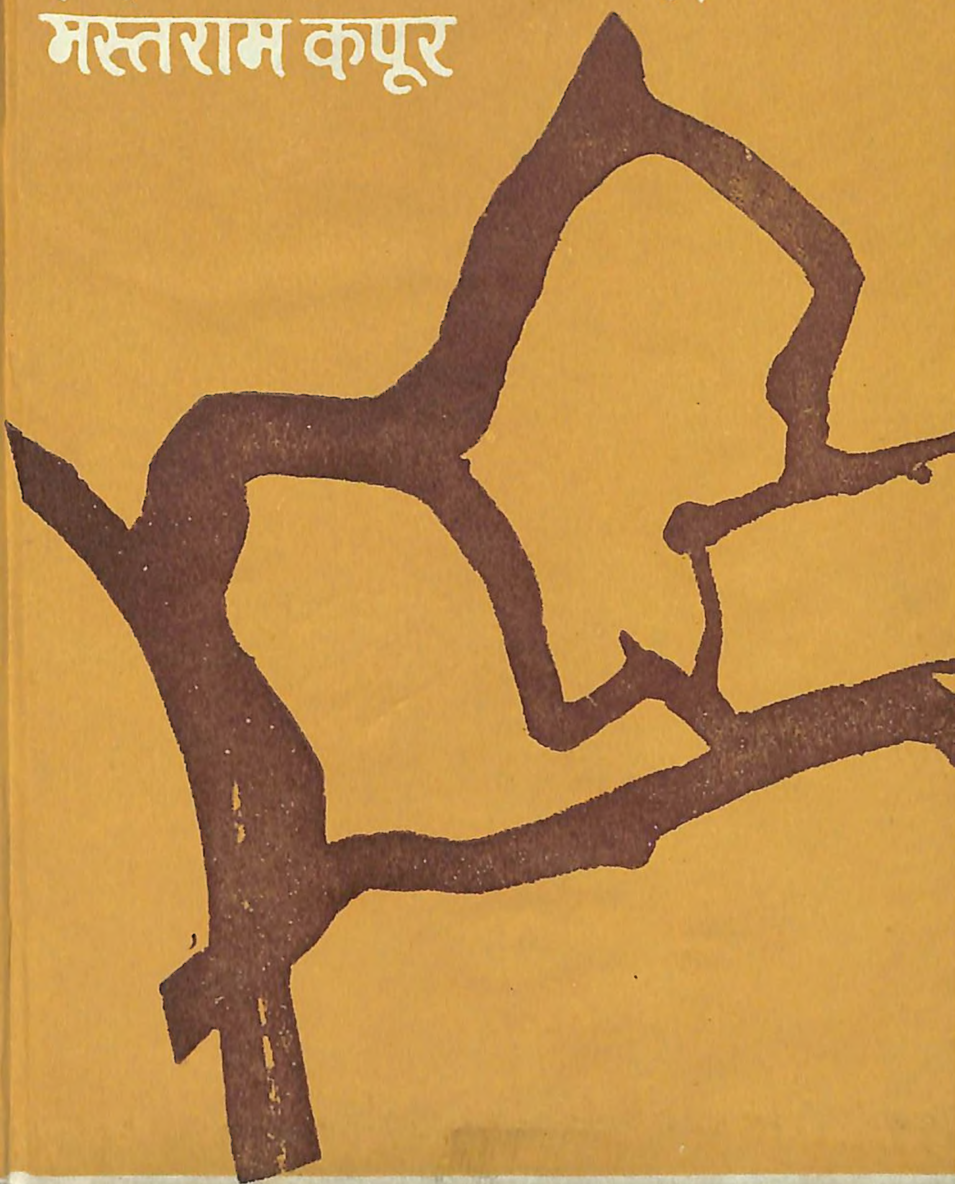
रास्ता बंद काम चालू

मस्तराम कपूर



मूल्य : **पचीस रुपये**

प्रकाशक : लेखक मंच, 79 बी, पाकेट 3,
मयूर विहार, दिल्ली 110091

प्रथम संस्करण : 1982
मुद्रक : शान प्रिंटर्स, शाहदरा, दिल्ली-32

RASTA BAND KAM CHALU : (Novel)
By Mast Ram Kapoor (25.00)

रास्ता बंद काम चालू

मस्तराम कपूर

लेखक मंच, दिल्ली

रास्ता बंद काम चालू

श्याम मोहन ने जब दफ्तर के बरामदे में कदम रखा, तो हमेशा की तरह अपनी घड़ी पर नजर डाली। ग्यारह बजने में पांच मिनट बाकी थे। उसके चपरासी परमात्मा ने लपककर हाथ से ब्रीफकेस ले लिया और कमरे का दरवाजा हाथ से ठेलकर एक तरफ खड़ा हो गया। अपने कमरे में जाने से पहले श्याम मोहन ने साथ वाले कमरे की तरफ हिकारत से देखा जिसके दरवाजे पर मखमली परदा लटक रहा था। जिस दिन इस कमरे का परदा सरका होता है और श्याम मोहन को दफ्तर में आते ही अन्दर बैठे अपने बॉस की शक्ल दिखाई पड़ जाती है, उस दिन उसका मूड खराब रहता है। अंग्रेजी में डी० एन० शर्मा और हिन्दी में दयानिधि शर्मा की सुनहरी नामपट्टी भी कभी-कभी वैसा असर दिखा देती थी जो उनकी शक्ल देखने से होता था। फिर भी अपने कमरे में जाने से पहले उस कमरे की तरफ देखना और हिकारत से मुंह फेर लेना उसकी आदत-सी हो गई थी।

परमात्मा ने मेज-कुर्सी को झाड़-पोंछकर चमका दिया था। खिड़कियां खोलकर हरे रंग के पर्दे गिरा दिए थे और पंखा चला दिया था। कमरे में कूलर भी था लेकिन परमात्मा जानता था कि साहब को सुबह आते ही कूलर की तेज हवा और आवाज अच्छी नहीं लगती थी। कूलर का इस्तेमाल वे अक्सर लंच के समय एक घंटा नींद लेने के लिए करते थे ताकि बाहर की कोई आवाज उन्हें न सुनाई दे।

धम्म से कुर्सी पर बैठकर उसने कमीज के तीन-चार बटन खोल दिए और पसीने से भीगी बनियान सुखाने लगा। खचाखच भरी बसों में सफर

करके दफ्तर पहुंचने पर उसे राहत मिलती थी और इसका आनंद वह इसी तरह पन्द्रह-बीस मिनट तक पंखे के नीचे छाती में हवा भरकर लेता था। इन पन्द्रह मिनटों में वह मन ही मन, कमीनी नौकरी करने के लिए अपने को गालियां देता था और बस की भीड़ के लिए सरकारी बस कंपनी के अफसरों को कोसता था। लेकिन बस के सफर से डरकर सरकारी कर्जे से अपनी गाड़ी लेने की बात उसके मन में कभी नहीं आई हालांकि उसके अधिकांश समकक्ष अधिकारी अपनी गाड़ी में आते थे। इसके अतिरिक्त उसने मई-जून की गरमी से घबराकर दफ्तर पहुंचने के अपने कार्यक्रम में भी फेरबदल नहीं किया और वह हमेशा की तरह दस के आस-पास घर से निकलकर ग्यारह के आस-पास दफ्तर पहुंचने के नियम का अचूक पालन करता रहा।

पसीना सुखाने के बाद उसने घंटी बजाई। परमात्मा ने अन्दर झांक-कर देखा।

"जरा देखो, कुशक बाबू बैठे हैं या उठ गए हैं ?"

परमात्मा दरवाजा बन्द कर कुशक बाबू को देखने चला गया। श्याम मोहन ने अपनी मेज पर सरसरी नजर डाली। बाईं ओर की ट्रे में पड़ी फाइलों को एक-एक करके उठाया। चार फाइलें थीं जिन्हें बिना खोले, बिना शीर्षक देखे जैसे के तैसे उसी ट्रे में पटक दिया। पिछले कई दिनों से ये फाइलें उसकी ट्रे में इसी तरह पड़ी थीं और श्याम मोहन सुबह आकर उन्हें सिर्फ गिन लेता था। जेब से सिगरेट का पैकेट निकालकर सामने रख लिया और उठने की तैयारी कर रहा था कि परमात्मा ने आकर बताया कुशक बाबू अभी बैठे हैं। झल्लाकर श्याम मोहन ने अपनी घड़ी पर नजर डाली और बोला, "एक बार फिर जाकर देखो।"

"कमाल है, साढ़े ग्यारह बज रहे हैं और वह बैठा है ?" अपने में बड़-बड़ाते हुए सिगरेट का पैकेट और माचिस की डिबिया हाथ में ले ली और उठ खड़ा हुआ। लेकिन परमात्मा ने दोबारा वही सूचना दी कि कुशक बाबू अभी बैठे हैं। श्याम मोहन ने आश्चर्य से परमात्मा की ओर देखा फिर सिगरेट सुलगाकर धीरे-धीरे कमरे से निकल ब्रांच की ओर चल दिया।

एक बड़े हाल में मेजों से मेज सटाकर बैठे लगभग पच्चीस लोग ब्रांच में थे। जगह-जगह फाइलों के ढेर लगे थे और आने-जाने वालों को उनसे बचकर निकलना पड़ता था। श्याम मोहन जब इन मेजों और फाइलों के बीच से गुजर रहा था, तो दायें-बायें बैठे सहायक कर्मचारी अपनी कुर्सी से उठकर उन्हें सम्मान दे रहे थे।

"अरे बैठो भई, बैठो," कहकर वह अपराधी की तरह आगे बढ़ता गया। अन्तिम मेज के पास पहुंचकर वह खड़ा हो गया।

कुशक ने उसे देखा तो हड़बड़ाकर अपनी कुर्सी से उठ गया। एक बार अपने अफसर की नजरों से नजर मिलाकर उसने सिर झुका लिया।

"क्या बात है ?" श्याम मोहन ने पूछा।

"कुछ नहीं, ऐसे ही—"वह अधिक नहीं बोला।

"चलो।"

कुशक चुपचाप उसके साथ चल पड़ा। दोनों हाल में से गुजरकर दूसरे दरवाजे से बाहर आये।

श्याम मोहन ने कुशक के कंधे पर हाथ रखा और बोला—"क्या बात है ? कुछ बताओ तो।"

कुशक ने "कुछ खास नहीं," कहकर टालना चाहा लेकिन श्याम मोहन मानने के लिए तैयार नहीं था। धीरे-धीरे चलकर वे कैंटीन में दाखिल हुए और रोज की तरह कोने वाली मेज पर जाकर बैठ गए।

दफ्तर की कैंटीन लगभग खाली हो गई थी। सिर्फ तीन-चार मेजों पर लोग बैठे थे। एक मेज पर चार लोग माचिस की डिबिया से जुआ खेलने में व्यस्त थे। खाली डिबिया को मेज के कोने में रखा जाता था और उसे अंगूठे से उछालकर मेज के बीचों-बीच रखे गिलास में डाला जाता था। हर बार जब माचिस की डिबिया गिलास में गिरती थी तो जीतने वाले खिलाड़ी कुर्सियों से उछलकर इतनी जोर से चिल्लाते थे कि कैंटीन में बैठे सब लोग उनकी तरफ देखने लगते थे। कैंटीन का सारा शोर उनके कहकहों से सहम जाता था। कैंटीन से बाहर पान-सिगरेट की दुकान पर खड़े लोग, या बाहर से गुजरते लोग भी भीतर झांककर देखने लगते थे। वे चार तिलंगे शिक्षा विभाग के कर्मचारी थे और कैंटीन में आने वाला

हर व्यक्ति उनसे परिचित था। सुबह ठीक सवा ग्यारह बजे और शाम ठीक साढ़े तीन बजे कैंटीन में इनका जुआ अधिवेशन चलता था। कैंटीन के नियमित ग्राहकों की कोशिश होती थी कि इनका जुआ-सेशन शुरू होने से पहले चाय पीकर उठ जाएं या सेशन खत्म होने के बाद चाय पीने आएं क्योंकि शोर के अलावा कभी-कभी उन लोगों के बीच मारपीट भी हो जाती थी।

लेकिन श्याम मोहन और कुशक अपनी कोने की मेज पर इस सारे शोर-शराबे से निर्द्वन्द्व बैठे रहते थे।

जब बैरा चाय का हाफसेट उनके आगे रख गया तो श्याम मोहन ने कुशक से वही सवाल पूछा। कुशक ने चम्मच में थोड़ी-सी चीनी लेकर चाय की केतली में डाली और चम्मच चलाते हुए श्याम मोहन की तरफ देखा।

"मुझे प्रेमपत्र मिला है।"

"क्या लिखा है? दिखाओ तो।"

"वहीं दराज में पड़ा है। उस कमीने ने मेरी सी० आर० खराब कर दी है।"

"किसने? गुप्ता ने?"

"और कौन करेगा? मेरा बॉस तो वही है। उसकी रिपोर्ट पर खुल्लर ने चुपचाप दस्तखत कर दिए।"

"लेकिन किस बिना पर? वजह क्या दी है?"

"वजह क्या? असली वजह तो यही है कि मैं आपके साथ सुबह चाय पीने कैंटीन क्यों जाता हूं।"

"लेकिन दफ्तर के समय में कौन ससुरा चाय नहीं पीता? क्या गुप्ता और खुल्लर नहीं पीते?"

"पीते हैं। लेकिन अपने बराबर वालों के साथ। स्टेटस का ध्यान रखते हैं। आपकी तरह चालू नहीं हैं कि अपने से पांच सीढ़ी नीचे के बाबू के साथ चाय पीएं।"

"इससे तो तोहमत मुझपर लगती है। तुमपर कहां लगती है?"

"मुझपर तोहमत यह लगती है कि मैं आपके साथ मिलकर दूसरे अफसरों के खिलाफ साजिश करता हूं। मुझे पूरा यकीन है कि बड़े साहब

ने गुप्ता और खुल्लर को कहकर मेरी रिपोर्ट खराब कराई है।"

श्याम मोहन गंभीर हो गया। बड़े साहब यानी मिस्टर दयानिधि शर्मा, आई० ए० एस० डायरेक्टर की याद से उसके मुंह में कड़ुवाहट भर गई। जल्दी-जल्दी चाय के घूंट भरते हुए कप खाली किया और उठने लगा कि उसकी नजर कुशक के कप पर गई। कुशक धीरे-धीरे चाय पी रहा था। श्याम मोहन ने एक और सिगरेट सुलगाई और कुशक की प्रतीक्षा करने लगा।

"इसका मतलब, कल से चाय बंद।" श्याम मोहन कुछ सोचकर बोला।

"क्यों ?"

"मैं नहीं चाहता, मेरी वजह से तुम्हारे ऊपर खतरा आए।"

"खतरा जो आना था, आ चुका है। चाय बंद करने से कोई उल्लू का पट्ठा मेरी रिपोर्ट तो बदलेगा नहीं।"

"वह कुछ और मुसीबत खड़ी कर सकता है।"

"क्या करेगा ? वेतनवृद्धि रोक देगा, रोक दे। प्रोमोशन रोक देगा, रोक दे। लेकिन मैं जानता हूं वह ऐसा कुछ नहीं करेगा। उसने सिर्फ रौब गांठने के लिए मेमो दिया है। मैं उन्हें बता चुका हूं कि दफ्तर के अनुशासन को सबसे ज्यादा गुप्ता, खुल्लर और खुद डायरेक्टर तोड़ते हैं। दफ्तर के चपरासी से घरेलू नौकर की तरह काम लेना, दफ्तर की बिजली से चाय बनवाना और सारे दफ्तर को आग के खतरे में डालना, दफ्तर के फर्नीचर और पर्दों, कालीनों को अपने घरों में ले जाना, दफ्तर की गाड़ी का घर के काम में इस्तेमाल करना, यह सब कौन-सी आचरणसंहिता के अंतर्गत आता है ? इसके अलावा इन लोगों ने जो-जो पाप इस दफ्तर में किए हैं सबके सबूत मेरे पास हैं। पिछले दस साल से मैं प्रशासन शाखा की एक ही कुर्सी पर बैठा हूं। किस फाइल में किस आदमी के काले कारनामों की दास्तान छिपी है, उसकी जानकारी मैं जबानी दे सकता हूं।"

"लेकिन तुम क्यों खामख्वाह उनसे झगड़ा मोल ले रहे हो ? यह जानते हुए कि अफसर की जात बड़ी कुत्ती होती है। वे कमीनी हरकत पर उतर आते हैं, तो किसी भी हद तक जा सकते हैं। तुम इनके खिलाफ जहां

शिकायत करोगे, वे भी इनकी जात के होंगे। तुम सिर पीटते रहोगे और वे सारे सबूतों को तुम्हारे खिलाफ मोड़ देंगे।"

"आप क्या चाहते हैं ?"

"यही कि कल से हम यहां चाय पीना बंद कर दें।"

"क्यों ?"

"मैं तुम्हें दुखी देखना नहीं चाहता।"

"मैं दुखी कहां हूं !"

"क्यों ? मैंने आज दो बार परमात्मा को भेजा और दोनों बार उसने बताया कि तुम सीट पर बैठे हो। मेमो की वजह से तुमने ठीक ग्यारह बजे चाय के लिए उठ जाने का नियम तोड़ दिया।"

"मेमो की बात नहीं थी। उसकी वजह कुछ और है।"

"क्या ?"

कुशक ने प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दिया। चाय का अंतिम घूंट गले के नीचे उतारकर वह उठ खड़ा हुआ। श्याम मोहन भी उठ गया। उसने काऊंटर पर चाय के पैसे चुकाए और दोनों चुपचाप बाहर आ गए।

कुशक की चुप्पी से श्याम मोहन ने इतना तो अनुमान लगा लिया कि वह किसी पारिवारिक परेशानी में है। लेकिन चूंकि वह कुशक का निजी मामला था, श्याम मोहन उसे बताने के लिए जोर नहीं डालना चाहता था। वैसे वह कुशक के परिवार से काफी परिचित था। कई बार उसके यहां गया था। कुशक की पत्नी सरला एक साधारण पढ़ी-लिखी महिला थी। कुशक के दो बच्चे लता और अनु सरकारी स्कूल में आठवीं और दसवीं कक्षा में पढ़ रहे थे। कुशक के पिता प्रेमदास अलबत्ता घर में कभी-कभी हंगामा खड़ा कर देते हैं। बुढ़ापे ने उन्हें विक्षिप्त बना दिया था और वे अंट-शंट बोलने, गाली-गलौज बकने तथा बार-बार थूकने की आदत के कारण सरला के क्रोध का कारण बनते थे। लेकिन यह नौबत कभी-कभार आती थी जब प्रेमदास, बच्चों से मिलने के लिए, पच्चीस गज की अपनी झोंपड़ी को छोड़कर अपने बेटे के घर आते थे। कुशक के लाख कहने पर भी वे अपनी झोंपड़ी छोड़कर, बेटे के खुले सरकारी मकान में रहने को तैयार नहीं हुए थे। कुशक का अपने पिता से अत्यधिक लगाव और सरला का

उतना ही अधिक दुराव घर में अक्सर कलह का विषय बन जाता था। इसके अतिरिक्त कुशक अपने छोटे भाई राजू की पढ़ाई के बारे में भी अक्सर परेशान रहता था, जो एम० बी० बी० एस० कर रहा था।

दोनों कैंटीन से निकलकर लॉन में कनेर के पेड़ के नीचे खड़े हो गए थे। श्याम मोहन ने कनेर के एक फूल की पंखुड़ियों को छीलना शुरू कर दिया था और कुशक दूब के लम्बे तिनके को अधिक से अधिक टुकड़ों में तोड़ने लगा था।

"राजू का कल रिजल्ट निकला है।" कुशक ने बड़ी तकलीफ से यह बात कही थी और श्याम मोहन ने इसीसे अनुमान लगा लिया कि रिजल्ट ठीक नहीं रहा। राजू अंतिम परीक्षा में सिर्फ एक पेपर में पिछले तीन साल से लगातार फेल होता रहा है। राजू के प्रोफेसर डा० आनन्द ने राजू के गर्व को चूर करने का निश्चय कर रखा था और इस बार भी वह अपने निश्चय पर अडिग रहा। थ्योरी में अच्छे नम्बर मिलने पर भी डा० आनन्द ने प्रैक्टिकल में उसे फेल कर दिया।

इस विषय पर आगे चर्चा की गुंजाइश नहीं थी। श्याम मोहन कुशक के कवि-हृदय में मची उथल-पुथल की थाह आसानी से लगा सकता था। सदियों से व्यवस्था पर आधिपत्य जमाए उच्च वर्गों के घिनौने षड्यन्त्र को वह समझता था। यह व्यवस्था जो मन्त्री के बेटे को मन्त्री, अफसर के बेटे को अफसर, डाक्टर के बेटे को डाक्टर, प्रोफेसर के बेटे को प्रोफेसर बनाने वाली गंदगी में सड़ चुकी है, एक झोंपड़ी में जिंदगी बिताने वाले के बेटे के डाक्टर बन जाने को कैसे सहन कर सकती है? राजकुमारों के उत्कर्ष के लिए भील के बेटे का अंगूठा काटने वाले द्रोणाचार्यों के समाज में राजू जैसे भावुक विद्यार्थियों का क्या भविष्य है, इसे समझने के लिए किसी लम्बी-चौड़ी चर्चा की जरूरत नहीं थी।

श्याम मोहन चाय पीकर लौटा तो बारह बज रहे थे। कमरे में घुसते समय उसने देख लिया था कि बगलवाले कमरे का मखमली पर्दा उठा हुआ है और अन्दर अफसरों की मीटिंग चल रही है। हर शुक्रवार को साढ़े ग्यारह बजे स्टाफ की मीटिंग बॉस के कमरे में होती थी। श्याम मोहन को इसकी जानकारी थी लेकिन वह जानबूझकर इस मीटिंग से

बचने की कोशिश करता था।

कुर्सी पर बैठने से पहले ही परमात्मा ने उसे सूचना दे दी कि बड़े साहब ने याद किया है। मन ही मन एक छोटी-सी गाली देकर वह उलटे पाँव बाहर आ गया और मिस्टर शर्मा के कमरे में घुस गया। मिस्टर शर्मा के सामने पांच कुर्सियों पर पांच अफसर बैठे हुए थे। छठी कुर्सी खाली थी। वह उसपर जाकर बैठ गया।

"चाय-पानी से फुर्सत हो गई, डॉ० मोहन?" मिस्टर शर्मा ने व्यंग्य से पूछा।

"जी हां," श्याम मोहन बोला, "लेकिन लंच का वक्त होने वाला है।"

"आप दफ्तर में सिर्फ चाय और लंच के लिए आते हैं!"

"सारी दुनिया का कारोबार इस पापी पेट के लिए ही तो चल रहा है।"

उसने पास बैठे मिस्टर रस्तोगी की तरफ देखा जिनका वाक्य उसने चुराया था। दूसरे अफसरों के चेहरे पर एक दबी-सी मुस्कान प्रकट हुई लेकिन मिस्टर शर्मा का चेहरा काला पड़ गया।

"सरकार आपको दो हजार रुपये चाय और लंच के लिए नहीं देती है।"

"तो क्या जुआ खेलने और शराब पीने के लिए देती है?"

मिस्टर शर्मा का चेहरा तमतमा उठा। एक क्षण के लिए उन्होंने सामने बैठे दूसरे अफसरों की तरफ देखा जिनके होंठ जैसे किसीने गोंद से चिपका दिए थे। फिर श्याम मोहन की तरफ कुछ नाटकीय अन्दाज में देखकर बोले, "आप जानते हैं, किसके सामने बोल रहे हैं?"

"जानता तो हूं, लेकिन मुझे गलतफहमी हुई हो तो आप बता दीजिए कि आप कौन हैं?"

"यहां छः अफसर बैठे हैं। सब गवाही देंगे।"

"अजी, इन्हें क्यों कष्ट दे रहे हैं आप? गवाही देने वाले तो पांच-पांच रुपये में मिल जाते हैं। आप यह बताइए कि आप मुझसे क्या पूछना चाहते हैं। किसलिए बुलाया है मुझे?"

मारे गुस्से के मिस्टर शर्मा का शरीर कांपने लगा था। उन्होंने कलमदान से पेंसिल उठाई और उसे दोनों हाथों से पकड़कर अपनी कांपती अंगुलियों को स्थिर किया।

"आप जानते नहीं कि शुक्रवार के दिन स्टाफ की मीटिंग होती है ?"

"और आप जानते नहीं कि दरबार में हाजिर होकर जीहजूरी करने का शौक मुझे नहीं है ?"

"ये लोग जीहजूरी करने के लिए आए हैं ?"

"मैं अपनी बात कह रहा हूं। इनकी बात ये जानें।"

"ऊपर के आदेश हैं कि आपको हर हफ्ते अपने काम की रिपोर्ट मुझे देनी है।"

"कैसा काम ? काम तो आखिरी महीने में शुरू होगा जब वित्त विभाग पैसे की मंजूरी देगा। अभी तो साल आधा भी नहीं बीता है।"

"आपका मतलब साल-भर कोई काम नहीं होगा ?"

"होगा क्यों नहीं ? फाइलें सरकेंगी, कागजी घोड़े दौड़ेंगे। यह सब तो हम कर ही रहे हैं।"

"आपसे बहस करना बेकार है। आप जा सकते हैं।"

'शुक्रिया' कहकर श्याम मोहन कमरे से बाहर निकल गया। उसके जाते ही कमरे का माहौल बदल गया। जो अफसर चुप्पी साधे अब तक बैठे थे, उनकी जबानें खुल गईं। मिस्टर वर्मा, जो बड़े साहब की बगल वाली कुर्सी पर बैठे थे, बोले—

"देखिए साहब, इण्डिसिप्लिन की भी एक लिमिट होती है। यह आदमी लिमिट से बाहर हो गया है। पांच गजेटिड अफसर बैठे हों और उनके सामने आपसे इस तरह की बातें करे ! इसका इन्तजाम करना पड़ेगा। सारे दफ्तर का ऐटमासफीयर गंदा हो रहा है।"

उनकी बात का समर्थन करते हुए मिस्टर कपूर बोले, "हम लोगों से भी डॉक्टर मोहन इसी तरह उलटी-सीधी बातें करते हैं। हमें बर्दाश्त करना पड़ता है; इसलिए कि वे हमसे सीनियर अफसर हैं। लेकिन आपके साथ वे बदतमीजी से पेश आएं, ऐटलीस्ट आई काण्ट टॉलरेट।"

फ्रेंक दास अपने चमकते आबनूसी चेहरे से बार-बार पसीना पोंछ रहे

थे। बड़े साहब की नजर उनकी तरफ मुड़ी तो बोले—

"मिस्टर मोहन सारे स्टाफ को बिगाड़ रहा है सर। सर, वह क्लर्कों, चपरासियों के साथ चाय पीता है, ड्राइवरों के साथ बीड़ी पीता है और सबको अफसरों के खिलाफ भड़काता है। और सर, वह मिस्टर कुशक है न, उसके साथ तो मिस्टर मोहन की पक्की दोस्ती है। वह किसीको गिनता ही नहीं। सर, इन दोनों को डिसमिस करना चाहिए।"

प्रशासन विभाग के इन्चार्ज अधिकारी मिस्टर खुल्लर को अपनी साहब भक्ति का सबूत देने का मौका मिला, बोले—

"आपके आर्डर के मुताबक मैंने कल ही मिस्टर कुशक को मेमो दे दिया था। दस दिन के अन्दर जवाब मांगा है।"

कुशक की चर्चा चलने पर रस्तोगी के लिए चुप बैठे रहना मुश्किल हो गया। रिजर्व कोटे में आए लोगों के प्रति अपने मन की भड़ास निकालते हुए वे बोले—

"साहब, मिस्टर कुशक तो अपने को सरकार का दामाद मानता है। दस साल में एल० डी० सी० से असिस्टेंट बन गया। अब सुप्रिटेंडेंट बनने का ख्वाब देख रहा है। कुछ कह दो तो शिड्यूल्डकास्ट कमिश्नर को शिकायत करने की धमकी देता है। मिस्टर खुल्लर ने उसे मेमो दिया है, लेकिन मुझे उम्मीद है कि वह मिस्टर मोहन के कहने से उल्टा-सीधा जवाब देगा और कमिश्नर को शिकायत करेगा। साहब, इन लोगों ने तो जान आफत में डाल रखी है।"

डायरेक्टर मिस्टर शर्मा मिस्टर मोहन द्वारा किए गए अपमान को काफी हद तक भूल गए थे। उनकी कांपती हुई अंगुलियां स्थिर हो गई थीं। एकसाथ कई अफसरों के मुंह से अपनी मनपसंद बातें सुनकर उनका आत्मविश्वास जग गया था। उन्होंने कहा—

"आप चिन्ता न करें। मैं इन दोनों का बन्दोबस्त कर रहा हूं। सुना है, यह कुशक अखबारों में कुछ लिखता भी है। कुछ कविताएं, कहानियां वगैरह। अपने को बड़ा लेखक समझता है। मैं उसे ऐसा रास्ता दिखाऊंगा कि सारी लेखकी भूल जाए।"

मिस्टर रस्तोगी कुर्सी को आगे सरकाकर बोले—

"सर, कुशक की कविताएं कई पत्रों में छपती हैं। बड़ा तीखा लिखता एस्टेब्लिशमेंट के खिलाफ जहर उगलता है। आप उससे पूछिए कि क्या उसने अखबारों में लिखने के लिए सरकार से परमिशन ली है?"

बॉस ने रस्तोगी की तरफ देखा, "मिस्टर रस्तोगी, कविता-कहानी लिखना लिट्रेरी और साइंटिफिक राइटिंग होता है। उसके लिए कंडक्ट रूल्स के अंडर किसी परमिशन की जरूरत नहीं होती। आप क्या हमें कुशक और डॉक्टर मोहन से और जलील कराना चाहते हैं?"

मिस्टर रस्तोगी का उत्साह ठंडा पड़ गया। फिर कुछ सोचकर बोले—

"लेकिन सर, उससे यह तो पूछा जा सकता है कि उसे कविता-कहानी का जो पैसा मिलता है, उसे वह इन्कमटैक्स रिटर्न में दिखाता है?"

"हां, यह बात हुई न!" मिस्टर शर्मा खुश होकर बोले, फिर मिस्टर खुल्लर की तरफ देखकर कहा, "मिस्टर खुल्लर, उसे मेमो देकर पूछो कि पिछले दस साल में उसने कविता-कहानी लिखकर कितना पैसा कमाया है और क्या उसे इन्कमटैक्स रिटर्न में दिखाया है?"

प्रशासनिक अधिकारी मिस्टर खुल्लर को इस योजना की सफलता पर कुछ शुबहा हुआ। उन्होंने कहा—

"एक्सक्यूज मी सर! अगर उसने कह दिया कि मुझे कविता-कहानी लिखने से कुछ नहीं मिला तो हम कैसे प्रूव करेंगे कि उन्हें पैसा मिला है?"

मिस्टर शर्मा ने कांच के पेपरवेट को एक जगह से दूसरी जगह पटकते हुए कहा, "मिस्टर खुल्लर, आप तो बाल की खाल निकालने लगते हैं। पहले उससे पूछिए तो सही। उसे पेमेंट मिली होगी तो जरूर बतानी पड़ेगी। नहीं बताए तो लाइब्रेरियन को कहिए कि पिछले दस सालों की सारी पत्रिकाएं मंगाकर देखें कि किस-किसमें कुशक की कविता या कहानी छपी है। फिर उन पत्रिकाओं को चिट्ठियां लिखकर पूछा जाए कि उन्होंने कितनी पेमेंट की है।"

मिस्टर खुल्लर ने बड़े साहब के आदेश को हाथ में पकड़े नोटबुक में जल्दी-जल्दी नोट किया।

दो नम्बर की पोजीशन पर बैठे मिस्टर वर्मा ने सुझाव दिया—

"यह तो ठीक है सर, लेकिन मिस्टर मोहन के बारे में भी कुछ सोचना पड़ेगा वरना सारे क्लर्क-चपरासी अफसरों से बागी हो जाएंगे।"

पिछले दिन की घटना को याद करके, जब परमात्मा चपरासी ने उनके घर सब्जी पहुंचाने से मना कर दिया था, मिस्टर वर्मा काफी जले-भुने थे। कुछ नमक-मिर्च लगाकर बोले, "अब तो सर, हालत यह होती जा रही है कि चपरासी पानी पिलाने को तैयार नहीं होता।"

डायरेक्टर मिस्टर शर्मा, वर्मा की आदतों से परिचित थे और उनके खिलाफ चपरासियों की कई शिकायतें सुन चुके थे। उन्हें पता था कि वे चपरासियों से घर का काम कराते हैं। कराते तो वे भी थे लेकिन उसके बदले में कभी-कभी बख्शीश भी दे देते थे। लेकिन वर्मा साहब तो जब भी किसी चपरासी को घर पर सब्जी वग़ैरह छोड़ आने के लिए कहते थे तो अक्सर पैसे देना भूल जाते थे। खासकर उस चपरासी को जो नया-नया लगा होता और जिसे वह यह बताने में कामयाब हो जाते कि उसकी नौकरी उनकी सिफारिश की वजह से लगी है। यह सब जानते हुए भी मिस्टर शर्मा अपने दूसरे नम्बर के अफसर मिस्टर वर्मा को इस समय कोई तीखी बात नहीं कहना चाहते थे क्योंकि माहौल उनकी पसन्द के अनुसार मोहन के खिलाफ एकजुटता का था। उन्होंने इतना ही कहा, "वर्मा साहब, इन चपरासियों के मुंह ज्यादा न लगा करिए। बेकार कभी यूनियन-वूनियन का चक्कर पड़ जाएगा।"

"लेकिन साहब, डॉ० मोहन के बारे में तो···"

वर्मा की बात को बीच में काटते हुए मिस्टर शर्मा बोले—

"उसका बन्दोबस्त कर रहा हूं। उसके खिलाफ काफी मोटी फाइल मेरे पास बन गई है। आज उसने जो नाटक यहां किया उसकी भी एक रिपोर्ट मैं आज बना रहा हूं और सेक्रेटरी साहब को भिजवा रहा हूं।"

मिस्टर खुल्लर ने कहा—

"लेकिन सर, डॉक्टर मोहन तो इसको कचरा कहते हैं। एक दिन मैंने उन्हें मजाक-मजाक में बताया कि उनकी पर्सनल फाइल कितनी मोटी हो गई है तो बोले, "कोई बात नहीं, हिन्दुस्तान में अभी सौ साल तक कचरे

को डालने के लिए जगह की कमी नहीं होगी। नेशनल आर्काइव्ज़ में ऐसे कचरे को रखने के लिए बहुत जगह है।"

"अच्छा," मिस्टर शर्मा ने हैरत से पूछा, "नेशनल आर्काइव्ज़ को उन्होंने कचरा डालने की जगह कहा! यह है पढ़े-लिखों का हाल। बड़े डॉक्टर बने फिरते हैं! ऐसे-ऐसे डॉक्टर तो टके सेर बिकते हैं बाजार में।"

मिस्टर शर्मा के मन में हमेशा यह खुंदक रहती थी कि श्याम मोहन फर्स्ट क्लास में एम० ए० करने के बाद पी-एच० डी० की डिग्री हासिल किए हुए है जबकि वे सेकेंड क्लास में बी० ए० करने के बाद पी० सी० एस० और फिर कोटे से आई० ए० एस० बने हैं। श्याम मोहन कई बार परोक्ष रूप से उन्हें बता चुका था कि उसके कई विद्यार्थी सीधे आई० ए० एस० में सिलेक्ट हो चुके हैं। श्याम मोहन की डिग्री से आतंकित मिस्टर शर्मा को अपनी खुंदक निकालने का अवसर मिला तो वे कैसे चूकते!

"मैं इस बात को भी अपनी रिपोर्ट में लिखूंगा," मिस्टर शर्मा ने अपनी सफाचट मेज पर सरसरी नजर डालते हुए कहा, "आप सब लोग आज की वारदात के गवाह हैं। पूछे जाने पर आपको इसकी तसदीक करनी होगी।"

और वे कलाई में बंधी घड़ी पर सैनिक अंदाज में नजर डालकर कुर्सी से उठ खड़े हुए। लंच का टाइम हो चुका था।

दो

श्याम मोहन ने जब विश्वविद्यालय की लेक्चररशिप छोड़कर सरकारी नौकरी में आने का निर्णय लिया था, तो उसके कई मित्रों ने उसे इसके विरुद्ध मशविरा दिया था। हालांकि उसके अपने विभाग के कुछ सहयोगियों ने बधाई देकर उत्साहवर्द्धन भी किया था, विशेषकर उसके विभागाध्यक्ष प्रोफेसर रजनीकांत ने, जो खाली की गई जगह पर अपनी साली को लेक्चरर बनाने के स्वप्न देखने लगे थे। लेकिन छात्रों को सचमुच उसके निर्णय से दुख हुआ था क्योंकि उसके व्यवहार में, उसके पढ़ाने के ढंग में

कुछ ऐसी बात थी कि अधिकांश छात्रों का उसके साथ बड़े भाई का सा रिश्ता बन गया था। जहां तक पढ़ाने का सवाल था, छात्रों को उसमें कुछ चमत्कारिक गुण नजर आते थे। अर्थशास्त्र जो आमतौर पर एक नीरस विषय था, श्याम मोहन की कक्षा में एक जीवंत जीवन-दर्शन बन जाता था जो प्रत्येक व्यक्ति की रोजमर्रा की जिन्दगी के सुख-दुख की व्यवस्था करता हुआ, सिद्धांत चर्चा से प्रत्यक्ष जीवन और प्रत्यक्ष जीवन से सिद्धांत चर्चा को इतनी सहजता के साथ अंतरण करता था कि विद्यार्थी को कभी नीरसता का बोध नहीं होता था। परीक्षा पास करने के लिए या उसमें अच्छे अंक प्राप्त करने के लिए 'शार्टकट' तरीके अपनाने के वह खिलाफ तो नहीं था, क्योंकि वह जानता था कि सड़ियल मूल्यांकन पद्धति के रहते हुए यह जरूरी है, लेकिन वह अपने छात्रों से अक्सर कहा करता था, इस दुनिया को बदलने वालों में बहुत कम लोग ऐसे होंगे जिन्होंने परीक्षाओं में रिकार्ड तोड़े हैं। यद्यपि किसी भी विषय पर बोलते समय वह उसके महत्त्वपूर्ण मुद्दों को रेखांकित करता जाता था, जिन्हें यादाश्त के लिए विद्यार्थी अपनी नोटबुक में उतार लेते थे, लेकिन उसका जोर हमेशा उस विषय को जीवन के संदर्भ में भली भांति समझने-समझाने पर रहता था। विद्यार्थियों को बस इतना लगता था कि उनके आसपास नित्य प्रति, घटने वाली घटनाओं की रोचक चर्चा हो रही है और प्रत्येक व्याख्यान के बाद विद्यार्थियों को महसूस होता था कि उनका विचार-क्षितिज कुछ अधिक विस्तृत हो गया है और जीवन को देखने-समझने की उनकी क्षमता कुछ बढ़ गई है। लेकिन श्याम मोहन उन्हें बीच-बीच में आगाह भी करता जाता था कि परीक्षा में प्रश्नों का उत्तर देते समय उन्हें उन घिसे-पिटे वाक्यों का ही प्रयोग करना चाहिए जो गाइड पुस्तकों में या दूसरे अध्यापकों के नोटों में होते हैं और अगर उन्होंने मौलिक ढंग से किसी प्रश्न को परीक्षा में हल किया तो नम्बर कटने की पूरी सम्भावना है क्योंकि इस वक्त शिक्षा कठमुल्लों के हाथ में पड़कर जड़ हो गई है।

विद्यार्थियों के साथ श्याम मोहन के सम्बन्धों को लेकर दूसरे अध्यापकों में काफी चर्चा होती थी जिन्हें अक्सर कक्षा-बहिष्कार या नारे-

बाजी का निशाना बनना पड़ता था। अध्यापकों के माध्यम से विभागाध्यक्ष तक और विभागाध्यक्ष के माध्यम से प्रिंसिपल तक यह बात प्रचारित हो गई थी कि डा० श्याम मोहन छात्रों में लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए सस्ते हथकंडे अपनाते हैं और छात्रों को दूसरे अध्यापकों के खिलाफ उकसाते हैं। एक-दो बार स्टाफ कौंसिल की मीटिंगों में भी इस प्रश्न को उठाया गया। ऐसे मौकों पर श्याम मोहन को यही कहना पड़ता था कि शिक्षा के प्रति आप लोगों का जो दृष्टिकोण है, मैं उस दृष्टिकोण को नहीं अपना सकता।

अर्थशास्त्र में प्रथम श्रेणी में एम० ए० करने के बाद श्याम मोहन के सामने जब जीविकोपार्जन का सवाल उठा था, तो उसका कोई मार्गदर्शन करने वाला नहीं था। उसके पिता भुवन मोहन स्कूल अध्यापक के पद से रिटायर होने के दूसरे ही साल स्वर्ग सिधार गए थे। मां ने अपना जीवन गांव में बिताया था। उनका स्वप्न था कि बेटा गांव में स्कूल मास्टर बन जाए। बड़े भाई मदन मोहन गांव में खेती करते थे और पिता की मृत्यु से पहले ही परिवार से अलग हो गए थे। श्याम मोहन में, सम्भवतः पिता के संस्कारों के कारण अध्यापन-व्यवसाय के प्रति विशेष लगाव था और यद्यपि उसने विश्वविद्यालय की लेक्चररशिप पाने का स्वप्न मन में पाल रखा था, उसे उस स्वप्न के साकार होने की उम्मीद बहुत कम थी। कारण यह कि यह बात आम तौर पर मानी जाने लगी थी कि सभी क्षेत्रों के पदों की तरह विश्वविद्यालय और कालेजों के पद खानदानी विरासत बन गए हैं और उनमें रीडरों, प्रोफेसरों या उनके आका राजनैतिक व्यक्तियों के बेटे-बेटियां, भतीजे-भतीजियां या साले-सालियां ही नियुक्त हो सकती हैं। जिस बैच में श्याम मोहन ने एम० ए० की परीक्षा पास की उसमें प्रथम श्रेणी पाने वाले बारह छात्रों में से दस छात्र रीडरों, प्रोफेसरों या अन्य महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों की रिश्तेदारी के थे। उनमें से तीन छात्राएं तो ऐसी थीं जिन्हें बी० ए० में मुश्किल से सैकेंड क्लास मिला था लेकिन एम० ए० में दैवी चमत्कार से अच्छी प्रथम श्रेणी प्राप्त कर ली थी। संयोग से श्याम मोहन का नाम प्रथम श्रेणी के छात्रों में सबसे ऊपर था इसलिए उस वर्ष विश्वविद्यालय में निकले चार पदों में से एक पद उसे मिल गया था।

बड़ी लगन के साथ उसने अध्यापन-व्यवसाय शुरू किया था। पीरियड खत्म करने के बाद वह हर रोज लायब्रेरी में दो-अढाई घंटे बिताता था और देश-विदेश से आने वाली पत्रिकाओं तथा नई पुस्तकों का अध्ययन करता था। उसकी कोशिश रहती थी कि विषय की कोई नई बात, कोई नया विचार उससे छूट न जाए। अपने विषय के अतिरिक्त साहित्य, कला, राजनीति, दर्शन, इतिहास और विज्ञान के क्षेत्रों में होने वाली गतिविधियों से परिचय बनाए रखना भी वह जरूरी समझता था क्योंकि उसे लगता था कि मानव जीवन को छूने वाली, उसे प्रभावित करने वाली हर घटना के साथ उसका सरोकार है और अलग-अलग पिंजरों में बन्द ज्ञान अपंग ज्ञान है। इन्हीं दिनों उसने आर्थिक आयोजन को पी-एच० डी० के विषय के रूप में चुना और उसपर बड़े उत्साह से काम करने लगा।

लेकिन अध्यापन-व्यवसाय के प्रति उसका उत्साह दो साल के अन्दर-अन्दर ही फीका पड़ गया।

दूर से जो चीज बहुत सुहावनी दिखाई दे रही थी, पास से देखने पर वह बहुत भौंडी दिखाई दी।

उसने देखा कि अध्यापकों का काम एक घिसे-पिटे पाठ्यक्रम को साल-दर-साल छात्रों को रटाना भर है ताकि वे रटे-रटाए उत्तर लिखकर परीक्षा में पास हो सकें। इसके लिए कुछ अध्यापक एक साल में तैयार किए गए नोटों का तब तक इस्तेमाल करते जाते हैं जब तक वे फट नहीं जाते या पाठ्यक्रम नहीं बदल जाता। उनका ज्ञान पाठ्यक्रम की छोटी-सी सीमा में बंद रहता है। उसके अलावा वे कुछ और पढ़ने या जानने की जरूरत नहीं समझते। एक विषय का अध्यापक दूसरे तमाम विषयों में बिल्कुल कोरा होता है। अपने विषय में भी एक पुराने पाठ्यक्रम से बंधे रहने के कारण उनकी दृष्टि अनिवार्यतः दकियानूसी हो जाती है और कालान्तर में वे परिवर्तन की शक्तियों के रोधक बन जाते हैं। जो तथा-कथित विशेषज्ञ हैं वे उतने ही बड़े कूपमंडूक हैं। उनका फालतू समय नई-नई पुस्तकें पढ़ने या अपने ज्ञान का विस्तार करने में नहीं खर्च होता बल्कि छात्रोपयोगी नोट छपवाकर, कापियों की जांच की छीना-झपटी में शरीक होकर या ट्यूशनें करके पैसा बटोरने में तथा और ऊंचे पद के

लिए जोड़-तोड़ करने में खर्च होता है। अधिकाधिक लाभ और शक्ति के लिए परस्पर ईर्ष्या, द्वेष उनकी दिनचर्या के नियामक तत्त्व होते हैं।

श्याम मोहन को सूत्र से बंधे कठपुतले का जीवन पसंद नहीं था। उसने इस रुटीनी जिंदगी के जाल से बचने की भरसक कोशिश की लेकिन उत्तरोत्तर उसे एहसास होता गया कि इससे बच पाना कठिन होगा। विश्वविद्यालय शिक्षा का सारा ढांचा ही कुछ तबकों द्वारा सारी व्यवस्था पर अधिकार बनाए रखने के लिए है। इसका अधिक से अधिक लाभ उन लोगों को मिलता है जो बच्चे को पैदा होते ही एक विदेशी भाषा में तुतलाना सिखाते हैं। गांवों से या कार्पोरेशन के स्कूलों से निकले हुए बच्चे, जो अपनी भाषा में स्कूल-शिक्षा लेते हैं, यहां तक नहीं पहुंच पाते और पहुंचते भी हैं तो इस माहौल में फिट नहीं हो पाते। ऐसे इने-गिने बच्चों को दूर से पहचाना जा सकता है। वे चोर की तरह डरे-डरे रहते हैं और उन लोगों के बीच, जो जीभ को अजीब ढंग से उलटकर अंग्रेजी बोलते हैं, अपने को असहाय पाते हैं। विश्वविद्यालय का सारा ढांचा इन गुलाम तबकों के बच्चों को ऊंची डिग्रियां बांटने के लिए है ताकि वे उन डिग्रियों के बल पर व्यवस्था के महत्त्वपूर्ण पदों पर आसीन हो सकें और यह देश हमेशा गुलामों का गुलाम बना रहे। आम लोगों के खिलाफ यह एक षड्यन्त्र है, धोखाधड़ी है। हमेशा के लिए इस देश में कुलीन तंत्र को बनाए रखने की साजिश है।

श्याम मोहन ने देखा, यह षड्यंत्र व्यापक पैमाने पर चल रहा है और आजादी के बाद लगातार इसकी जकड़ मजबूत हुई है। आम लोगों के बच्चों को मातृभाषाओं में शिक्षा की व्यवस्था और विशेष तबकों के बच्चों को अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा की व्यवस्था और फिर सारी व्यवस्था के संचालन के लिए अंग्रेजी माध्यम को बनाए रखना और साथ-साथ समता और समाजवाद के नारों तथा मेलों, तमाशों और शोभा-यात्राओं से आम जनता को बेवकूफ बनाए रखना—यह सब इस देश की जनता से, देश के संविधान से धोखाधड़ी नहीं तो क्या है?

श्याम मोहन के मन में असंतोष धीरे-धीरे सुगबुगा रहा था तथापि लंबी साध के बाद मिली इस नौकरी को छोड़ने की बात उसके मन में

नहीं उठी थी। लेकिन कुछ घटनाओं ने उसके जीवन को बुरी तरह आंदोलित किया।

आर्थिक आयोजन पर उसका थीसिस जांच के लिए राष्ट्रीय ख्याति के विद्वान के पास भेजा गया। श्याम मोहन को इसपर बहुत प्रसन्नता हुई क्योंकि उसकी अपनी इच्छा भी यही थी कि थीसिस में प्रतिपादित कुछ सिद्धांत चूंकि नितांत नये हैं, अतः उनपर किसी सुप्रसिद्ध विद्वान की राय बहुत काम की है। अपने निर्देशक प्रोफेसर रजनीकांत से उसने अपनी इच्छा प्रकट की थी और उन्हींके प्रयत्नों से डॉ० कमलाप्रसाद को बाहर का एक परीक्षक नियुक्त किया गया था। हालांकि डॉ० कमलाप्रसाद के बारे में यह बात प्रसिद्ध थी कि वे छः-छः महीने तक रिपोर्ट नहीं भेजते हैं लेकिन चूंकि श्याम मोहन डिग्री के लिए इतना उतावला नहीं था और अपने थीसिस पर किसी बड़े विद्वान की राय जानना उसके लिए अधिक महत्त्वपूर्ण था, इसलिए वह डॉ० प्रसाद की रिपोर्ट का छः महीने इंतजार करने के लिए भी तैयार था।

डॉ० प्रसाद ने छः महीने के बजाय आठ महीने रिपोर्ट देने में लगा दिए। रिपोर्ट चूंकि अच्छी थी और कुछ दिन बाद श्याम मोहन को डिग्री भी मिल गई, इसलिए श्याम मोहन को लंबी प्रतीक्षा करने का कोई मलाल नहीं हुआ।

लेकिन एक दिन लायब्रेरी में बैठे-बैठे वह एक अर्थशास्त्र की शोध-पत्रिका को देख रहा था। अचानक उसकी नजर एक शोध-प्रबंध पर लिखी गई टिप्पणी पर पड़ी। उसे लगा कि उसके थीसिस की किसीने समीक्षा की है। थीसिस के दो पैराग्राफ उद्धृत किए गए थे, वे अक्षरशः उसके थे लेकिन थीसिस-लेखक का नाम ऋचा शुक्ल था। थीसिस प्रकाशित हो चुका था और किसी स्थानीय प्रकाशन संस्था से छपा था। उससे अधिक चौंकाने वाली बात यह थी कि प्रकाशित शोध-प्रबंध की भूमिका डॉ० कमलाप्रसाद ने लिखी थी। श्याम मोहन उसी समय लायब्रेरी से निकला और टैक्सी करके प्रकाशक की दुकान पर पहुंचा। पचास रुपये में एक प्रति खरीदकर वह पास ही एक लॉन में बैठ गया और थीसिस पढ़ने लगा।

उसने देखा कि प्रस्तावना और उपसंहार के दो अध्यायों को छोड़कर

शेष तीन अध्याय उसके थीसिस की यत्किंचित् हेरे-फेर के साथ, नकल हैं।

भागा-भागा वह थीसिस को लेकर डॉ० रजनीकांत के पास गया। जब उन्हें सारी बात बता चुका तो डॉ० रजनीकांत ने कहा, "यह सब खेल का एक हिस्सा है मिस्टर श्याम मोहन। इन जरा-जरा-सी बातों पर परेशान हो होओगे, तो जीना मुश्किल हो जाएगा। ऋचा शुक्ल डॉ० प्रसाद की प्रिय शिष्या है और वह प्रदेश के शिक्षामंत्री की लड़की है।"

उसके कुछ दिन बाद अखबारों में छपा कि डॉ० कमलाप्रसाद किसी विश्वविद्यालय के कुलपति बन गए हैं।

श्याम मोहन ने रीडरों, प्रोफेसरों द्वारा छात्रों के मूल्यांकन में की जाने वाली बेईमानी के अनेक किस्से सुने थे। छात्रों से भी और अपने साथी अध्यापकों से भी। लेकिन वह उनपर विश्वास नहीं करता था। अध्यापन-कार्य के प्रति श्रद्धाभाव होने के कारण वह कभी सोच भी नहीं सकता था कि अध्यापक अपने किसी स्वार्थ के लिए अपने छात्रों से बेईमानी कर सकता है। अब उसे लगा कि चहेते राजकुमारों के लिए एकलव्य का अंगूठा काटने की परम्परा शाश्वत है और नौकरी का स्वार्थ अध्यापक को कमीनगी की किसी भी हद तक ले जा सकता है। उसकी आँखों के सामने हजारों-लाखों एकलव्यों के चेहरे घूमने लगे। उसे बोध हुआ कि विश्वविद्यालयों में पुश्तैनी अधिकार का क्रम बनाए रखा जा रहा है। उसे अध्यापक के व्यवसाय से घृणा होने लगी।

श्याम मोहन की आस्था को दूसरा धक्का छात्रसंघ के चुनाव के दिनों में लगा। चुनाव के एक दिन पहले दो दलों में लड़ाई हुई। वैसे तो चुनावों में हमेशा झगड़े होते थे, लेकिन इस बार मोर्चों में डटकर लड़ाई हुई जिसमें पत्थर, गैसबल्ब, सोडावाटर की बोतलों के अलावा लाठी, छुरे, पिस्तौल का भी खुलकर इस्तेमाल हुआ। चार लड़कों की मृत्यु हो गई और तीस-बत्तीस लड़के घायल हुए। पुलिस-जांच के बाद पता चला कि दोनों दलों ने शहर के मशहूर गुंडों की सेवाएं लीं और शराब तथा पैसा पानी की तरह बहाया। पुलिस ने जिन अस्सी लड़कों को गिरफ्तार किया उनमें से अधिकांश सम्पन्न परिवारों के थे। छात्रसंघ के ऊंचे पदों के लिए लड़ने वालों में कुछ ऐसे उम्मीदवार भी थे जिनके खिलाफ बलात्कार,

हत्या, डकैती आदि के केस थे लेकिन तथाकथित बड़े लोगों के बच्चे होने के कारण पुलिस उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं करती थी। अध्यापकगण और विश्वविद्यालय के अधिकारी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इस गुंडागर्दी को प्रोत्साहन देते थे।

श्याम मोहन को इस वातावरण में बेहद घुटन महसूस होने लगी। उसे लगा कि वह कुलीन तंत्र को हमेशा के लिए इस देश में बनाए रखने की साजिश का एक पुर्जा बनता जा रहा है। वह एक बेईमान व्यवस्था का अंग बन रहा है, जिसमें कि प्रतिभाशाली छात्र प्रताड़ित हो सकता है और तिकड़म जानने वाला छात्र सर्वोच्च कीर्तिमान प्राप्त कर सकता है। नौकरशाही के हाथ में पड़ा विश्वविद्यालय का प्रशासनतंत्र अपनी नैसर्गिक विशेषता के कारण भ्रष्ट है और घूस देकर यहां कुछ भी कराया जा सकता है। इसीलिए यूनियनबाजी पर यहां लाखों रुपये खर्च किए जाते हैं ताकि यूनियन के माध्यम से प्रशासन तंत्र पर अधिकार करके मनमानी करने की सुविधा प्राप्त की जा सके।

उसने विश्वविद्यालय के इस दूषित वातावरण से बाहर निकलने का पक्का निश्चय कर लिया था लेकिन तभी उसका ध्यान रेखा ने खींचा।

रेखा विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में टाइपिस्ट थी। नई पुस्तकों के कार्ड टाइप करना उसका प्रमुख काम था। श्याम मोहन नियमित रूप से कक्षाएं समाप्त करने के बाद पुस्तकालय में जाता था और रोज ही उसकी नजर रेखा पर पड़ती थी, जो टाइप-मशीन के सामने एक ही मुद्रा में बैठी, टाइप करती रहती थी। गहरे सांवले रंग के बावजूद उसका नाक-नक्श इतना सही-दुरुस्त था कि पुस्तकालय में आने वाला कोई भी छात्र या अध्यापक उसकी तरफ देखे बिना नहीं रह सकता था। लोग किसी पुस्तक का कार्ड ढूंढ़ने के बहाने उसके करीब जाते थे, उससे कुछ बात करने की कोशिश करते थे, लेकिन श्याम मोहन ने उसे किसीसे बातें करते नहीं देखा। स्वयं श्याम मोहन ने एक-दो बार किसी पुस्तक के कार्ड के बारे में उससे पूछना चाहा लेकिन रेखा ने टाइपराइटर पर नजर गड़ाए-गड़ाए इतना भर कहा कि कार्ड-इंडेक्स देखिए। कभी-कभी शरारती लड़के उसकी मेज के पास खड़े होकर कुछ फबतियां भी कसते थे। लेकिन रेखा उनकी बातें

अनसुनी करके अपने काम में लगी रहती थी।

श्याम मोहन के मन में उस लड़की के बारे में कुछ जानने की जिज्ञासा थी जिसने अपने को पाषाण-प्रतिमा बना लिया था। अपने साथियों के सामने जिज्ञासा प्रकट करने पर उसे बहुत-सी अजीब-अजीब बातें सुनने को मिलीं। पता चला कि लड़की बहुत चालू रही है और कई प्रोफेसरों के साथ इसके स्कैण्डल हो चुके हैं। लड़की इसी विश्वविद्यालय की समाज-शास्त्र में एम० ए० पास छात्रा है। पी-एच० डी० के लिए भी इसने पंजीकरण कराया था लेकिन अब सब कुछ छोड़कर टाइपिस्ट की नौकरी करती है। जब वह एम० ए० में थी तो प्रोफेसर माथुर की प्रिय शिष्या के रूप में प्रसिद्ध थी। एम० ए० में उसका फर्स्ट क्लास कुछ अंकों से मारा गया तो उसने प्रोफेसर माथुर के प्रतिद्वन्द्वी सीनियर रीडर डॉक्टर मिश्र के निर्देशन में पी-एच० डी० के लिए पंजीकरण कराया। डॉ० मिश्र की विश्वविद्यालय और यू० जी० सी० के बड़े-बड़े अधिकारियों से जान-पहचान थी और राजनैतिक महाप्रभुओं से अच्छे सम्बन्ध थे। रेखा को अपनी कार में बिठाकर वे बड़े-बड़े लोगों से मिलाने ले जाते थे। इस जन-सम्पर्क के माध्यम से ही डॉ० मिश्र अपने प्रयास में सफल हुए थे। प्रोफेसर माथुर की एक्सटेंशन का केस नामंजूर कराकर वे खुद उनकी जगह प्रोफेसर बने थे। इसके लिए उन्हें प्रोफेसर माथुर और रेखा को लेकर कुछ स्कैंडल अखबारों में उछालने पड़े थे। उनके प्रोफेसर बन जाने के बाद प्रताड़ित प्रोफेसर माथुर ने भी अखबारों में स्कैंडल उछालकर अपना बदला लिया था। रेखा कई महीनों तक अखबारों में चर्चा का विषय बनी रही थी। उसके बाद रेखा ने विश्वविद्यालय से मिलने वाली अनुसंधान छात्रवृत्ति छोड़ दी, पी-एच० डी० का पंजीकरण भी छोड़ दिया और पुस्तकालय में टाइपिस्ट की नौकरी कर ली।

जिंदगी की होड़ में बढ़ने के लिए एकमात्र सम्बल, डिग्री को पाने की चाह के कारण अनेक छात्राओं का खूसट और कुंठाग्रस्त प्रोफेसरों की हविस का शिकार होना भारत के विश्वविद्यालयों में एक सर्वव्यापक तथ्य है। अपने साम्राज्य में तानाशाह की हैसियत रखने वाले ये द्रोणाचार्य अपने छात्र-छात्राओं के मनोबल को पूरी तरह ध्वस्त करने में

संतोष का अनुभव करते हैं। ऐसे दूषित वातावरण में रेखा जैसी लड़की, जो देखने में निश्चय ही एक साधारण परिवार की लगती थी, स्कैंडलों की नायिका बन जाए, इसमें श्याम मोहन को कोई आश्चर्य की बात नहीं लगी। किन्तु इतनी ख्याति अर्जित करने के बाद भी वह मात्र एक टाइपिस्ट बनकर रह जाए, यह तो वाकई अचरज की बात थी। स्वाभाविक तो यह था कि वह अपने सम्पर्कों का फायदा उठाकर बहुत अच्छी नौकरी पर होती। ऐसी लड़की के लिए तो कुछ भी पाना असंभव नहीं होना चाहिए।

इसी प्रतिप्रश्न ने श्याम मोहन को रेखा के बारे में नये सिरे से सोचने पर मजबूर किया। उसके मन में रेखा से मिलने, उससे बातें करने और उसकी व्यथा-कथा जानने की उत्कट इच्छा हुई लेकिन इसका कोई रास्ता नजर नहीं आया। एक-दो बार वह उसकी मेज के पास गया और कुछ बात करनी चाही लेकिन उसने बिना उसकी तरफ देखे कुछ मशीनी उत्तर देकर निरुत्तर कर दिया। श्याम मोहन ने उसके घर और परिवार का पता लगाया। उसके पिता मामूली-सी सरकारी नौकरी से रिटायर हो चुके हैं। दो भाई कालेज में पढ़ रहे हैं। मां जैसे-तैसे घर की गाड़ी खींच रही है।

पुस्तकालय में श्याम मोहन अब भी बिलानागा जाता था लेकिन अब उसका अधिकांश समय पुस्तकें पढ़ने में नहीं, रेखा के बारे में सोचने में बीतता था। अक्सर वह ऐसी जगह जा बैठता था जहां से रेखा को देख सके। एक दिन वह पुस्तक सामने खोलकर विचारों में खोया हुआ था कि रेखा को सामने देखकर अचकचा गया।

"सुना है, आप मेरे बारे में लोगों से बहुत पूछताछ करते फिरते हैं।"

रेखा के इस सीधे प्रश्न से श्याम मोहन घबरा-सा गया, बोला—

"नहीं···नहीं···यह बात तो नहीं है।"

"तो फिर क्या बात है ?" रेखा ने रूखी-सी आवाज में पूछा।

"आपसे किसने कहा ?"

"किसीने भी कहा हो। यह झूठ तो नहीं है।"

एक क्षण में श्याम मोहन ने निर्णय किया कि टाल-मटोल करने से कोई लाभ नहीं होगा। वह बोला —

"झूठ तो नहीं है।"

"आप एक-दो बार हमारे घर के पास से गुजरे थे।"

"यह भी सच है। मैं आपके घर आना चाहता था।"

"क्यों?"

"यों ही, आपसे परिचय बढ़ाने।"

"लेकिन क्यों?"

"माफ कीजिए, मेरा कोई बुरा इरादा नहीं था।"

"अच्छे और बुरे का फैसला आप कैसे कर सकते हैं?"

"फैसला तो आप ही करेंगी। मैं ज्यादा से ज्यादा आधा घंटा आपसे बात करना चाहता हूं।"

"कीजिए।"

"यहां नहीं। ऐसी जगह जहां हम खुलकर बात कर सकें।"

"अच्छा·· छः बजे कनाट प्लेस में रीगल सिनेमा के पास आ जाइए। कॉफी हाउस में बैठेंगे। लेकिन एक शर्त पर कि जो कुछ भी आपको पूछना है, उस आधे या पौने घंटे में पूछ लेंगे और उसके बाद इन फिजूल की बातों में मेरा और अपना वक्त खराब नहीं करेंगे।"

श्याम को रेखा ठीक वक्त पर रीगल सिनेमा के बाहर मिल गई। दोनों काफी हाउस के एक कोने में जा बैठे। श्याम मोहन ने सीधा प्रश्न किया—

"आप टाइपिस्ट की नौकरी क्यों करती हैं?"

"नौकरी क्यों की जाती है? यह भी कोई सवाल है?"

"मेरा मतलब है, टाइपिस्ट की नौकरी ही क्यों? आपके पास एम० ए० की डिग्री है, लगभग फर्स्ट क्लास की डिग्री। आप पी-एच० डी० भी कर सकती हैं। आप लेक्चरर हो सकती हैं या कम से कम टीचर तो हो ही सकती हैं।"

रेखा ने होंठ भींचे। कुछ कहने को हुई, फिर रुक गई और बात बदलकर बोलीं—

"आप मेरी नौकरी में इतनी रुचि क्यों ले रहे हैं?"

श्याम मोहन थोड़ा-सा विचलित हुआ। फिर मन को सुस्थिर कर

बोला—

"सच बात यह है मिस रेखा कि आपके बारे में, मन में बड़ी जिज्ञासा है। यदि आप सचमुच वैसी ही लड़की हैं, जैसा कि लोग बताते हैं, तो यह सड़ी-सी नौकरी करने की क्या जरूरत थी ! आपके लिए कौनसी चीज पाना मुश्किल है ?"

इस तर्क ने रेखा को निरुत्तर कर दिया। वह कुछ देर तक श्याम मोहन के चेहरे पर नजरें गड़ाकर देखती रही, फिर बोली—

"आप इससे क्या निष्कर्ष निकालते हैं ?"

श्याम मोहन ने भी उसकी नजरों से नजरें मिलाईं और कहा—

"मैं तो समझता हूं कि लोग बकवास करते हैं।"

रेखा फिर उसके चेहरे को अपलक देखती रही। फिर अचानक उसकी आंखों में आंसू आ गए। उसने गर्दन झुका ली और होंठ भींच-कर आंसुओं को बाहर निकलने से रोक दिया।

बैरा कॉफी रख गया था। श्याम मोहन धीरे-धीरे कॉफी के घूंट लेकर रेखा की अगली प्रतिक्रिया की प्रतीक्षा करता रहा। रेखा कॉफी के प्याले से उठती भाप को देखती रही। वास्तव में वह आंखों में तिरते आंसुओं को ढुलकने से पहले सुखा देने की उम्मीद कर रही थी लेकिन कॉफी के प्याले से उठती भाप की तरह उसके भीतर से भी एक प्रकार की गरम भाप उठ रही थी और वह आंखों में पहुंचकर सागर बन जाने के लिए मचल रही थी। अध्यापक, छात्र, संगी-साथी, यहां तक कि माता-पिता और भाई—सबकी नजरों में बदनाम रेखा से यह बात किसीने नहीं कही थी। वास्तव में वह खुद भी सोचने लगी थी कि दूसरे लोग उसके बारे में जो कहते हैं, शायद वही सच है। स्वयं अपने पर से उसका विश्वास उठ चुका था। श्याम मोहन की बात ने जैसे चाबुक मारकर उस विश्वास को जगा दिया।

"चलिए अब, देर हो रही है।" रेखा ने बड़ी कठिनाई से पलकें उठा-कर श्याम मोहन की तरफ देखा।

"आपने मेरी बात का जवाब नहीं दिया।" श्याम मोहन ने कहा।

"आपने जब इतनी बातें जान लीं, तो बाकी भी जान लेंगे।"

"मैं चाहता हूं कि आप बताएं।"

"गुनाहगार के बयान की क्या कीमत होती है ?"

"रेखा जी, आप गुनाहगार नहीं हैं," श्याम मोहन आवेश से भर गया, "गुनाहगार यह वातावरण है, समाज है, सड़ी व्यवस्था है। आपको अगर मैं गुनाहगार मानता हूं तो सिर्फ इस अर्थ में कि आपने इस सड़ी व्यवस्था के आगे हथियार डाल दिए हैं।"

"दूसरा रास्ता भी क्या है ?"

"रास्ता तो खोजना पड़ता है। इच्छा हो तो मिल भी जाता है। लेकिन इच्छा ही मर गई हो तो बात दूसरी है।"

बैरा पैसे लेकर चला गया था। श्याम मोहन ने अपनी घड़ी की तरफ देखा। पौने आठ बज रहे थे।

"चलो···" श्याम मोहन ने कहा।

रेखा ने उनके साथ उठते हुए कहा—

"आज घर में फिर कलह मचेगी।"

"आपके माता-पिता क्या आपसे बहुत नाराज हैं ?"

"हां, उनकी नजरों में भी मैं बदचलन हूं।"

"मैं चलूं आपके घर ?"

"नहीं, फिर कभी सही।"

दोनों बातें करते हुए बस-स्टाप तक आए। रेखा को बस में बिठाकर श्याम मोहन अपने होस्टेल की तरफ चल पड़ा।

उसके बाद रेखा और श्याम मोहन अक्सर कॉफी हाउस में मिलने लगे।

मुलाकातें एक-सवा घंटे से ज्यादा देर नहीं चलती थीं, लेकिन हर मुलाकात दोनों को एक-दूसरे के निकटतर ला रही थी।

रेखा को पहली बार एक ऐसा दोस्त मिला था जिसपर वह पूरा भरोसा कर सकती थी और जिससे किसी भी बात को छिपाने की आवश्यकता उसे नहीं लगती थी। उसने श्याम मोहन के आगे स्वीकार किया कि वह बचपन से ही अपने मन में अनेक महत्त्वाकांक्षाएं पालती रही है। घर में सबसे बड़ी होने के कारण माता-पिता उसपर बहुत निर्भर करते

थे और उसे जिम्मेवारियों की अक्सर याद दिलाते थे। पिता एक मामूली-सी सरकारी नौकरी पर थे। इसलिए अभावों और प्रताड़नाओं से उसका वास्ता शुरू से ही रहा। स्कूल में हमेशा प्रथम श्रेणी में पास होती रही, अध्यापकों से हमेशा प्रोत्साहन मिलता रहा, साथिन-सहेलियों से भरपूर प्यार मिलता रहा, और इस सारे माहौल के कारण मन में विश्वास भरता गया कि वह जिन्दगी में कुछ कर सकती है, कुछ बन सकती है। पिता साधारण पढ़े-लिखे थे और विचारों में काफी उदार भी थे, विशेषकर लड़कियों की शिक्षा के मामले में। लेकिन मां पुराने विचारों की अनपढ़ महिला थी जो लड़की को मां-बाप का बोझ मानकर जल्दी से जल्दी उससे छुटकारा पाने के पक्ष में थी। हाई स्कूल में प्रथम श्रेणी में पास होने के बाद अब उसने कॉलिज में प्रवेश लिया था, तो कई दिनों तक मां मुंह फुलाकर बैठी रही थी।

कालेज शिक्षा की नई दुनिया में प्रवेश करते समय उसके सामने कोई स्पष्ट लक्ष्य या उद्देश्य नहीं था। उसे किस कालेज में जाना चाहिए, क्या विषय लेने चाहिए इत्यादि बातों के बारे में घरवालों से कोई मार्गदर्शन मिलने की आशा नहीं थी। स्कूल के अध्यापकों और प्रिंसिपल से भी कोई दिशा-निर्देश नहीं मिला। हाई स्कूल की परीक्षा में अंग्रेजी को छोड़कर शेष सभी विषयों में प्रथम श्रेणी के अंक आए थे। विज्ञान और गणित में तो विशेष श्रेणी मिली थी। हिन्दी में बहुत अच्छे अंक थे। लेकिन अंग्रेजी में पचास प्रतिशत अंक थे। भौतिकी, रसायन या चिकित्सा विषयों के प्रति उसे बहुत अधिक आकर्षण था। उसका स्वप्न था कि लुई पास्चर या मेरी क्यूरी की तरह किसी ऐसी चीज़ की खोज की जाए जिससे लाखों-करोड़ों लोगों को लाभ हो। लेकिन अंग्रेजी में बहुत कम अंक होने के कारण उसे विज्ञान विषयों में प्रवेश नहीं मिला। हाई स्कूल में उसने सभी विषय हिन्दी के माध्यम से पढ़े थे। कालेज में सभी अच्छे विषयों का माध्यम अंग्रेजी था। माध्यम की समस्या से तो वह जैसे-तैसे निपट सकती थी क्योंकि कुछ अतिरिक्त परिश्रम करके अंग्रेजी में महारत हासिल करना उसके लिए ज्यादा मुश्किल नहीं था। लेकिन इन विषयों में प्रवेश के लिए अंग्रेजी के अंक जोड़े जाते थे और उससे उसके अंकों का प्रतिशत कम

हो जाता था ।

किन विषयों में अच्छी नौकरियां मिल सकती हैं, इस दृष्टि से उसने कालेज की शिक्षा पर कभी सोचा ही नहीं था। वाणिज्य के लिए छात्रों में बहुत होड़ थी लेकिन रेखा को चार्टर्ड एकाउंटेंट बनकर बनियों के झूठे बही-खाते तैयार करके पैसा कमाना बहुत घटिया काम लगता था। इंजीनियरों की लाइन को वह घूसखोरों की लाइन मानती थी। साहित्य और कलाओं में उसकी बहुत रुचि थी और वह बहुत सशक्त लेखक बनकर समाज में वैचारिक क्रांति लाने का स्वप्न भी देखा करती थी। लेकिन हिन्दी साहित्य के पाठ्यक्रम पर नजर डालने के बाद उसे लगा कि सूर, तुलसी, देव, बिहारी और पद्माकर की कविताओं को रटने के बाद विचारों की क्रांति की बात सोचने की कहां गुंजाइश रहेगी। अर्थशास्त्र और समाजशास्त्र दो ऐसे विषय थे जिनमें सामाजिक परिवर्तन लाने की संभावनाएं भी थीं और जिन विषयों में हिन्दी में पुस्तकें काफी मात्रा में उपलब्ध हो सकती थीं। हालांकि कालेज में इन विषयों को पढ़ाने वाले अंग्रेजी का ही सहारा लेते थे लेकिन विद्यार्थी को हिन्दी में परीक्षा देने की सुविधा थी। चूंकि इन विषयों में विद्यार्थियों में कोई खास प्रतियोगिता नहीं होती थी, इसलिए रेखा को समाजशास्त्र के आनर्स पाठ्यक्रम में, एक अच्छे कालेज में दाखिला मिल गया था।

कालेज घर से दूर, विश्वविद्यालय के परिसर में था और वहां सहशिक्षा थी। माता-पिता रेखा को उस कालेज में नहीं भेजना चाहते थे क्योंकि वह बड़े-बड़े अफसरों और धनी-परिवारों के बच्चों का परम्परा से गढ़ माना जाता था। लेकिन रेखा ने जिद्द की और उसके आगे माता-पिता को झुकना पड़ा।

दूर से अत्यन्त मनमोहक दीखने वाली, कालेज की दुनिया का प्रथम अनुभव इतना कटु, इतना विषाक्त था कि रेखा के लिए उसे भूलना जिंदगी-भर संभव नहीं होगा। सलवार, कमीज, दुपट्टा और सादी चप्पल पहने जब वह कालेज के अहाते में दाखिल हुई तो अमरीका के घुड़चरवाहों की वेश-भूषा वाले लड़के-लड़कियों ने उसका बेहूदा स्वागत किया। अनेक थिगलियों और पैबंदों से बनी कसी जीन पहने दो बाल-

कटी लड़कियां उसके पास आईं और एकसाथ बोलीं, "हा···"

रेखा उनकी शक्ल देखती रही। वह समझ नहीं सकी कि इस स्वागत का उत्तर क्या कहकर दिया जाना चाहिए। उसने डरते-डरते दोनों हाथ जोड़कर उन्हें नमस्ते की। पीछे खड़े काऊ-ब्वाय टाइप लड़कों की टोली हंस दी। एक लड़की ने उसकी ढीली-ढाली कमीज का कोना उठाया और बोली—

"हाऊ सिम्पल। ए पर्फेक्ट सीटा।"

"नो···" दूसरी ने कहा, "पर्फेक्ट साबिट्री।"

"व्हेअर इज़ रामा ?" पीछे से एक लड़के ने कहा।

"नो रामा। बट रावणा इज़ हियर।" दूसरी आवाज आई। लड़कों ने जोर का ठहाका लगाया।

"व्हाट इज़ योर नेम ?" एक लड़की ने पूछा।

रेखा ने कोई उत्तर नहीं दिया। खीज से उसने दूसरी तरफ मुंह फेर लिया।

एक लड़का पीछे से बोला, "शी डोंट नो इंगलिश। टाक इन हिंडी।" रेखा हँस पड़ी, फिर सामने वाली लड़की की तरफ देखकर बोली—

"आपके दोस्त तो बहुत अच्छी अंग्रेजी बोलते हैं। क्या आप सब इसी तरह की अंग्रेजी बोलते हैं ?"

लड़की सकपकाई। जिस लड़के पर रेखा ने कटाक्ष किया था, वह आगे आया और रेखा का हाथ पकड़कर बोला, "तुम अंग्रेजी जानती हो तो बोलती क्यों नहीं ?"

रेखा ने उसका हाथ झटक दिया और कहा, "और आप हिन्दी जानते हैं तो बोलते क्यों नहीं ?"

उस लड़के से जवाब नहीं बन पड़ा तो वह खीजकर बोला—

"कैसे-कैसे जंगली-गंवार आ जाते हैं यहां ? तुम्हें कोई और कालेज नहीं मिला ?"

रेखा बोली, "मुझे पता होता कि यह बिगड़े मां-बाप के बिगड़े बेटे-बेटियों की जागीर है तो कभी न आती।"

उस लड़के ने रेखा की कमीज इतने जोर से खींची कि कमीज के बटन टूट गए और वह धक्के के साथ नीचे गिर पड़ी। लड़कियों ने उसे सहारा देकर उठाया और उसके कपड़े झाड़े।

"डोंट माइंड डियर। दिस इज़ योर फर्स्ट डे।" एक लड़की ने उसे दिलासा देते हुए कहा।

"गाना सुनाओ, गाना।" पीछे खड़े एक लड़के ने कहा।

"हां हां, कोई गाना हो जाए।" पास खड़ी लड़की बोली।

"मुझे नहीं आता।" रेखा रुआंसी-सी हो गई थी।

"अच्छा'''तो डांस करके दिखाओ।"

रेखा दोनों हाथों से मुंह ढांपकर रोने लगी।

लड़के-लड़कियों का झुंड हंसता-खिलखिलाता हुआ आगे बढ़ गया। रेखा बड़ी देर तक वहीं बैठी रही। उसकी इच्छा हुई कि यहीं से वापस चली जाए और कभी इस कालेज में कदम न रखे। फिर उसने सोचा कि मां-बाप से कितनी जिद्द करके उसने इस कालेज में दाखिला लिया था। अब यह कालेज छोड़ दिया तो सब मजाक उड़ाएंगे। उसने अपने आंसू पोंछे, कपड़े झाड़े और अपनी कक्षा की तरफ चल दी।

कुछ दिनों तक रेखा बहुत परेशान रही। कालेज के लिए उसने तीन सूट सिलाए थे। दो सूती साड़ियां भी खरीदी थीं। लेकिन इस कालेज में सलवार-कमीज या साड़ी में आने वाली लड़कियां अजीब लगती थीं। हिंदी कक्षा में यह पोशाक दीखती थी लेकिन और विषयों में इस पोशाक में कभी-कभार कोई लड़की दिखाई देती थी। उसकी अपनी कक्षा में हिंदी माध्यम से पढ़ने वाली दो लड़कियां और आई थीं लेकिन तीन-चार दिन बाद ही उन्होंने किसी दूसरे कालेज में दाखिला ले लिया था।

रेखा को लगा कि उसे इस कालेज में रहना है तो अपने को बदलना पड़ेगा, कम से कम बाहरी तौर पर तो जरूर बदलना पड़ेगा। उसने जीन-बूट पहनने शुरू किए, बाल कटवा दिए और अंग्रेजी के काम-चलाऊ संवाद रट लिए। अब उसके मन में दूसरे लड़के-लड़कियों से मिलते समय कोई झिझक, कोई संकोच नहीं होता था। वह गैंग की सदस्या बन गई थी।

बहुत जल्दी ही वह कालेज में लोकप्रिय हो गई। कालेज के नाटक-

वादविवाद आदि कार्यक्रमों में उसका बहुत नाम हुआ। कक्षा की सभी लड़कियां उससे प्रभावित थीं। लेकिन उसकी सबसे प्यारी सहेली प्रिया सिंह बनी। अपनी सादगी और भोलेपन के कारण रेखा उसको बहुत चाहती थी। कारण शायद यह रहा हो कि रेखा की तरह प्रिया भी महसूस करती थी कि उसके भीतर की और बाहर की दुनिया अलग-अलग है।

प्रिया विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार प्रभुनारायण सिंह की लड़की थी। उसने अंग्रेजी माध्यम तो ले रखा था, लेकिन अंग्रेजी में दिए गए लेक्चर उसकी समझ में नहीं आते थे। रेखा उसे समाज शास्त्र के जटिल विषयों को हिंदी में समझाती थी, तो अंग्रेजी पुस्तक के उससे संबंधित अध्याय को समझना उसके लिए आसान हो जाता था। अक्सर वह प्रश्नोत्तर शैली में अध्यापकों द्वारा लिखी गई पुस्तकों से काम चलाती थी। रेखा की तरह पुस्तकालय में जाकर अपने विषय की नई-नई पुस्तकें या पत्रिकाएं पढ़ना उसके बस की बात नहीं थी लेकिन रेखा को किसी नई पुस्तक या लेख के संबंध में बातें करते हुए वह इतने ध्यान से सुनती थी, मानो वह उसकी लेक्चरर हो।

आनर्स की अंतिम परीक्षा में रेखा की प्रथम श्रेणी आई थी लेकिन प्रिया को पचपन प्रतिशत अंक मिले थे। रेखा को अपनी सहेली के अंक कम रह जाने का अफसोस हुआ था। लेकिन प्रिया अपने परिणाम से संतुष्ट थी क्योंकि एम० ए० में उसका प्रवेश निश्चित था। रेखा और प्रिया दोनों ने एक ही दिन एम० ए० में दाखिला लिया था। प्रिया को अखिल भारतीय खेलकूद परिषद् के एक प्रमाणपत्र के आधार पर दाखिला मिला था हालांकि रेखा को याद नहीं आता था कि प्रिया ने किसी खेल में हिस्सा लिया था।

एम० ए० में आने के बाद रेखा का परिचय प्रोफेसर माथुर और डाक्टर मिश्र से हुआ। प्रोफेसर माथुर विभागाध्यक्ष थे और राजनैतिक दृष्टि से जनसंघ पार्टी से जुड़े थे। डॉ० मिश्र सीनियर रीडर थे, प्रोफेसर बनने वाले थे लेकिन प्रोफेसर के अतिरिक्त पद का निर्माण प्रोफेसर माथुर तथा रजिस्ट्रार प्रभुनारायण सिंह की मिलीभगत के कारण खटाई में

पड़ा हुआ था। डॉ० मिश्र कांग्रेस पार्टी से सम्बद्ध थे और कई नेताओं से उनके सम्पर्क थे। अध्यापक संघ के सचिव होने के नाते विश्वविद्यालय के प्रशासन पर उनका काफी दबदबा था। लेकिन रजिस्ट्रार और विभागाध्यक्ष का गुट काफी शक्तिशाली था और कुलपति इन दोनों के इशारों पर चलते थे। प्रोफेसर माथुर रेखा से बहुत प्रभावित हुए थे क्योंकि रेखा ने हिंदी माध्यम से आनर्स किया था और अब एम०ए० में भी हिंदी माध्यम लिया था। वे स्वयं भारतीय संस्कृति और भारतीय भाषाओं के प्रशंसक थे और तीन राज्यों की हिन्दी ग्रंथ अकादमियों के सलाहकार थे। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और यूनिसेफ के कुछ प्रोजेक्ट भी उनके हाथ में थे, जिनके कारण उनके गुट के अध्यापकों को अच्छा आर्थिक लाभ हो रहा था। रेखा की हिंदी-योग्यता को देखते हुए उन्होंने हिंदी ग्रंथ अकादेमियों से दो पुस्तकों के अनुवाद और एक मौलिक पुस्तक लिखने का काम हाथ में ले लिया। तीन पुस्तकों का कुल तीस हजार का प्रोजेक्ट उन्हें दो साल में पूरा करना था और उसके लिए उन्हें रेखा की सख्त जरूरत थी। रेखा के आगे जब प्रोफेसर माथुर ने तीन सौ रुपये महीने पर, शाम को दो-तीन घंटे काम करने का प्रस्ताव रखा तो रेखा ने प्रोफेसर माथुर का बहुत आभार माना।

प्रोफेसर माथुर अधेड़ अवस्था होने पर भी अपनी रंगीन मिजाजी के लिए प्रसिद्ध थे। विश्वविद्यालय की छात्राओं और अध्यापिकाओं को लेकर उनके कई किस्से प्रचलित थे। रेखा ने भी किस्से सुने थे, लेकिन उसे अपने पर विश्वास था और तीन सौ रुपये महीने की आय को वह हाथ से नहीं जाने देना चाहती थी। रोज शाम को सात-आठ बजे तक वह प्रोफेसर माथुर के कमरे में बैठकर काम करती थी। कभी-कभी देर हो जाती तो वे उसे अपनी कार में घर छोड़ आते थे। उन्होंने रेखा को आश्वासन दिया था कि जैसे ही उसका एम०ए० पूरा होगा उसकी लेक्चररशिप पक्की हो जाएगी। आभारों से लदी रेखा गाल में चिहुंटी काट लेने, कमर में हाथ डालने जैसी उनकी छोटी-छोटी बचकाना हरकतों को नजरअंदाज कर देती थी। उनके साथ कभी-कभी सिनेमा-नाटक भी देख लेती थी।

रेखा और प्रोफेसर माथुर के संबंध न केवल अध्यापकों में बल्कि

छात्रों में भी चर्चा का विषय बन गए। उसकी क्लास की लड़कियां कभी-कभी मजाक में कह भी देती थीं कि उसकी फर्स्ट क्लास फर्स्ट निश्चित है। रेखा इस तरह के मजाक को मजाक की तरह ही लेती थी और हँस-कर टाल देती थी।

लेकिन एम० ए० में उसका फर्स्ट क्लास कुछ अंकों से रह गया। उसे बहुत सदमा लगा, उसकी सहेली प्रियासिंह फर्स्ट क्लास फर्स्टआई थी। रेखा की समझ में नहीं आ रहा था कि यह कैसे हुआ। हालांकि प्रोफेसर माथुर के प्रोजेक्ट में उसे काफी समय देना पड़ता था लेकिन उसने परीक्षा की तैयारी में कोई कमी नहीं रहने दी थी। उसे प्रथम श्रेणी मिलने का पूरा भरोसा था। और प्रिया सिंह का फर्स्ट क्लास फर्स्ट लेना तो एक चमत्कार था। उसने तो कुछ नोटों के सिवाय कुछ नहीं पढ़ा था। उसे याद आया कि प्रिया के पर्स में हाथ से लिखे हुए तीस-बत्तीस पृष्ठों की एक मुड़ी हुई कापी रहती थी और परीक्षा की तैयारी के दिनों में वह अक्सर उन्हीं कागजों को पढ़ती थी। एक दिन जिज्ञासावश रेखा ने उससे कापी छीनकर देखा था कि उसमें कुछ प्रश्न और उनके उत्तर लिखे हुए हैं। रेखा ने सरसरी नजर डालकर कापी उसे लौटा दी थी, यह सोचते हुए कि अधिकतर छात्र इसी तरह कुछ खास प्रश्नों को घोटकर परीक्षा की तैयारी करते हैं। अब रेखा को याद आया कि एम० ए० की परीक्षा में वही प्रश्न आए थे जो उसने प्रिया सिंह की कापी में देखे थे।

रेखा कुछ दिन घर से बाहर नहीं निकली। उसने लेक्चरर बनने का विचार ही दिल से निकाल दिया। कुछ दिन बाद हिम्मत कर वह यूनि-वर्सिटी गई, यह पता लगाने के लिए कि उसका पी-एच० डी० के लिए रजिस्ट्रेशन हो सकता है या नहीं। विभाग में उसकी भेंट डॉ० मिश्र से हो गई। उन्होंने रेखा के परीक्षा-परिणाम पर बड़ा आश्चर्य और दुःख प्रकट किया। रेखा के प्रति उन्हें सहानुभूति हो गई।

डॉ० मिश्र उसे अपने कमरे में ले गए। रेखा की सारी कहानी सुनने के बाद उन्होंने बताया कि रजिस्ट्रार प्रभुनारायण सिंह और प्रोफेसर माथुर ने मिलकर उसके साथ शरारत की है। प्रभुनारायण सिंह ने अपने पद का इस्तेमाल करके प्रश्नपत्र हासिल किया और प्रो० माथुर ने उसकी लड़की

के लिए प्रश्नों के उत्तर लिखकर दिए। प्रो० माथुर एक्सटेंशन लेना चाहते हैं, इसलिए रजिस्ट्रार को खुश रखना उनके लिए जरूरी है। इसके अलावा प्रो० माथुर के खिलाफ हजारों रुपये की गड़बड़ी के केस हैं और उनको रफा-दफा करना सिंह के हाथ में है। ऐसी स्थिति में उनकी लड़की को लेक्चरर बनाने के लिए तुम्हें रास्ते से हटाना जरूरी था।

डॉ० मिश्र ने रेखा को पी-एच० डी० का रजिस्ट्रेशन दिलाने का आश्वासन दिया और यह भी कहा कि वे किसी मंत्री से कहकर उसे अच्छी नौकरी पर लगवा देंगे। डॉ० मिश्र के विचारों ने रेखा को काफी प्रभावित किया। उसे लगा कि वे प्रोफेसर माथुर और सिंह के खिलाफ नहीं, विश्वविद्यालय में फैले भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई लड़ रहे हैं।

लेकिन कुछ दिन बाद रेखा को पता चला कि डॉ० मिश्र उसका इस्तेमाल अपने स्वार्थ के लिए करना चाहते हैं। प्रोफेसर माथुर और रजिस्ट्रार सिंह के खिलाफ उन्होंने अखबारों में खबरें छपवाईं। इनमें कहा जाता था कि प्रो० माथुर रजिस्ट्रार को खुश करने के लिए लड़कियां उपलब्ध कराते थे। इसमें रेखा का जिक्र भी आता था। रेखा जब इन खबरों को लेकर परेशान होती थी तो डॉ० मिश्र उसे समझाया करते कि सांच को आंच नहीं आएगी और वे मंत्री से कहकर सब ठीक करा देंगे। फिर एक दिन वे उसे मंत्री के पास ले गए, अशोका होटल में। रेखा को मंत्री के कमरे में छोड़कर वे किसी बहाने बाहर खिसक गए। मंत्री पिये हुए थे। उनके हाव-भाव देखकर रेखा ने अनुमान लगाया कि उनकी नीयत ठीक नहीं है। वह तुरन्त उठ गई और दरवाजा खोलकर बाहर आ गई। बाहर निकलते समय उसने डॉ० मिश्र को बरामदे के कोने में खड़ा देखा। वह एक घृणा-भरी नजर उनकी तरफ फेंककर निकल गई।

इस घटना के बाद उसने यूनिवर्सिटी जाना छोड़ दिया। लेकिन अखबारों में स्कैंडल छपते रहे। कुछ और लड़कियों के नाम भी जुड़े। डॉ० मिश्र के खिलाफ मंत्रियों को लड़कियां सप्लाई करने के स्कैंडल भी छपे। कुछ दिनों बाद रेखा ने अखबार में पढ़ा कि प्रो० माथुर को रिटायर कर दिया गया है और डा० मिश्र विभाग के अध्यक्ष ओर प्रोफेसर बन गए

हैं।

रेखा के मन में इस सारे ढांचे के प्रति एक तीव्र घृणा भर गई। उसने लायब्रेरी में टाइपिस्ट की नौकरी कर ली और उसीमें अपने को बंद कर लिया।

श्याम मोहन से मिलने के बाद रेखा को लगा कि कोई तो आदमी है जो उसकी भावनाओं को समझ सकता है, उसका आदर कर सकता है। इसलिए, कई मुलाकातों के बाद जब श्याम मोहन ने उसके सामने शादी का प्रस्ताव रखा तो उसे इतनी प्रसन्नता हुई कि श्याम मोहन को आलिंगन में भर लेने की अपनी अभिलाषा पर उसे बड़ी मुश्किल से काबू पाना पड़ा। लेकिन शादी के बारे में उसने अभी तक सोचा नहीं था। इतनी जल्दी शादी वह करना नहीं चाहती थी। जिन्दगी के इस महत्त्वपूर्ण परिवर्तन के लिए वह मानसिक रूप से तैयार नहीं थी। लेकिन उस क्षण में उसने यह निश्चय तो कर ही लिया कि शादी जब भी हो, होगी श्याम मोहन से। उसने झिझकते हुए अपना निर्णय श्याम मोहन को बता दिया।

श्याम मोहन ने होस्टल छोड़ दिया और विश्वविद्यालय के पास माडल टाउन में किराये का मकान लेकर रहने लगा। इस बीच वह यूनिवर्सिटी की नौकरी छोड़ने के इरादे से किसी और नौकरी की तलाश करता रहा।

जिस दिन श्याम मोहन को पत्र मिला कि संघ लोक सेवा आयोग ने नगरश्री निदेशालय के लिए उसे उपनिदेशक चुन लिया है, उस दिन उसे लगा कि वह कीचड़ के तालाब से बाहर निकल आया हैं।

तीन

नगरश्री निदेशालय में श्याम मोहन का चुनाव कैसे हुआ, इसकी जानकारी श्याम मोहन को भी नहीं थी। उसका विचार था पी-एच० डी० के लिए आर्थिक आयोजन पर उसने जो काम किया था, यह उसका पुरस्कार था।

था। अपने काम पर उसे गर्व था, हालांकि थीसिस चुराए जाने से शो ध-प्रबन्ध का महत्व कम हो गया था। संघ लोक सेवा आयोग के साक्षात्का र के समय उसने बोर्ड के सदस्यों के समक्ष अपने नये सिद्धान्त को इतने अच्छे ढंग से रखा था कि बोर्ड के विशेषज्ञों का प्रभावित होना स्वाभाविक था। चुनाव हो जाने के बाद उसका लोक संस्थाओं के प्रति डगमगाता विश्वास फिर से दृढ़ हो गया था और वह सोचने लगा कि कम से कम संघ लोक सेवा आयोग में दो निष्पक्ष चयन होता है।

लेकिन नियुक्ति के कई के दिनों बाद उसे पता चला कि घपला क्या हुआ था।

एक दिन उसके निदेशक श्री डी० एन० शर्मा अपने कमरे से दफ्तर का राऊंड लेने निकले। दफ्तर का चक्कर लगाने के बाद अन्त में वे श्याम मोहन के कमरे में आए। श्याम मोहन ने अदब के साथ अपनी कुर्सी खाली कर दी लेकिन वे सामने वाली कुर्सी पर बैठते हुए बोले—

"अजी बैठिए तो डॉ० मोहन! मैं तो यूं ही चला था राउंड लेने। कहिए, दिल तो लग गया न! वैसे दिल तो क्या लगेगा? कहां यूनिवर्सिटी का माहौल और कहां सरकारी दफ्तर में फाइलों का संसार? लेकिन साहब, आपको यहां आने पर फायदा हुआ हो या न हुआ हो, हमें आपके आने से बहुत फायदा हुआ है।"

श्याम मोहन नम्रता से झुक गया, बोला—

"यह तो आपकी उदारता है, मैं किस लायक हूं?"

"डॉ० मोहन साहब, मैं यह बात आपको खुश करने के लिए नहीं कह रहा हूं। अपने दिल की बात कर रहा हूं। आप जैसे धुरंधर विद्वान हमारे दफ्तर में हैं, यह हमारे दफ्तर के लिए बड़े सम्मान की बात है। क्या थीसिस लिखा है आपने! प्लानिंग की कन्सेप्ट ही बदल दी है। अब तक हम जिस ढांचे में रह रहे हैं उसमें शक्ति ऊपर से नीचे बहती है। आप कहते हैं कि शक्ति का प्रवाह नीचे से ऊपर की तरफ, जड़ों से पत्तों की तरफ होना चाहिए। क्या बात है, साहब! इंटरव्यू-बोर्ड में आपने इसी बात से धाक जमा दी थी।"

"अपने डायरेक्टर के मुंह से तारीफ सुनकर श्याम मोहन को बड़ी

बेचैनी होने लगी थी। मिस्टर शर्मा बोलते गए—

"हैरानी यह है कि अब तक यह बात किसी की समझ में क्यों नहीं आई कि एयरकंडीशन्ड कमरों में बैठकर जो योजनाएं बनाई जाती हैं, उनसे इस देश का क्या भला होगा। हमारा देश कृषि प्रधान देश है, दूर-दराज के गांवों में फैला हुआ है। जो अफसर कभी गांव में नहीं गए, जिन्होंने कभी खेत नहीं देखे, जिनके कपड़ों पर कभी मिट्टी का दाग नहीं लगा, ऐसे अफसर इस देश के लिए क्या खाक योजनाएं बनाएंगे! जिस देश के पचास प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा से नीचे जीते हैं और उससे ऊपर के तीस-पैंतीस प्रतिशत जैसे-तैसे गुजारा भर करते हैं, उस देश में तो क्रांतिकारी योजनाएं बननी चाहिएं। भई, आपको अपना थीसिस पब्लिश कराना चाहिए।"

श्याम मोहन गद्‌गद् हो गया लेकिन फिर कुछ निराश स्वर में बोला —"थीसिस छपवाने में दस हजार रुपये चाहिए। छपने के बाद भी क्या होगा? कौन थीसिस पढ़ता है? नये विचारों की यहां किसको जरूरत है? जिन पर कुछ करने की जिम्मेवारी है, वे मजे से जिन्दगी काट रहे हैं। मनमानी लूट मची है। राजनेता सुखी हैं, अफसर सुखी हैं, सरकारी कर्मचारी सुखी हैं, पुलिस और सेना के मजे हैं। व्यापारी के घर सोने-चांदी की बारिश हो रही है। कौन दुखी है यहां और कौन बदलाव चाहता है?"

"आपकी बातें तो सोने के अक्षरों में लिखकर रखने लायक हैं, डा० मोहन! कितने लोग हैं इस देश में जो आपकी तरह सोचते हैं? भई, आप भले ही मुझे पुराने विचारों का कहें लेकिन मैं तो मानता हूं कि खानदानी संस्कारों का असर होता है। अब देखिए, इस देश में हजारों राजनेता हैं। एम० पी०, एम० एल० ए० हैं, मंत्री हैं, मुख्य मंत्री हैं, सेंटर के मिनिस्टर हैं, लेकिन योजना मंत्री जी की बात ही निराली है। वे भीड़ में अलग दिखाई देते हैं। अखबारों में जब भी कोई स्टेटमेंट छपती है, दिल खुश हो जाता है। मैं तो साहब उनके भाषणों की कतरनें अपनी फाइल में रखता हूं।"

श्याम मोहन अजीब उलझन में पड़ गया। योजना मंत्री का प्रसंग अचानक छिड़ जाने का कारण उसकी समझ में नहीं आया। उसने प्रसंग

बदलने के लिए सिगरेट की डिबिया खोलकर मिस्टर शर्मा की ओर बढ़ाई। मिस्टर शर्मा ने डिबिया से एक सिगरेट लेते हुए कहा—

"मैं सिगरेट नहीं पीता। बस कभी-कभी कंपनी के लिए पी लेता हूं। सिगरेट क्या, मैं किसी भी आदत का शिकार नहीं हूं। मैं विदेश जाता हूं तो ड्रिंक करता हूं। लेकिन यहां ड्रिंक नहीं करता। बस कभी-कभी किसी पार्टी में दोस्तों का साथ देने के लिए थोड़ी-सी ले लेता हूं। यही हाल सिगरेट का है।"

श्याम मोहन को प्रसंग बदलने का बहाना मिल गया।

"आप अक्सर विदेश जाते रहते होंगे?"

"हां," मिस्टर शर्मा बोले, "मेरा लड़का कनाडा में सेटल है। लड़की भी शादी के बाद इंगलैंड में सेटल हो गई है। दोनों मियां-बीवी वहां अच्छी पोस्ट पर हैं। साल दो साल में एकाध बार घूमना हो जाता है। लड़का कहता है, आप भी आ जाओ। हिन्दुस्तान में क्या रखा है! सोचता हूं, यहां से रिटायरमेंट लेकर मैं भी लड़के के पास चला जाऊं। चार-पांच हजार की नौकरी तो वहां आसानी से मिल जाएगी। अजी साहब, सच पूछो तो असली जिन्दगी तो वे लोग जीते हैं। क्या स्टैंडर्ड है वहां का! हर आदमी के पास कार है, घर में तरह-तरह के गजेट्स हैं। फ्रिज, कूलर, टी० वी०, स्टीरियो तो वहां मामूली बातें हैं। हमारे देश को तो उस स्टैंडर्ड तक पहुंचने में सदियां लगेंगी, सदियां।"

"तो आप कब ले रहे हैं रिटायरमेंट?" श्याम मोहन ने बात आगे बढ़ाई। मन ही मन श्याम मोहन खीज रहा था कि मिस्टर शर्मा उन हजारों हिन्दुस्तानियों के प्रतिनिधि हैं जिनकी आत्मा का पिंजरा कनाडा या इंगलैंड के किसी पेड़ पर टंगा है।

"फिलहाल तो मैं जापान, हांगकांग, आस्ट्रेलिया और दूसरे पूर्वी देशों के दौरे की कोशिश कर रहा हूं। इन देशों में टाउन प्लानिंग का अध्ययन करने के लिए मैंने अपना नाम स्पोंसर कराया है। प्लानिंग के एक अण्डर सैक्रेटरी हमारे रिश्तेदार हैं। उन्हींकी मेहरबानी से सब हुआ है। लेकिन साहब, यहां बड़े-बड़े मगरमच्छ बैठे हैं। कई और नाम भी आए हैं। अब फाइल प्लानिंग मिनिटर साहब के पास गई है। फैसला उन्हींके हाथ में

है।"

घूम-फिरकर बात फिर योजना मंत्री पर आ गई तो श्याम मोहन और उलझन में पड़ गया। उसने एक खाली नजर मिस्टर शर्मा पर डाली। मिस्टर शर्मा जैसे उसकी नजर की प्रतीक्षा ही कर रहे थे, बोले—

"डाक्टर साहब, मेरी किस्मत आपके हाथ में है।"

"मेरे हाथ में ?" श्याम मोहन चौंका।

"आप मिनिस्टर साहब से कह दें तो मेरा काम बन जाएगा।" मिस्टर शर्मा की वाणी काफी दीन हो गई थी।

"लेकिन मैं मिनिस्टर साहब से कैसे कह सकता हूं ?"

"अजी, आपके लिए क्या मुश्किल है ?"

"लेकिन मैं तो उनसे कभी मिला भी नहीं।"

"मजाक छोड़िए डॉक्टर साहब। आपकी जरा-सी बात से मेरा फ्यूचर ब्राइट हो सकता है।"

"लेकिन शर्मा साहब, मैं उन्हें जानता तक नहीं।"

"अजी, कैसी बातें करते हैं आप ? वे आपके भाई साहब हैं और आप कहते हैं ···"

"भाई साहब, किसने कहा आपसे ?"

श्याम मोहन भौंचक्का-सा उनकी तरफ देख रहा था। मिस्टर शर्मा पहले तो इसे मुस्कराकर टालते रहे। फिर गंभीर हो गए।

"आप ही ने तो कहा था कि मदन मोहन जी आपके बड़े भाई हैं। इण्टरव्यू में···"

श्याम मोहन को अब समझ में आया कि मामला क्या है। इण्टरव्यू के दौरान एक सदस्य ने उसका नाम पूछा था। श्याम मोहन नाम सुनकर दूसरे सदस्य ने कहा था, "आप श्याम मोहन हैं तो मदन मोहन जी को भी जानते ही होंगे !" इसपर श्याम मोहन ने कहा था, "मदन मोहन मेरे बड़े भाई हैं।" उस समय उसे थोड़ी-सी-हैरानी भी हुई थी कि उसके भाई का जिक्र कैसे चल पड़ा। फिर यह सोचकर कि हुलिये की रिपोर्ट में उनका जिक्र आया हो, बात को आया-गया कर दिया था। यह बात तो उसके ध्यान में आई ही नहीं थी कि हमारे देश के योजना मंत्री एम० मोहन का

पूरा नाम मदन मोहन है।

रहस्य खुलने पर श्याम मोहन बेसाखता हंस पड़ा। फिर बोला, "मदन मोहन मेरे भाई जरूर हैं, लेकिन वे गांव में हल चलाते हैं।"

मिस्टर शर्मा के चेहरे का रंग स्याह पड़ गया। वे ज़्यादा देर श्याम मोहन के सामने नहीं बैठ सके। उठते-उठते बोले, "मिस्टर मोहन, आपने बहुत गलत काम किया है।"

मिस्टर शर्मा के बाहर चले जाने के बाद श्याम मोहन बड़ी देर तक उस प्रसंग पर सोचता रहा। संयोग से घंटे-भर की इस बेहूदा मजाक पर उसे हंसी भी आ रही थी और यह सोचकर मन दुखी भी हो रहा था कि संघ लोक सेवा आयोग में उसका चुनाव योग्यता की वजह से नहीं, किसी तरह योजना मंत्री के साथ रिश्ता जुड़ जाने से हुआ था।

लेकिन मिस्टर शर्मा के सपनों का महल चकनाचूर हो गया था। श्याम मोहन के चुनाव को तो वे रद्द नहीं करवा सकते थे लेकिन उसे वे कभी माफ भी नहीं कर सकते थे क्योंकि उसने उनके विदेशी दौरे की सारी उम्मीदों पर पानी फेर दिया था।

उसी क्षण से श्री डी० एन० शर्मा का रवैया श्याम मोहन के प्रति बदल गया। कुछ दिन पहले श्याम मोहन को नगरश्री निदेशालय की पंचवर्षीय योजना के प्रस्ताव बनाने का काम सौंपा गया था। अपने सभी अधिकारियों को कमरे में बुलाकर श्री शर्मा ने कहा था, "हमारे दफ्तर के लिए बड़े सौभाग्य की बात है कि डा० मोहन जैसे विद्वान अर्थशास्त्री और योजना विशेषज्ञ हमें मिले हैं। जैसा कि उनका ज्ञान है और जैसी उन्होंने रिसर्च की है, उसे देखते हुए डा० मोहन को प्लानिंग कमीशन का मेम्बर होना चाहिए था। खैर, हमें इनकी सेवाओं का उपयोग करने का मौका मिला है, तो हमें उनका पूरा फायदा उठाना चाहिए। हम चाहते हैं हमारे दफ्तर का प्लान-बजट जो पिछली चार योजनाओं में लगभग एक सा रहा है, इस योजना में बढ़े और दफ्तर का विकास हो ताकि यहां स्टाफ बढ़े,प्रोमोशन के चांसेज ज्यादा हों और स्टाफ के लोगों में जो एक मुर्दनी-सी छा गई है, वह दूर हो। इसलिए मेरा सुझाव है कि हमारे दफ्तर के पंचवर्षीय योजना- प्रस्ताव डा० मोहन बनाएं। सभी अधिकारी अपने-अपने विभागों

से सम्बन्धित जानकारी इन्हें दें। कोशिश यह होनी चाहिए कि इस पांच-साला प्लान में हमें दो करोड़ के बजाय दस करोड़ रुपये मिलें। मुझे पूरा यकीन है कि डा० मोहन के बनाए हुए प्रस्तावों पर हमें योजना आयोग से दस करोड़ रुपये प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होगी।''

श्याम मोहन योजना के प्रस्ताव बनाने में बड़ी लगन से काम कर रहा था। अब तक दूसरे अधिकारियों से उसे जो जानकारी मिली थी, या पुरानी फाइलों के ढेर का अध्ययन करके उसे जो कुछ हासिल हुआ था, उससे तो वह यह भी नहीं समझ पा रहा था कि यह दफ्तर क्या है, क्यों बना है और इसका पंचवर्षीय योजना से क्या सम्बन्ध है। उसने देखा कि दफ्तर की स्थापना पहली योजना के दौरान इस उद्देश्य को लेकर हुई थी कि यह नगर, जो देश की राजधानी है, विदेशी आगंतुकों के लिए दर्शनीय, आकर्षक और सुविधाजनक बने और विदेशी लोग यहां से बुरा प्रभाव लेकर न जाएं। लिहाजा इस दफ्तर को राष्ट्रीय महत्त्व की संस्था घोषित किया गया था। स्थापना के समय दफ्तर को जो काम सौंपे गए थे उसका विवरण तो श्याम मोहन को फाइलों में नहीं मिला लेकिन अब तक हुए कामों से दफ्तर का स्वरूप उसे इस प्रकार लगा :

(1) सड़कों और चौराहों पर बड़े-बड़े बोर्ड टांगना, जिनमें विदेशी मेहमानों के स्वागत के लिए सुन्दर-सुन्दर वाक्य लिखे गए हों। या जिन-में देश के महान नेताओं के चित्र दिए गए हों या देश की महानता और प्रगति का बोध कराने वाले महावाक्य लिखे गए हों।

(2) शहर के उस हिस्से में जहां विदेशी मेहमानों का आवागमन होता है, सड़कों के किनारे या बाग-बगीचों से कुदरती तौर पर उगे हुए या पुराने वक्तों में किसी फूहड़ गंवार आदमी द्वारा लगाए गए उन सब पेड़ों को उखाड़ना जो आंधी-तूफानों के थपेड़े सह-सहकर टेढ़े-मेढ़े बेढंगे और भौंडे हो गए हैं तथा उनकी जगह पर सीधी लाइन में सिपाही की तरह सीधे खड़े होने वाले ऐसे पेड़ लगाना जिनकी नस्ल, शक्ल और नाम विदेशी हों।

(3) विदेशी मेहमानों, स्वदेशी महाप्रभुओं, महाजनों आदि को नेत्र कष्ट पहुंचाने वाले भूखे-नंगे, मैले-कुचैले, मिट्टी-पसीने से सने लोगों को

शहर से हटाकर ऐसी जगहों में बसाना जहां वे सुन्दर और महान राजधानी को दूषित करने का कारण न बनें और उन्हें वहां ऐसी हालत में रखना कि उन्हें अपने हाल पर रोष या असंतोष न हो।

(4) शहर के उस भाग से जहां विदेशी मेहमानों, स्वदेशी महाप्रभुओं और महाजनों का आवागमन हो, हरी दूब नाम की खतरनाक चीज को हटाना और उसकी जगह पर सीमेंट तथा कंक्रीट के कलात्मक निर्माण करना और सड़कों तथा चौराहों को बिजली की तेज रोशनी से इस कद्र चकाचौंध करना कि लोग, दिलों में तूफान पैदा करने वाली पूनम की चांदनी से विरक्त हो जाएं।

(5) उपर्युक्त उद्देश्य के लिए किए गए कार्यों को जन-जन में प्रचारित करने के लिए मेले, प्रदर्शनियों, गोष्ठियों, सभाओं आदि का आयोजन करना।

किताबी दुनिया से बाहर निकलकर वास्तविक दुनिया से श्याम मोहन का यह प्रथम परिचय सुखद सिद्ध नहीं हुआ। किताबों से उसने सीखा था कि आर्थिक आयोजन में समाज की महत्त्वपूर्ण समस्याओं को उठाया जाता है और एक निश्चित अवधि में, एक निश्चित सीमा तक, उनके समाधान के लिए लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं, साधन जुटाए जाते हैं और लक्ष्य प्राप्त किए जाते हैं। उद्देश्य यह होता है कि प्रत्येक योजना-अवधि की समाप्ति के बाद समाज कुछ निश्चित कदम आगे बढ़े, उसका आर्थिक स्तर ऊपर उठे, रोजगार बढ़े, भूखों-नंगों की संख्या कम हो तथा आम लोगों को परेशानियों और मजबूरियों से कुछ राहत मिले। वास्तविक दुनिया में ऐसा कुछ नहीं होता था। यहां आर्थिक आयोजन का अर्थ था गरीब आदमी का मांस नोचकर या भीख मांगकर इकट्ठे किए गए धन को बेरहमी से इस प्रकार खर्च करना कि अधिकांश धन राजनेताओं, अफसरों, ठेकेदारों, व्यापारियों की जेब में चला जाए और समस्याएं ज्यों की त्यों रहें ताकि उनपर योजना-दर-योजना अधिकाधिक धन खर्च किया जाता रहे। पुस्तकों में था कि योजनाबद्ध विकास को अपनाने वाले देशों की सरकारें दो तरह के खर्चों की व्यवस्था करती हैं: योजना-व्यय और गैर-योजना व्यय। गैर-योजना व्यय सरकारी संस्थाओं

के स्थायी ढांचे को चलाए रखने के लिए होता है लेकिन योजना-व्यय केवल उन्हीं संस्थाओं या विभागों को जाता है जिन्हें सुनियोजित कार्यक्रमों को लागू करने का काम सौंपा जाता है। वास्तविक दुनिया में श्याम मोहन ने देखा कि योजना-व्यय खैरात की तरह प्रत्येक विभाग को बांटा जाता है। भले ही उस विभाग का योजना से कोई सम्बन्ध हो या न हो। अतिरिक्त धन को बेदर्दी से खर्च करने की सुविधा को बटोरने में हर विभाग होड़ करता है और साल के अंत में जब निर्धारित राशि खर्च कर दी जाती है तो उसे योजना की उपलब्धि कहकर प्रचारित करता है।

दफ्तर की नई-पुरानी फाइलों और अभिलेखों का अध्ययन करने के बाद श्याम मोहन ने देखा कि नगरश्री निदेशालय योजनाबद्ध विकास के एक महान उद्देश्य की पूर्ति करता है और वह है—नगरवासियों में नया सौंदर्यबोध जगाकर उनके सांस्कृतिक स्तर को उठाना तथा कुछ लोगों को अच्छी नौकरियों पर फिट करके बेरोजगारी को कम करना। इसके संस्थापक निदेशक बने थे ऐसे व्यक्ति, जो कभी आजादी की लड़ाई में चार महीने की जेल काट आए थे और शासक दल के महत्त्वपूर्ण कार्यकर्ता रहे थे। इस दफ्तर की स्थापना ही भारतमाता के सपूत को कुर्बानियों का पुरस्कार देने के लिए की गई थी। चूंकि स्थायी तंत्र में किसी अच्छे पद पर उनके खप जाने की कोई संभावना नहीं थी। अतः इस दफ्तर को पंचवर्षीय योजना के एक महत्त्वपूर्ण अंग के रूप में माना गया और संस्थापक निर्देशक स्वतंत्रता सेनानी श्री खैराती लाल दीवान को तीस लाख की योजना राशि को खर्च करने का भार सौंपा गया था। जब तक दीवान खैराती लाल जीवित रहे, वे इस पद को सुशोभित किए रहे और बड़ी योग्यता एवं कुशलता के साथ योजना की निर्धारित राशि को (जो तीस लाख से बढ़ते-बढ़ते चालीस लाख सालाना तक पहुंच गई थी) खर्च करते रहे। अपने तथा अपने दोस्तों के रिश्तेदारों के बच्चों को नौकरियों पर लगाने और विदेशियों के आगे भारत की महानता का सिक्का जमाने के अतिरिक्त जो सबसे बड़ा काम दीवान खैराती लाल मरने से पहले कर गए, वह यह था कि वे इस दफ्तर को एक स्वतःपूर्ण निदेशालय बना गए और उसके सर्वोच्च पद को सुशोभित करने के लिए एक आई० ए० एस०

अफसर की व्यवस्था कर गए।

श्री खैराती लाल दीवान के इस क्रांतिकारी कदम का कई हलकों से तीव्र विरोध हुआ था। सबसे बड़ा विरोध तो आई० ए० एस० के गुटका संस्करण पी० सी० एस० वालों से हुआ, जिनका दावा था कि प्रशासनिक कुशलता की दृष्टि से पी० सी० एस० के लोग उतने ही सक्षम होते हैं, जितने कि आई० ए० एस० के लोग और क्षेत्रीय संस्थाओं के प्रशासन में जहां ग्रास रूट से सीधा सम्बन्ध होता है, पी० सी० एस० ही अधिक सक्षम होता है। विरोध करने वाला दूसरा वर्ग था स्वतंत्रता सेनानियों का जिनका कहना था कि श्री खैराती लाल दीवान एक स्वतंत्रता सेनानी हैं और उनकी जगह पर जो भी आए, उसे स्वतंत्रता सेनानी ही होना चाहिए। तीसरा वर्ग उन लोगों का था जिन्हें टेक्नोक्रेट कहा जाता है। ये लोग फील्ड में काम करने वाले विशेषज्ञ थे जिनमें वैज्ञानिक, अर्थ-शास्त्री, उद्योगविद्, लेखक, कलाकार और प्रचारवेत्ता आते हैं। उनका कहना था कि नगरश्री निदेशालय का काम प्रशासनिक नहीं, तकनीकी नेचर का है और इसलिए इसका अध्यक्ष कोई टेक्नोक्रेट ही होना चाहिए। लेकिन सारे झगड़े का फैसला सचिव स्तर पर हुआ और चूंकि सचिव श्रेणी आई० ए० एस० लोगों की जागीर होती है, अतः अंतिम फैसला आई० ए० एस० के हक में हुआ। पी०सी० एस० वालों को यह कहकर पुचकारा गया कि उन्हीं मे से जब किसी वरिष्ठ अधिकारी को इस पद के योग्य समझा जाएगा, तो उसे आई०ए० एस० बनने का मौका मिलेगा। टेक्नोक्रेट वर्ग के प्रतिनिधि मंडल से कहा गया कि दफ्तर के विस्तार के लिए और नये पद मंजूर कराने के लिए अध्यक्ष पद पर किसी आई० ए० एस० को होना जरूरी है। यह उन्हींके लाभ के लिए होगा क्योंकि दफ्तर का विस्तार होगा तो तकनीकी पदों की संख्या बढ़ेगी और उनके लिए पदोन्नति के रास्ते खुलेंगे। स्वतंत्रता सेनानियों से कहा गया कि दफ्तर के सलाहकार बोर्ड में अधिक से अधिक स्वतंत्रता सेनानी नामजद किए जाएंगे तथा दैनिक भत्ता, यात्रा-व्यय तथा दूसरे रास्तों से उन्हें लाभान्वित किया जाएगा।

श्री दयानिधि शर्मा पी० सी० एस० के वरिष्ठतम अधिकारी होने के

नाते निदेशक बने थे और अब उनके साथ आई० ए० एस० का रुतबा जुड़ा था। उन्होंने आते ही अपनी योग्यता का सिक्का जमा दिया था और यह सिद्ध कर दिया था कि पी० सी० एस० से आई० ए० एस० का बना हुआ अफसर, सीधे आई० ए० एस० से किसी भी लिहाज से कम नहीं होता। सबसे पहले उन्होंने सारे स्टाफ को बुलाकर डायरी, डिस्पैच और फाइलिंग के तरीकों पर भाषण दिया था और बताया था कि किस प्रकार हर नई आवती को, नया केस मानकर, एक नई फाइल में प्रोसेस किया जाए। परिणामस्वरूप तीन महीनों की अवधि में एक हज़ार से अधिक फाइलें दफ्तर में खुल गईं और साल खत्म होते-होते पांच हज़ार फाइलों से दफ्तर लैस हो गया।

इस पांच हजार फाइलों के आधार पर अगले साल के योजना बजट में उन्हें पांच राजपत्रित और पन्द्रह अराजपत्रित पदों की मंजूरी मिल गई। पांच राजपत्रित अधिकारियों में से दो प्रशासन के काम के लिए रखे गए, जिनपर पी० सी० एस० के लोगों को लाया गया। सेवा-संबंधी काम के लिए मिस्टर खुल्लर और रख-रखाव तथा भंडार की खरीद के लिए मिस्टर रस्तोगी की नियुक्ति हुई। तीन का चुनाव संघ लोक सेवा आयोग से हुआ। एक वनस्पति विज्ञान के विद्वान, एक माडलर (कलाकार) और एक अर्थशास्त्री। वनस्पति विज्ञान और माडलर के पदों पर सर्वश्री कपूर और फ्रैंकदास की नियुक्तियां हुईं जिनके लिए संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के पास महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों से सिफारिश आई थीं। अर्थशास्त्री के पद पर चुने गए डा० श्याम मोहन का नाम ही सिफारिश का काम कर गया।

अब नगरश्री निदेशालय श्री डी० एन० शर्मा का एक स्वतंत्र साम्राज्य बन गया, जिसमें नये-पुराने, छोटे-बड़े सब मिलाकर सत्तर कर्मचारी काम करते थे। बजट कुल साठ लाख रुपये का था। इसमें से चालीस लाख योजना व्यय के अन्तर्गत और बीस लाख गैर-योजना व्यय के अन्तर्गत था।

श्याम मोहन के जिम्मे ऐसे योजना-प्रस्ताव बनाना था कि चालीस लाख के स्थान पर दो करोड़ साल में या दस करोड़ पांच सालों में मिलें। लेकिन योजना के अन्तर्गत अब तक किए गए कामों का अध्ययन करने के

बाद श्याम मोहन इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि इस दफ्तर को योजना-व्यय के रूप में एक फूटी कौड़ी भी नहीं मिलनी चाहिए।

पिछले कई वर्षों से योजना के अन्तर्गत जिन पांच कार्यक्रमों को 'सफलतापूर्वक' लागू किया जाता रहा था, श्याम मोहन की दृष्टि में वे फ्राड थे। उसने शहर को सुंदर बनाने के लिए एक नई योजना तैयार की। योजना की रूपरेखा देने से पहले उसे एक प्रस्तावना लिखनी पड़ी जिसमें विस्तार से यह बताया गया कि सौंदर्य क्या है और उसे योजना के अन्तर्गत क्यों शामिल होना चाहिए। उसने तर्क प्रस्तुत किया कि सौंदर्य जीवन को संवारने वाला, उसके स्तर को उठाने वाला एक महत्त्वपूर्ण उपादान है। रोटी, कपड़ा, मकान आदि जीवन की मूल आवश्यकताएं हैं, जिनपर मनुष्य का अस्तित्व निर्भर करता है किंतु सौंदर्य जीवन को अर्थ प्रदान करता है, वह मनुष्य को पशुओं और पेड़-पौधों से भिन्न एक पूर्ण और सार्थक जीवन देता है। वस्तुतः मनुष्य को मनुष्य बनाने वाला तत्त्व सौंदर्य ही है। यह सही ढंग से सिखाने वाली कला है अतः जनजीवन में सौंदर्य की भावना का विकास करने वाला प्रत्येक कार्यक्रम विकास से अनिवार्यतः जुड़ा हुआ है। लेकिन सिर्फ आंखों को लुभाने वाली चीज़ सुंदर नहीं होती। सुंदर वह जो मन को छुए, मन को अपनी परिस्थितियों पर सही ढंग से क्रिया करना सिखाए, जो जीवन को प्रेरणा दे और जीवन के बाधक तत्त्वों पर विजय प्राप्त करने की शक्ति दे।

इस दृष्टि से नगरश्री निदेशालय की योजना के अन्तर्गत सर्वप्रथम कार्यक्रम उसने रखा कि शहर में प्राकृतिक जीवन को पूर्ण संरक्षण दिया जाए। टेढ़े-मेढ़े, बेढंगे पेड़ों को न काटा जाए क्योंकि ये हमें बाधाओं से लड़ने की प्रेरणा देते हैं और हमें उन लोगों के प्रति अपने कर्तव्य की याद दिलाते हैं जो जीवन की मूल आवश्यकताओं से वंचित रहकर या सामा-जिक शोषण का शिकार होकर भूखे, नंगे, कमजोर, बीमार, विकलांग और मजबूर बन जाते हैं। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत उसने सारे शहर के पेड़ों-पौधों, बाग-बगीचों की देखभाल के लिए दस हजार मालियों और दो हजार वनस्पति-विशेषज्ञों के पदों के निर्माण का प्रस्ताव रखा और उनके वेतन आदि के लिए एक करोड़ रुपये प्रतिवर्ष के खर्च का प्रावधान किया।

दूसरा प्रस्ताव था कि नगर को सुंदर बनाने के लिए नगर को साफ-सुथरा रखा जाए। इसके लिए मल-मूत्र और कचरे को साफ करके उसके पुनरुपयोग अर्थात् रिसाइक्लिंग की एक बृहत् योजना तैयार की गई। शहर की तमाम गंदी बस्तियों में शौचालयों का व्यापक निर्माण करना और बंद नालियों के माध्यम से सारे मलमूत्र को विभिन्न स्थानों पर बनाए जाने वाले दस बायोगैस संयंत्रों में ले जाना, फिर बायोगैस संयंत्रों में तैयार की गई गैस को सस्ते दामों पर लोगों को उपलब्ध कराना। इस योजना में न सिर्फ गरीब बस्तियों में शौचालयों के निर्माण की व्यवस्था की गई बल्कि शहर के प्रत्येक भाग में सड़कों के किनारे कुछ-कुछ दूरी पर शौचालय बनाने की व्यवस्था भी की गई। जन-सुविधाओं के निर्माण पर पांच करोड़ रुपये खर्च होने का अनुमान लगाया गया और इनके रख-रखाव के लिए आठ हजार सफाई कर्मचारियों की नियुक्ति का प्रस्ताव रखा गया जिनपर प्रतिवर्ष अस्सी लाख रुपये खर्च का अनुमान लगाया गया। दस बायोगैस संयंत्र लगाने के लिए दो करोड़ प्रति संयंत्र के हिसाब से बीस करोड़ रुपये के पूंजी व्यय की विशेष मांग की गई। चूंकि बायोगैस संयंत्र के निर्माण में दो वर्ष का समय अपेक्षित होगा और योजना के तीसरे वर्ष से ये संयंत्र आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी होते जाएंगे अतः बीस करोड़ के पूंजी-निवेश में योजना आयोग को आपत्ति नहीं होनी चाहिए। दस संयंत्रों में गैस उत्पादन और वितरण के लिए योजना में बीस हजार कर्मचारियों की नियुक्ति का प्रस्ताव रखा और उनपर प्रतिवर्ष दो करोड़ रुपये के खर्च का अनुमान लगाया गया। तीसरा प्रस्ताव था शहर के गंदे पानी के पुनरुपयोग का। इसके लिए गंदे पानी को साफ करके उसे खेतों का सिंचाई के काम में लाने के उद्देश्य से विभिन्न स्थानों पर दस जल-शोधक संयंत्र लगाने की योजना बनाई। इन संयंत्रों पर दस करोड़ का पूंजी-व्यय मांगा गया। नालियों के रख-रखाव और संयंत्र चलाने के लिए सात हजार कर्मचारियों की नियुक्ति का प्रस्ताव रखा गया जिनपर सत्तर लाख रुपये सालाना खर्च की व्यवस्था की गई।

योजना के कार्यान्वयन के संबंध में श्याम मोहन ने महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव रखा कि कार्यान्वयन के किसी भी स्तर पर ठेकेदारों को न लाया जाए।

सारे निर्माण-कार्य सरकारी इंजीनियरों की देख-रेख में सीधे कराए जाएं और मजदूरों तथा शिल्पियों को सामान्य सरकारी कर्मचारियों की तरह उचित मजदूरी दी जाए। इसके लिए उन्होंने मजदूरों, शिल्पियों और निर्माणकर्ताओं की निर्माण-सेना बनाने का सुझाव दिया जिसमें कुशल-गैर कुशल पंद्रह हजार मजदूर हों, और उनके वेतन आदि के लिए प्रतिवर्ष डेढ़ करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई। इस सुझाव का उद्देश्य यह था कि योजना के अन्तर्गत खर्च की गई राशि ठेकेदारों और भ्रष्ट अधिकारियों की जेब में न जाकर रोजगार पाने वाले गरीब लोगों के पास जाए तथा स्थायी राष्ट्रीय परिसंपत्तियों के रूप में परिवर्तित हो।

योजना की प्रत्याशित उपलब्धियों के बारे में कहा गया कि इन कार्यक्रमों से बासठ हजार लोगों को रोजगार मिलेगा और उन्हें मजदूरी, वेतन आदि के रूप में प्रतिवर्ष छः करोड़ रुपये वितरित किए जाएंगे। दो साल बाद जब बायोगैस संयंत्र और जल-शोधक संयंत्र काम करने लगेंगे तो गैस और सिंचाई-जल की बिक्री के रूप में दस करोड़ सालाना आय होने लगेगी, जिसमें से छः करोड़ वेतन-भत्तों के लिए, एक करोड़ रख-रखाव के आवर्ती खर्च के लिए और तीन करोड़ पूंजी व्यय की वापसी के लिए होंगे। पूरी योजना के सार को निम्न सारणी में प्रस्तुत किया गया :

योजना का विवरण	रोजगार	परिसंपत्तियों पर व्यय	दो वर्ष के लिए वेतन भत्तों आदि पर व्यय
			(करोड़ रुपये)
1. प्राकृतिक जीवन का संरक्षण	12,000	—	2-00
2. जनसुविधाओं का निर्माण	8,000	5-00	1-60
3. दस बायोगैस संयंत्रों का निर्माण	20,000	20-00	0-40
4. जल-शोधक संयंत्रों का निर्माण	7,000	10-00	1-40
5. निर्माण-सेवा का रख-रखाव	15,000	—	3-00
जोड़	62,000	35-00	12-00

योजना का अन्तिम प्रारूप तैयार करने के बाद जब श्याम मोहन ने फाइल अपने निदेशक को भिजवा दी तो उसे लगा कि उसके सिर से बहुत बड़ा बोझ उतर गया है। इस दफ्तर में नियुक्ति होने के बाद उसे बराबर यह एहसास होता रहा था कि वह मुफ्त का वेतन लिए जा रहा है। यह काम कर लेने के बाद उसे संतोष हुआ कि वह राष्ट्र के निर्माण-कार्य में अपना सार्थक योगदान दे रहा है।

योजना के प्रारूप की फाइल निदेशक को एक दिन पहले ही भेजी गई थी। संभवतः वह अभी उनकी निजी सहायक के पास थी। इस बीच उन्हें डा० श्याम मोहन की असलियत का पता चल गया। गुस्से में झल्लाए हुए वे अपने कमरे में आए तो उनके सामने योजना के प्रारूप की फाइल थी। उन्होंने फाइल को पढ़ा तो सुलग उठे। फाइल को घृणा से निलंबित फाइलों की ट्रे में फेंककर वे मन-ही-मन बड़बड़ाए, 'उल्लू के पट्ठे, बड़े अर्थशास्त्री बनते हैं! पी-एच० डी० बनते हैं। प्लान बनाया है या पी-एच० डी० का थीसिस लिखा है। सरकारी खजाने से पैसा निकालना और खर्च करना क्या मजाक है! यू० पी० एस० सी० में तिकड़म भिड़ाकर आ गए तो समझ लिया हम बड़े विद्वान हैं।'

न जाने वह क्या-क्या बड़बड़ाते, लेकिन उनके चपरासी भगवानचंद्र के अन्दर आने से सिलसिला टूट गया। एक बार इच्छा हुई कि डा० मोहन को बुलाकर दिल का गुबार निकालें। लेकिन श्याम मोहन के आमने-सामने होने के विचार से उन्हें कुछ भय होने लगा। उनकी मूर्खता पर श्याम मोहन जिस प्रकार ठठाकर हंसा था, उसकी याद आते ही मिस्टर शर्मा का सारा उत्साह ठंडा पड़ गया। उधर विदेश दौरे की सारी उम्मीदों पर पानी फिर जाने के कारण शरीर अधमरा-सा हुआ जा रहा था। निलंबित कागजों की ट्रे में पड़ी हुई फाइल ऐसी लग रही थी जैसे कोई सांप कुंडली मारकर ट्रे में आ बैठा है। छटपटाहट में कोई निर्णय न ले पाने के कारण परेशानी और भी बढ़ रही थी। फिर उन्हें अपने सीनियर डिप्टी मिस्टर वर्मा का ध्यान आया और इन्टरकोम का नम्बर घुमाकर प्रतीक्षा करने लगे।

"गुड मार्निंग सर···मैं वर्मा बोल रहा हूं।"

"भई वर्मा साहब, आपके पास मैं फाइल भेज रहा हूं। डा० मोहन ने योजना के प्रस्ताव बनाए हैं, उनकी फाइल है। आप इसे पढ़ लें। दोपहर बाद इसपर आप से चर्चा करूंगा।"

"ठीक सर···मैं उसे पढ़कर अपना नोट चढ़ा देता हूं।"

"नहीं, नहीं, नोट चढ़ाने की जरूरत नहीं। नोट मैं लिख दूंगा। आप सिर्फ इसे स्टडी कर लें और मुझसे बात करें।"

"ठीक सर···"

भगवानचंद्र के हाथ फाइल मिस्टर वर्मा को भिजवाने के बाद मिस्टर शर्मा मेज पर पड़ी दूसरी फाइलों को निपटाने का इरादा कर रहे थे लेकिन कहकहा लगाते हुए श्याम मोहन का चेहरा बार-बार उनकी नज़रों के आगे घूम रहा था। काम में मन लगाना सम्भव नहीं हो रहा था। उन्होंने भगवानचंद्र को कहकर ड्राइवर से गाड़ी लगाने को कहा। विदेशी दौरे के प्रस्ताव की क्या स्थिति है, यह जानने के लिए वे योजना मंत्रालय में अवर-सचिव अपने दोस्त परमानंद चिकुटिया से मिलने चल दिए।

भगवानचंद्र ने जब सुधीर वर्मा के आगे योजना-प्रस्ताव की फाइल रखी तो सुधीर वर्मा, सीनियर डिप्टी की बाछें खिल गईं। बड़े साहब ने उन्हें भरोसे का आदमी मानकर उनसे महत्त्वपूर्ण फाइल पर राय मांगी, इस बात से उनकी छाती फूल गई। कुर्सी से उठकर उन्होंने पीठ के पीछे दीवार पर लगे छोटे-से शीशे में अपना चेहरा देखा, अंगूठे और बड़ी अंगुली के बीच नाक के दोनों नथुनों को सहलाया और दो बड़ी झुर्रियों से होते हुए उन्हें ठोड़ी तक ले गए यानी दोनों बाछों को साफ किया, फिर तौलिये से मुंह पोंछकर कुर्सी पर आ जमे और फाइल पढ़ने लगे। डा० श्याम मोहन के प्रस्ताव पर उनसे राय मांगकर बड़े साहब ने उनके नम्बर दो स्टेटस को मान्यता दी थी और यह उनके लिए काफी प्रसन्नतादायक बात थी। उन्होंने सिगरेट सुलगाया और जोर का एक कश लेकर उसे ऐशट्रे के कोने से टिका दिया।

मिस्टर सुधीर वर्मा नगरश्री कार्यालय के सबसे पुराने, सबसे ज्यादा अनुभवी अफसर थे। किसी रिश्ते से खैरातीलाल दीवान का भतीजा होने के कारण उन्हें जूनियर अफसर का पद अनायास मिल गया था और

तब से तरक्की करते-करते वे सीनियर डिप्टी के पद पर पहुंच गए थे। तरक्की के लिए उन्हें ज्यादा हाथ-पांव नहीं मारने पड़े थे। शुरू से ही उनका जो रुटीन बना था उसे वे निभाते रहे। सुबह ग्यारह बजे दफ्तर आना, फिर कुछ-कुछ देर के लिए अपने सहयोगियों के पास बैठकर सनम के सितम और जुल्फों के साये की शेर-ओ-शायरी करना, कैंटीन से मंगवाया लंच खाकर एक घंटा कमरे में नींद लेना, फिर शाम की चाय, शेर-ओ-शायरी और पांच बजे उठकर चल देना। जब तक खैरातीलाल दीवान निदेशक रहे उन्हें एक बार भी गुड और वेरीगुड रिपोर्ट नहीं मिली; हमेशा आउटस्टैंडिंग रिपोर्ट लेते रहे और सहज बहाव में पदोन्नति भी पाते रहे। मिस्टर शर्मा के आने के बाद उनके नित्यक्रम में तो कोई फर्क नहीं आया लेकिन रिपोर्ट कभी गुड से ऊपर नहीं गई। लेकिन तब उन्हें अच्छी रिपोर्ट की जरूरत भी नहीं रह गई थी क्योंकि नम्बर दो के पद तक पहुंच चुके थे। नम्बर एक के पद पर आने की कोई आशा नहीं थी क्योंकि वे पी० सी० एस० बी० सी० एस० कुछ भी नहीं थे। अलबत्ता मन में यह हसरत थी कि मिस्टर शर्मा विदेश के दौरे पर चले जाएं और उन्हें कार्यवाहक निदेशक के रूप में कुछ दिन काम करने का अवसर मिल जाए। सेवा-निवृत्त होने में एक साल रह गया था और निदेशक के पद से सेवानिवृत्त होने की सारी उम्मीदें मिस्टर शर्मा की कृपा पर निर्भर करती थीं। वैसे मिस्टर शर्मा ने उन्हें 'नान एंटिटी' मानकर उनके नित्यक्रम में दखल न देने का फैसला कर रखा था और उन्हें कोई काम नहीं दिया जाता था तथापि वे मिस्टर शर्मा के कृपापात्र बनने का मौका नहीं चूकते थे।

मिस्टर वर्मा ने ऐशट्रे के कोने में रखी अधजली सिगरेट को बड़ी अदा से उठाया। दो कश लेने के बाद उसे फिर वहीं टिका दिया और फाइल पढ़ने लगे। श्याम मोहन का नोट पढ़कर एकदम उछल पड़े।

"क्या नोट है! क्या ड्राफ्टिंग है! अंग्रेजी लिखने में तो बड़ों-बड़ों के कान काट दिए हैं।"

अपनी प्रसन्नता को अपने तक रखना उसके वश में नहीं रहा। घंटी बजाकर चपरासी को बुलाया और डॉ० श्याम मोहन, कपूर और फ्रैंकदास को बुला भेजा। टेक्नोक्रेट होने के कारण इन तीन अफसरों का गुट

अपने-आप अलग हो गया था। रस्तोगी और खुल्लर ब्यूरोक्रेट की पांत में आते थे। मिस्टर वर्मा अपने को टेक्नोक्रेट मानते थे इसलिए उन्होंने श्याम मोहन, कपूर और फ्रैंकदास के गुट का अपने को अगुआ मान लिया था। वैसे कपूर और फ्रैंकदास एक लम्बे अर्से तक ब्यूरोक्रेट वाली लाइन में घिसते रहे थे और क्लर्क, सहायक तथा अधीक्षक के पदों पर रहकर अपने वर्ग के सारे हथकंडे सीख चुके थे। लेकिन चूंकि अब मिस्टर कपूर वनस्पति-शास्त्र विषय लेकर बी० एस० सी० होने के कारण और फ्रैंकदास पोस्टर तथा होर्डिंग लगवाने के लंबे अनुभव के कारण संघ लोक सेवा आयोग द्वारा टेक्नोक्रेट की लाइन में चुने गए थे, इसलिए उनका वर्ग-परिवर्तन एक स्वाभाविक बात थी। श्याम मोहन मिस्टर वर्मा के समकक्ष पद पर, अर्थात् उपनिदेशक, थे लेकिन सीनियरटी के आधार पर नम्बर दो की हैसियत मिस्टर वर्मा की ही थी।

तीन अफसरों को मेज़ के सामने कुर्सियों पर बिठाकर मिस्टर वर्मा को अपने कुछ होने का एहसास हुआ, लेकिन वे उस एहसास को नम्रता में ढालने में सिद्धहस्त थे। अतः बोले, "साहब ने मुझे योजना प्रस्तावों की महत्त्वपूर्ण फाइल पर राय देने को कहा है। वैसे तो मैं इस दफ्तर का सबसे पुराना आदमी हूं। मैंने इसे एक छोटे-से पौधे से बढ़ते-बढ़ते भरा-पूरा वृक्ष बनते देखा है। वर्षों तक प्लान बनाने से लेकर इम्पलीमेंट करने का सारा काम किया है, इसलिए साहब हमेशा प्लान के मामले में मुझसे सलाह-मशविरा करते हैं। लेकिन आप तो जानते हैं कि मैं अपने सहयोगियों से हमेशा बराबरी का रिश्ता बनाए रखता हूं। अपने सहयोगियों की राय से ही मैं काम करता हूं। मैं समझता हूं कि डॉ० मोहन ने हमारे दफ्तर के लिए बहुत बड़ा काम किया है। उन्होंने सैंतालीस करोड़ की पांच साला योजना तैयार की है। मेरा विचार है कि यह योजना मंजूर हो गई, जैसी कि पूरी उम्मीद है, तो हमारे दफ्तर का कई गुणा विस्तार होगा। आप लोगों के लिए प्रोमोशन के रास्ते खुलेंगे।"

अपने महत्त्व-प्रतिपादन के लिए दिए गए इस भाषण के बाद उन्होंने फाइल से डॉ० मोहन की योजना पढ़ सुनाई। विचार पूछे जाने पर फ्रैंक-दास ने कहा, "योजना तो गज़ब की है। मंजूर हो गई तो इस दफ्तर के

सारे पाप धुल जाएंगे। लेकिन मेरे विचार से इसमें गजेटिड पोस्टें ज्यादा मांगनी चाहिए।"

मिस्टर कपूर ने फ्रैंकदास से सहमति प्रकट करते हुए कहा, "वैज्ञानिकों और तकनीशियनों के पदों में वृद्धि होनी चाहिए। प्रशासनिक पद कुल कर्मचारी संख्या के दस प्रतिशत से ज्यादा नहीं होने चाहिए।"

श्याम मोहन ने बताया कि योजना में इस बात का ध्यान रखा गया है। उसने योजना के बारीक पहलुओं पर प्रकाश डालना शुरू किया कि किस प्रकार इससे अधिक से अधिक पैसा उन लोगों के पास जाएगा जो गरीबी की रेखा के नीचे या आसपास जी रहे हैं, किस प्रकार बिचौलियों, ठेकेदारों, भ्रष्ट अफसरों और राजनेताओं की लूट से बचा जाएगा और किस प्रकार गरीब लोगों की रहन-सहन की परिस्थितियों में सुधार होकर रिसाईक्लिग के द्वारा योजना के सारे कार्यक्रम कुछ वर्षों बाद अपनी आय पर चलने लगेंगे।

लेकिन संभवत: बाकी तीनों में से किसीकी भी रुचि योजना की बारीकियों को समझने में नहीं थी। मिस्टर वर्मा जानते थे कि बड़े साहब किन्हीं कारणों से डॉ० श्याम मोहन के मुरीद हो गए हैं और इसलिए योजना की हर बात प्रशंसा के योग्य है। फ्रैंकदास दो वर्षों तक मिस्टर वर्मा के अधीनस्थ रहकर पोस्टर और होर्डिंग लगाने का काम कर चुके थे। वह मन ही मन समझ रहे थे कि उनके पेटपर लात मारी गई है, लेकिन मिस्टर वर्मा की हां में हां मिलाने के सिवा उनके सामने कोई चारा नहीं था। अपने बायें हाथ से नीचे की और दायें हाथ से ऊपर की दाढ़ी खुजलाते हुए उन्होंने इतना ही कहा, "मैं तो पहले ही कहता था कि इस देश में गलत योजनाएं बन रही हैं।" हर वर्ष नगर में नई होर्डिंग लगाने के लिए और दस-बारह प्रदर्शनियों के आयोजन के लिए वे दस लाख रुपये योजना के नाम पर खर्च करते थे। हर साल नया सामान खरीदा जाता था और प्रदर्शनी के अन्त में कबाड़ी को बेच दिया जाता था। फिर वही सामान अगले साल कबाड़ी के यहां से नया बनकर आ जाता था। यहां तक कि प्रदर्शनी में रखे जाने वाले अधिकांश फोटो और दूसरे प्रदर्शन भी वर्षों से चले आ रहे थे लेकिन उनके नाम पर हर वर्ष राशि खर्च की जाती थी।

लेकिन फ्रैंकदास मिस्टर वर्मा और मिस्टर शर्मा की कृपा से अधीक्षक से उठकर राजपत्रित अफसर बने थे, इसलिए उनका सर्वप्रथम कर्तव्य इस समय यह था कि अपने नुकसान के बजाय साहब के चेहरे की मुस्कान की अधिक चिंता की जाए।

सुभाष कपूर अधीक्षक के ही वेतनमान पर क्षेत्र-अधिकारी थे तथा वृक्षारोपण के इन्चार्ज थे। बूढ़े और बदसूरत पेड़ों को कटवाकर हर साल दो लाख पेड़ लगाने पर वे पंद्रह लाख रुपये खर्च करते थे। उनका हिसाब बिलकुल सीधा था और काइयां से काइयां लेखा-परीक्षक भी उसमें कोई दोष नहीं ढूंढ़ सकता था। दो रुपये की पौध, पाँच रुपये का जंगला और पचास पैसे मजदूरी, याने साढ़े सात रुपये प्रति पेड़ के हिसाब से पन्द्रह लाख का खर्च बिल्कुल साफ था। चूंकि जितने पेड़ अब लगाए जा चुके थे, या जितने जंगले अब तक खरीदे जा चुके थे, उनकी वस्तुगत पड़ताल करना असंभव था, अतः बहती गंगा में हाथ धोने के कार्यक्रम में कहीं कोई बाधा नहीं आती थी। बड़े साहब के नये मकान में दफ्तर के खाते से फर्नीचर सजाने और बिजली फिट करने से लेकर लड़के की शादी का रिसेप्शन एक फ़ाइवस्टार होटल में कराने तक उन्होंने सेवा की थी जिसके पुरस्कार-स्वरूप उनके पद के लिए संघ लोक सेवा आयोग को जो पत्र लिखा गया था उसमें बी० एस० सी० (वनस्पतिशास्त्र) की दूसरी श्रेणी को न्यूनतम योग्यता माना गया था। डॉ० मोहन की योजना से गंगा सूखने वाली है, यह जानते हुए भी वे योजना के खिलाफ एक शब्द नहीं कह सके क्योंकि उन्हें बड़े साहब के दिल की बात का पता था।

"तो यह बात तय हुई," मिस्टर वर्मा बोले, "कि आप लोगों की सह-मति से मैं बड़े साहब को यही राय दूंगा कि योजना क्रांतिकारी है और उसे योजना आयोग के अनुमोदन के लिए भेज देना चाहिए। लेकिन यहां मैं आप लोगों से एक बात कहना चाहता हूं कि हम चारों को मिलकर काम करना चाहिए। अगर हम एक नहीं रहे तो पी० सी० एस० वाले हमें खा जाएंगे।"

मीटिंग बर्खास्त हुई। मिस्टर वर्मा को पहली बार अफसरों की मीटिंग की अध्यक्षता करने का असीम सन्तोष मिला। उन्होंने औपचारिक

तौर पर सबको धन्यवाद देते हुए हाथ मिलाया। सिगरेट सुलगाकर कुर्सी से उठ खड़े हुए। बारी-बारी अपने दोनों कंधों को उचकाकर देखा कि अफसरी के गुरु भार से कहीं बैठ तो नहीं गए हैं और फिर इत्मीनान से बड़े साहब के आने की प्रतीक्षा करने लगे।

बड़े साहब मिस्टर शर्मा, लंच के बाद तीन बजे के करीब आए। योजना मंत्रालय के अवर सचिव श्री चिकुटिया ने उन्हें वह भयानक समाचार दे दिया था जिसकी उन्हें आशंका थी, याने विदेशी दौरे के लिए उनका नाम रिजेक्ट हो गया है। अभी वे यह समझ नहीं पाए थे कि इस सदमे को सहने के लिए क्या किया जाए कि मिस्टर वर्मा योजना-प्रस्तावों की फाइल लेकर उनके कमरे में दाखिल हुए। सामने की कुर्सी पर बड़े आत्मविश्वास के साथ बैठते हुए उन्होंने बात शुरू की—

"डॉ० मोहन ने तो साहब लाजवाब योजना बनाई है। क्या आइडिया है!"

"खाक आइडिया है," मिस्टर शर्मा अपनी सारी खीज उतारकर बरस पड़े, "एक बेहूदा और बेवकूफी-भरी योजना को आप लाजवाब योजना कह रहे हैं? आपने ध्यान से पढ़ा भी है इसे? क्या आपको शेर-ओ-शायरी का मजमा जुटाने से फुर्सत मिलती है जो किसी फाइल को पढ़ते?"

मिस्टर वर्मा पर जैसे बिजली आ गिरी। इस अप्रत्याशित घटना के लिए वे बिल्कुल तैयार नहीं थे। जिन हाथों से उन्होंने फाइल पकड़ रखी थी उनमें इतने जोर का कम्पन छूटा कि फाइल को मेज पर रखकर दोनों हाथ उन्होंने टांगों के बीच दबा लिए। बोलने के लिए कोई शब्द नहीं सूझ रहा था। उन्हें लगा कि कुछ बोलने की कोशिश की तो हकलाने के सिवा कुछ नहीं कर पाएंगे।

मिस्टर शर्मा ने पेपर वेट को दायीं तरफ से उठाकर मेज के बायीं तरफ जोर से पटका, कलमदान से पैंसिल उठाकर दोनों हाथों के बीच उसे कसकर पकड़ा, जैसे वे उसके दो टुकड़े करने जा रहे हों, फिर पैंसिल को कलमदान पर तिरछे लिटाकर बोले, "मैं अपना सिर कहां-कहां फोड़ूं! सारा राटन स्टॉफ मेरे पल्ले पड़ा है।"

बड़ी हिम्मत जुटाकर मिस्टर वर्मा ने कहा—

"आप परेशान मत होइए सर। मैं डॉ० मोहन से इसे रिवाइज करने को कहे देता हूं।"

"डॉ० मोहन, डॉ० मोहन! डॉ० मोहन क्या हुआ, अफलातून हो गया। डिग्री क्या ले आए अक्ल की ठेकेदारी मिल गई! अब तक हम क्या घास खोदते रहे हैं? आप जाइए। मैं देख लूंगा इस फाइल को।"

उन्होंने फाइल उठाई और बगल के रैक में पटक दी। मिस्टर वर्मा चुपचाप बाहर निकल गए।

बड़े साहब मिस्टर वर्मा को झाड़ रहे थे, तो मिस्टर खुल्लर कमरे से बाहर परदे के पीछे खड़े थे। कोई जरूरी फाइल लेकर वे बड़े साहब के पास जा रहे थे कि वर्मा को अन्दर बैठा देखकर ठिठक गए। अन्दर जो कुछ हुआ उसे सुनने के बाद खुल्लर उल्टे पांव लौट गए। सबसे पहले उन्होंने रस्तोगी के कमरे में घुसकर यह खुशखबरी दी।

"मैं जानता था कि इस फाइल का क्या अंजाम होना है।" मिस्टर रस्तोगी ने संतोष की सांस लेते हुए कहा, "योजना-प्रस्ताव बनाना कोई हंसी-खेल है? जिस आदमी को प्रोसीज़र की रंच-भर जानकारी नहीं, जिसने कभी एफ० आर०, एस० आर० और जी० एफ० आर० नहीं पढ़े, वह क्या योजना बनाएगा? मुट्ठी-भर अंग्रेज इतने बड़े देश पर दो सौ साल तक राज कर गए, किसके बल पर? इन डिग्रीधारी टेक्नोक्रेट के बलबूते पर?"

"लेकिन यार, मिस्टर वर्मा की हालत देखने लायक थी," खुल्लर ने मजा लेते हुए कहा, "बच्चू को घिग्घी बंधी हुई थी। मुझे तो लगा, कमरे में बैठे-बैठे उसका हार्टफेल हो जाएगा। लगता है उसने डॉ० मोहन, फ्रैंक-दास और कपूर को अपने कमरे में इसी फाइल पर बात करने के लिए बुलाया था।"

"हां, हां, उसने हमारी जड़ काटने के लिए टेक्नोक्रेटों का गुट बनाया है। समझता है कि इस तरह वह बड़े साहब को मुट्ठी में ले लेगा। लेकिन वह शायद यह भूल गया कि बड़ा साहब टेक्नोक्रेट नहीं, ब्यूरोक्रेट है।"

दोनों की बातें हो रही थीं कि मिस्टर कपूर कमरे में आए। "भई,

सुना है, बड़े साहब ने मिस्टर वर्मा को झाड़ दिया।"

खुल्लर और रस्तोगी कुछ न जानने का बहाना-सा करते हुए उसकी तरफ देखने लगे। रस्तोगी ने पूछा—

"आपसे किसने कहा ?"

"चपरासी आपस में बातें कर रहे थे।"

"झाड़ा होगा। बड़े साहब के मूड का कुछ पता चलता है ?"

"लेकिन बात क्या हुई ?"

"यह तो वर्मा ही बता सकते हैं।"

मिस्टर कपूर बाहर चले गए। उन्होंने फ्रैंकदास को खबर दी और उन्हें साथ लेकर वे वर्मा के कमरे में आए। मिस्टर वर्मा अभी तक सकते की हालत में कुर्सी से पीठ टिकाए छत पर टकटकी लगाए बैठे थे। दो अफसरों को कमरे में आया देखकर उन्होंने अपने को सम्हाला और कुर्सी पर सीधे बैठ गए। कपूर और फ्रैंकदास सामने वाली कुर्सियों पर इस तरह डरते-डरते बैठे मानो मातमपुरसी के लिए आए हों। "क्या बात हुई ?" कपूर ने पूछा, "सुना है साहब, बड़े गुस्से में थे।" मिस्टर वर्मा ने मुस्कराने की चेष्टा करते हुए कहा—

"अरे, यह सब तो चलता ही है। नजला गिरना किसीपर था, गिर गया हम पर। डॉ० मोहन के प्रस्ताव पढ़कर बौखला उठे। खुद ही तो उस दिन इतनी तारीफ कर रहे थे डॉ० मोहन की।"

फ्रैंकदास दोनों हाथों से ऊपर-नीचे खुजलाने की क्रिया में व्यस्त रहते हुए बोले, "यह सब तो होना ही था। असल में, मैं आपको बताना चाहता था कि डॉ० मोहन के प्रस्तावों में कोई दम नहीं है। दो करोड़ की जगह पचास करोड़ के योजना-प्रस्ताव कौन मंजूर करेगा ! लेकिन आप लोगों की राय थी, इसलिए मैं चुप रहा।"

लेकिन कपूर के मन में कोई और बात खटक रही थी। उन्होंने पूछा, "क्या आपने बड़े साहब को बताया था कि इस फाइल पर हम सब लोगों की राय एक है ?"

"नहीं, मैंने साहब को यह नहीं बताया कि मैंने आप लोगों से भी इस पर मशविरा लिया है।" मिस्टर वर्मा ने सच-सच बताया, हालांकि दूसरों

से मशविरा लेने की बात उन्होंने इसलिए नहीं बताई थी कि वे राय का सारा श्रेय खुद लेना चाहते थे।

"तब तो ठीक है।" कपूर इत्मीनान की सांस लेकर बोला, "हम तीनों बड़े साहब के पास चलते हैं। हम उन्हें बताएंगे कि डॉ० मोहन के प्रस्ताव एकदम वाहियात हैं और ये प्रस्ताव पिछले सालों की तरह ही बनने चाहिए।"

फ्रैंकदास ने कहा, "मेरे विचार से खुल्लर और रस्तोगी को साथ ले चलना चाहिए।"

वर्मा को अब भी बड़े साहब के गुस्से की याद करके झुरझुरी हो रही थी। उन्हें लगा कि ज्यादा से ज्यादा लोग साहब के कमरे में जाएंगे तो उनका गुस्सा ठंडा पड़ जाएगा। फ्रैंकदास ने जब रस्तोगी और खुल्लर से बात की तो वे भी डेलीगेशन में शामिल होने के लिए तैयार हो गए। साहब की मन-पसंद बात का समर्थन प्रत्येक अफसर करना चाहता था।

खुल्लर को आगे करके पांचों अफसर बड़े साहब के कमरे में घुसे तो मिस्टर शर्मा अपनी विदेश-यात्रा के सपने के बिखरे हुए टुकड़ों को जोड़ने की कोशिश कर रहे थे। पांच अफसरों को अपने कमरे में देखकर वे थोड़ा अचरज में पड़े। फ्रैंकदास ने बात शुरू की—

"सर, सुना है, डा० मोहन ने कुछ ऊल-जलूल प्रस्ताव दिए हैं। हम सब उनका विरोध करने आए हैं।"

मिस्टर शर्मा मन ही मन खुश हुए। बोले—

"आप लोगों ने देखे हैं?"

"नहीं सर, देखे तो नहीं हैं। डा० मोहन ही बता रहे थे कि उन्होंने दो करोड़ की जगह सैंतालीस करोड़ की योजना बनाई है।"

"डा० मोहन तो समझते हैं कि योजना कमीशन में बेवकूफ लोग बैठे हैं; इतने साल से इस दफ्तर में जो काम होता रहा है, वह वाहियात था।" उन्होंने बगल के रैक से फाइल उठाई और सामने रखकर बोले, "यह रहे उनके प्रस्ताव। पढ़कर माथा पीटने को जी करता है। मैं पढ़कर सुनाता हूं।"

मिस्टर शर्मा ने तीन पृष्ठों का एक लंबा नोट सब को पढ़कर सुनाया और

अंत में फाइल लपेटते हुए बोले—

"है कोई सिर-पैर इस प्रस्ताव में ?"

"इसमें तो हमारी चालू योजनाओं का एक भी प्रोगराम नहीं है।" मिस्टर कपूर ने कहा।

"योजना कमीशन से यह कभी मंजूर नहीं होगी।" रस्तोगी ने भविष्य-वाणी की।

मिस्टर खुल्लर ने विचार व्यक्त किया, "मिस्टर मोहन तो सरकारी कायदे-कानून से बिलकुल नावाकिफ हैं। उन्हें योजना बनाने का काम देना ही नहीं चाहिए था।"

मिस्टर वर्मा जो अभी तक गुम-सुम-से बैठे थे, मेज पर कोहनी टिका कर बोले, "अक्ल किसीके चेहरे पर तो लिखी होती नहीं है। साहब, अगर डा० मोहन को योजना बनाने का काम न देते तो उनकी असलियत का कैसे पता चलता ? मैं कहता हूं डिग्री ले लेने से क्या होता है ! अब देखिए सर, आप ही की मिसाल लें। आप पिछले साल आए। उससे पहले कितने सालों से दफ्तर चल रहा था। लेकिन वही गिना-गिनाया स्टाफ था। प्रोमोशन के रास्ते बंद थे। आप आए और एक ही साल में दफ्तर का स्टाफ दुगुना हो गया। पांच गजेटिड पोस्टें मिलीं। यह है प्लानिंग का कमाल।"

मिस्टर शर्मा को इन बातों से काफी शांति मिल रही थी लेकिन डा० मोहन ने उनकी उम्मीदों पर आज जो पानी फेरा था उसकी याद अब भी भीतर ही भीतर कुरेदे जा रही थी। वे बोले—

"देखिए, मिस्टर मोहन को यू० पी० एस० सी० ने चुना है। आर्थिक मामलों के लिए ही उनका चुनाव हुआ है। इसलिए योजना बनाने का काम तो उनको देना ही था। सवाल यह है कि अब क्या किया जाय।"

"आप चिंता न कीजिए सर," वर्मा ने हिम्मत दिखाई, "मैं तो दीवान साहब के वक्त से यह सारा काम देखता रहा हूं। यह काम होता ही कितना है ! कल हम लोग बैठकर तैयार कर लेंगे और आपको पुटअप कर देंगे।"

"लेकिन आप प्रस्ताव क्या बनाएंगे ?" मिस्टर शर्मा ने पूछा।

"वही जो पिछली योजना में थे और जो शुरू से चले आ रहे हैं। उन्हें मंजूर कराने में कोई दिक्कत नहीं होगी। चालू प्रस्तावों में कुछ खास नहीं करना पड़ता।"

"चालू प्रस्तावों से काम नहीं बनेगा। आपको इतना स्टाफ मिला है। उसको देखते हुए आपका योजना-बजट भी बढ़ना चाहिए। मिस्टर मोहन कहां हैं ?" मिस्टर शर्मा के इस प्रश्न के साथ ही घंटी बजी। चपरासी भगवानचंद्र अंदर आया।

"मोहन साहब को बुलाओ।" उन्होंने चपरासी को देखकर कहा और फिर योजना-प्रस्तावों की फाइल के पन्ने पलटने लगे।

श्याम मोहन अपने कमरे में बैठा एक पत्रिका देख रहा था। बड़े साहब ने वर्मा को झाड़ा है इसकी खबर इन्हें भी मिल गई थी और उन्हें यह भी पता चल गया था कि सब अफसर बड़े साहब के कमरे में बैठे हैं। भगवानचंद्र के कहने पर वे तुरंत उठे और बड़े साहब के कमरे में आ गए। उनके आते ही कमरे में सन्नाटा-सा छा गया। बड़े साहब की कुर्सी के सामने बैठे पांच अफसरों ने उनसे नजर नहीं मिलाई। वह एक कुर्सी पर जाकर बैठ गए। बड़े साहब अब भी जैसे फाइल का अध्ययन कर रहे थे। कुछ देर चुप्पी छाई रही, फिर बड़े साहब बोले—

"मिस्टर मोहन, आपके प्रस्ताव थीसिस-वीसिस के लिए तो ठीक हैं लेकिन यहां नहीं चलेंगे। आपने तो हम सब लोगों की नौकरी खत्म करने का बंदोबस्त कर दिया है।"

"मैं समझा नहीं।" श्याम मोहन ने पांचों अफसरों की तरफ देखते हुए कहा।

"पिछले प्लानों से जो प्रोगराम चल रहे थे उन सब को काटकर आपने ऐसे प्रस्ताव दिए हैं जिन्हें कोई मान नहीं सकता।"

"देखिए, आपके जितने भी प्रोगराम अब तक चले आ रहे थे, वे तो पैसा खर्च करने के लिए थे। प्लान का उद्देश्य सिर्फ पैसा खर्च करना नहीं होता।" मोहन कुछ चिढ़ गया।

"हमने इन कामों में उम्र बिता दी और आप हमें प्लान का अर्थ समझाने चले हैं ?" मिस्टर शर्मा गुस्से में आ गए, "एक तो आप ढंग से

काम नहीं करेंगे और फिर अकड़ भी दिखाएंगे ।"

"अकड़ मैं किसे दिखा रहा हूं ?" मोहन बोला, "आपने मुझे यह काम दिया। मेरी समझ में जैसा आया वैसा कर दिया। योजना कमीशन इसे मानेगा या नहीं इसका फैसला आपने पहले ही कर लिया ? मैं कमीशन में जाकर इनके लिए बात करूंगा ।"

"लेकिन इन प्रस्तावों को आगे भेजकर मैं बेवकूफ नहीं बनूंगा। आप इन्हें छोड़िए और नये सिरे से प्रस्ताव बनाइए।"

"आप बताइए कि आप क्या-क्या प्रोगराम रखना चाहते हैं। मैं इनके प्रस्ताव बना दूंगा।"

"देखिए, अब तक हमारी जो प्लान स्कीमें हैं उन्हें चालू रखिए। लेकिन उनमें पिछले सालों की अपेक्षा ज्यादा पैसा मांगिए। कम-से-कम पचास प्रतिशत वृद्धि तो होनी ही चाहिए। इसके अलावा कोई नई स्कीम सोचिए जिसमें हमें डेढ़-दो करोड़ रुपये मिलें। हमें अपने स्टाफ को भी जस्टीफाई करना पड़ेगा।"

"देखिए, आपकी जो चालू योजनाएं हैं, वे गरीब जनता के साथ धोखाधड़ी के सिवा कुछ नहीं हैं। अगर आपकी वही योजनाएं चालू रखनी है तो किसी क्लर्क को काम दे दीजिए। वह पिछली फाइलों से नकल करके प्रस्ताव बना देगा। मैं इस धोखाधड़ी में शरीक नहीं होना चाहता।"

मिस्टर शर्मा अब आपे से बाहर हो गए—

"मिस्टर मोहन, यू आर टाकिंग नानसेंस। आप सारे दफ्तर पर, सारे अफसरों पर बेईमानी का आरोप लगा रहे हैं।"

"मैं किसीपर आरोप नहीं लगा रहा हूं। लेकिन मुझे जो काम गलत दिखाई देता है, मैं उसे नहीं करूंगा।"

"आपको नौकरी नहीं करना है तो इस्तीफा दे दीजिए।"

"इस्तीफा क्यों दूं ? नौकरी मुझे किसीने दान-दक्षिणा में तो दी नहीं है। मिस्टर शर्मा, मैं जानता हूं आपने किस खुंदक से इन सब लोगों के सामने जलील करने के लिए मुझे बुलाया है। जब तक मैं आपकी नजरों में योजनामंत्री का भाई था तब तक जीनियस था और जब आपको अपनी गलती का पता चल गया तो मैं कुछ नहीं रहा। दो दिन पहले मैंने आपसे

प्रस्तावों पर बात की थी तब तो आपने बड़ी प्रशंसा की थी। खैर, आप जो भी करें, मुझे इस कचरे से दूर रखें। और यह भी मैं आपको बता दूं, अगर आपने मुझे तंग किया तो मैं भी चुप नहीं बैठूंगा। योजनामंत्री का भाई न सही, कुछ दूसरे मंत्रियों से और अखबार वालों से तो जान-पहचान है ही।"

श्याम मोहन उठकर चल दिया। पांचों अफसर दम साधे बैठे थे। बड़े साहब की तिलमिलाहट देखकर उन्हें डर लग रहा था कि वे किसीपर भी बरस पड़ेंगे। लेकिन बड़े साहब ने मिस्टर मोहन के जाने के बाद बड़े संयम से काम लिया :

"मिस्टर वर्मा, आप सब लोग कल मिलकर प्रस्ताव बनाने का काम कर लें और कल शाम तक मुझे फाइल मिल जानी चाहिए। पिछली सारी योजनाओं को शामिल कर लीजिए और कोई एक नई योजना सोचिए। नई योजना जोड़ना बहुत जरूरी है। मिस्टर मोहन से ज्यादा बात मत कीजिए। नया-नया सरकारी नौकरी में आया है। उसका दिमाग मैं दुरुस्त कर दूंगा।"

पांचों अफसर साहब के कमरे से निकले तो दफ्तर खाली हो चुका था।

इस घटना के बाद श्याम मोहन में जो परिवर्तन आया वह दिनों-दिन पुष्ट होता गया। दफ्तर के काम से उसका कोई लगाव नहीं रहा। नीचे से उसके पास जो फाइलें आतीं उन्हें वह बिना टिप्पणी दिए आदेशार्थ आगे सरका देता। कोई नई चिट्ठी आती तो उसपर नीचे के स्टाफ के लिए हिदायत देता, 'वस्तुस्थिति से अवगत कराएं।' फिर नीचे से रिपोर्ट आने पर उसे आदेशार्थ निदेशक के पास भेज देता। सारे दफ्तर में डा० मोहन की पहचान 'आदेशार्थ' और 'वस्तुस्थिति से अवगत कराएं' इन दो वाक्यों से होने लगी।

पंचवर्षीय योजना के प्रस्ताव योजना आयोग से मंजूर होकर आ गए। सभी पुराने कार्यक्रम चालू रखे गए थे और एक नई योजना के लिए डेढ़ करोड़ की फालतू रकम भी मिल गई थी। इस नई योजना का सुझाव श्याम मोहन ने मजाक-मजाक में दिया था। एक दिन उसने मिस्टर वर्मा

से कहा, "बड़े साहब अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के आदमी बनना चाहते हैं तो उन्हें इस शहर में अन्तर्राष्ट्रीय ब्यूटी कंस्टेस्ट कराने चाहिए। नगरश्री निदेशालय के साथ ब्यूटी का कन्सेप्ट तो जुड़ा ही हुआ है।" मिस्टर वर्मा ने इस बात को गंभीरता से लिया और बड़े साहब के सामने योजना रखी। बड़े साहब उछल पड़े। उन्होंने मिस्टर वर्मा की सूझबूझ की दाद देते हुए पांच अन्तर्राष्ट्रीय सौंदर्य-प्रतियोगिताओं का प्रस्ताव तैयार किया। एक महिलाओं के लिए, एक पुरुषों के लिए और एक-एक बच्चों, कुत्तों और कारों के लिए। प्रस्ताव के समर्थन में कहा गया था कि चूंकि इन प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए विदेशों से भी लोग आएंगे अतः देश को विदेशी मुद्रा का लाभ होगा और देश का नाम सारे विश्व में उजागर होगा। योजना आयोग ने इसे लाभदायक प्रस्ताव कहकर मंजूर कर दिया था।

बदकिस्मती से सौंदर्य-प्रतियोगिताओं को आयोजित करने का काम श्याम मोहन के हिस्से में आया। वजह यह हुई कि जब वर्मा से कहा गया कि अपनी कल्पना को साकार करने के लिए उन्हें स्वयं यह काम संभालना चाहिए तो उन्होंने काम से बचने के लिए बड़े साहब को बता दिया कि इस योजना का आइडिया उन्हें मोहन से मिला था। चूंकि श्याम मोहन का नौकरी छोड़ने का कोई इरादा नहीं था इसलिए कुछ-न-कुछ काम तो उसे करना ही था। वह 'आदेशार्थ' और 'वस्तुस्थिति से अवगत कराएं' के दो अचूक औजारों से इन योजनाओं को कार्यान्वित करने में लग गया था।

चार

कुशक दस साल पहले नगरश्री निदेशालय में अवर श्रेणी क्लर्क होकर आया था। हायर सैकेंडरी प्रथम श्रेणी में पास होने के बाद उसने कई खूबसूरत सपने देखे थे। एक अच्छे कालेज में उसे दाखिला मिल गया था और वह कम-से-कम एम० ए० तक पहुंचने के ख्वाब देख रहा था कि अचानक घर का सारा भार उसके कंधों पर आ पड़ा।

उसके पिता प्रेमदास मदनगीर की रिफ्यूजी मार्केट में एक झुग्गी किराये पर लेकर जूते-चप्पल मरम्मत करने की दुकान चलाते थे। एक दिन घर लौटते समय उनका एक्सीडेंट हो गया और कई दिनों तक अस्पताल में रहने के बाद जब वे घर लौटे तो वे महीनों काम करने के लायक नहीं रहे। कुशक को पढ़ाई का ख्याल छोड़कर नौकरी की तलाश में लगना पड़ा। प्रथम श्रेणी और अनुसूचित वर्ग में होने के कारण नगरश्री निदेशालय में बिना अधिक कठिनाई के उसकी नौकरी लग गई। लेकिन इस नौकरी ने उसके तमाम खूबसूरत सपनों को तहस-नहस कर दिया।

अपनी छोटी-सी जिंदगी में उसने न जाने कितने कड़वे-मीठे घूंट पिए थे। अपने बचपन की बहुतसी यादें उसके मन में अब भी ताजा हैं। शाह-जहांपुर के पास एक गांव में उसका छोटा-सा घर था। दस बीघे की जमीन की काश्तकारी थी। उनके घर की बैलों की जोड़ी सारे गांव में मशहूर थी। बापू सुबह तड़के खेत पर चले जाते थे और मां जब घर का काम-काज निपटाकर खेत में जाती थी तो वह भी साथ जाया करता था। पेड़ की छाया में बैठा-बैठा वह बापू को हल चलाते देखता, मां को कुदाल-फावड़े से जमीन खोदते देखता। बापू जब सुस्ताने के लिए बैलों को खड़ा करके चिलम पीने लगते थे, तो भागकर बैलों के पास पहुंच जाता और हल की मूठ पकड़कर बैलों को हांकने लगता। एक बार बैल हड़बड़ाकर भागने लगे तो हल की फाल एक बैल के खुर में धंस गई। उस दिन बापू ने उसकी खूब पिटाई की थी।

खेत में चिड़ियों के पीछे भागना, तितलियों को पकड़ना, मिट्टी को गूंधकर शेर, हाथी, बैल, बकरा आदि बनाना, पेड़ की छाया में बैठकर मां और बापू के साथ रोटी खाना और थक जाने पर वहीं सो जाना··· कुल मिलाकर जिंदगी में सब भला-भला था। बापू कभी-कभी स्कूल भेजने की बात कहते तो वह रूठ जाता। स्कूल से न जाने उसे क्यों डर लगता था। लेकिन एक दिन उसे स्कूल जाना ही पड़ा। बापू को गुस्सा आ गया, उन्होंने ना करने पर दो चांटे जड़ दिए। मां उसे स्कूल में दाखिल कराने ले गई। स्कूल में उसे अलग पंक्ति में हरिजनों के तीनों बच्चों के साथ बिठाया गया। कुछ दिन उसका मन उखड़ा-उखड़ा रहा। फिर सब ठीक हो गया।

उसके कई दोस्त बन गए, मास्टर जी भी उसे प्यार करने लगे क्योंकि वह पढ़ने में बहुत तेज था। पहली से चौथी कक्षा तक जितनी कविताएं पढ़ाई जाती थीं, वे सब उसे पहली कक्षा में ही कण्ठस्थ हो गई थीं।

एक दिन स्कूल में उसे खबर दी गई कि मां और बापू को खेत-मालिक ने बहुत मारा है। वह भागा-भागा घर पहुंचा। बापू लहूलुहान पड़े थे। उनके सिर से खून बह रहा था। जिस्म पर लाठियों के निशान थे। मां को भी बहुत चोटें आई थीं। पास-पड़ोस के लोग उनकी दवा-दारू कर रहे थे। उन दिनों अफवाहें उड़ने लगी थीं कि खेत काश्तकारों को मिल जाएंगे। खेत के मालिक काश्तकारों से अपनी जमीन छुड़ाने के लिए मार-पिटाई का रास्ता अपना रहे थे। कुशक की समझ में ये सब बातें नहीं आती थीं। वह तो मां और बापू की हालत पर सिर्फ रो सकता था। बापू कुछ चलने-फिरने के लायक हुए तो नौकरी की तलाश में दिल्ली चले गए। वहां उन्होंने एक झोपड़ी किराये पर लेकर अपनी दुकान शुरू की। कुछ दिनों के बाद कुशक और उसकी मां भी दिल्ली आ गए।

अब बापू दुकान में बैठते, मां पांच-सात घरों में बरतन-भांडे मांजकर कुछ कमा लेती। रहने के लिए एक कमरे का मकान भी किराये पर ले लिया। कुशक की पढ़ाई चालू हो गई। उन्हीं दिनों राजू का जन्म हुआ। घर में खुशियां भर गईं। गांव में बीते वे दिन धीरे-धीरे बिसरते गए। शहर की भाग-दौड़ और शोर-शराबे की नई जिंदगी की शुरूआत हुई।

राजू शहर के इस नये वातावरण में उगा पौधा था जो आसपास फैले कंक्रीट के जंगल को चुनौती देता हुआ आसमान को छूने के इरादे दिल में लिए हुए था। कुशक इस पौधे को बेरोक-टोक उठने देना चाहता था जिसके लिए वह अपने तमाम सपनों को कुर्बान कर सकता था। नगरश्री निदेशालय में क्लर्क की नौकरी के साथ-साथ वह दो घंटे पार्ट टाइम काम भी करने लगा। राजू पढ़ाई में अच्छा था। उसे कोई अभाव न खले, इसके लिए वह भरसक कोशिश करने लगा। हाई स्कूल में विज्ञान विषयों के साथ राजू के बहुत अच्छे नम्बर आए। मैडिकल टेस्ट में उसे सब विद्यार्थियों में दसवां स्थान मिला। उसे अपने मैरिट पर मैडिकल कालेज में प्रवेश मिल गया। छः साल का लंबा कोर्स था, लेकिन कुशक को इस लंबे

अर्से की चिंता नहीं थी। उसे इस बात की खुशी थी कि छः साल के बाद ही सही, जब राजू डाक्टर बनेगा, तो यह दुनिया बदल जाएगी।

और इस दुनिया के बदलने की प्रतीक्षा में कुशक ने क्रूर परिस्थितियों के उन तमाम तनावों को हंसते-मुस्कराते झेला जो अन्यथा उसके संवेदनशील मन को तोड़ देते। कालेज और दफ्तर के जीवन में वह भी अन्य युवकों की तरह कई लड़कियों के सम्पर्क में आया। कुछ लड़कियों के लिए उसने तड़पन भी महसूस की और कुछ लड़कियां उसे अपनी तरफ आकृष्ट भी लगीं। स्कूल के दिनों से उसे गीत लिखने का शौक था। कालेज में कविता-पाठ की प्रतियोगिता में उसे काफी प्रसिद्धि मिली थी। उन्हीं दिनों से उसकी कविताएं पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगी थीं। अक्सर वह प्रेम की बेचैनी के गीत लिखता था और पाठकों से उसे जो पत्र मिलते थे, उनमें अधिकांश लड़कियां होती थीं। कवि-सम्मेलनों और साहित्यिक समारोहों में वह काफी लोकप्रिय था, विशेषकर नव-वय लड़के-लड़कियों में। उनसे मिलने और बातें करने में उसे खुशी होती थी। आटोग्राफ देने में भी उसे मजा आता था। लेकिन वह अपना सही अता-पता देने से डरता था। वह जानता था कि जिस दिन ये लोग उसकी सही पहचान करेंगे उस दिन उनके चेहरे के भाव बदल जाएंगे। प्रबल इच्छा होते हुए भी वह किसीसे गहरा परिचय स्थापित करने से डरता था। शहर का फैलाव, उसकी भीड़, उसका वातावरण, जो आदमी को आदमी के बिल्कुल करीब लाकर एक दूरी बनाए रखने में सहायक होता है, कुशक को शहरी जीवन के प्रति आकृष्ट करते थे और उस ग्रामीण जीवन से वह भयभीत हो उठता था जहां हर आदमी को उसकी जात से नापा जाता था। उसे जल्दी-से-जल्दी नौकरी पाने की मजबूरी न होती तो वह अपने जातिबोधक प्रमाणपत्र का सहारा न लेता। लेकिन राजू के बारे में उसने सोच रखा था कि जातिबोधक प्रमाणपत्र दिखाकर किसीसे सुविधा मांगने का, अपमान सहने का, वह उसे मौका नहीं देगा। इसीलिए राजू को अपनी योग्यता से मेडिकल कालेज में दाखिला मिला, तो कुशक की छाती गर्व से फूल गई।

राजू को वह अच्छी तरह जानता था। शिशु अवस्था से किशोरावस्था तक उसने राजू के हर मूड, हर रिएक्शन का बारीकी से अध्ययन किया।

राजू मूलतः अंतर्मुखी प्रवृत्ति का था। वह सोचता अधिक था, बोलता कम था। एकांत में बैठना उसे अच्छा लगता था। संगी-साथियों के मामले में रिजर्व था। कुछ इने-गिने दोस्तों के साथ ही उसका उठना-बैठना होता था। तोड़-फोड़ की तरफ उसका रुझान नहीं था। बेजान खिलौनों से मोह नहीं था, लेकिन कुत्ते या बिल्ली के बच्चों से खेलना, पक्षियों और तितलियों के पीछे भागना और ऊंचे-ऊंचे पेड़ों को हसरत-भरी निगाहों से देखना उसे अच्छा लगता था।

कुशक को शहर के दूसरे छोर पर दफ्तर की तरफ से सरकारी मकान मिला। लेकिन कुशक के पिता अपनी दुकान छोड़कर इतनी दूर जाने के लिए तैयार नहीं हुए। मां को भी पिता के साथ ही रहना पड़ा। कुशक माता-पिता को वहीं छोड़कर नये घर में नहीं जाना चाहता था लेकिन वह यह भी सोचता था कि राजू की पढ़ाई के लिए अच्छा मकान होना चाहिए। नये घर में राजू को खाने-पीने आदि की असुविधा न हो इसलिए कुशक पिता के कहने पर गांव में अपनी बिरादरी की सीधी-सादी लड़की ब्याह लाया। सरला जो तीसरी कक्षा तक पढ़ी थी और मामूली लिखना-पढ़ना भर जानती थी, राजू को छोटे भाई की तरह लाड़ करने लगी। कुशक इस बात से बहुत प्रसन्न था क्योंकि वह जानता था कि वह उन लड़कियों में से किसीसे शादी करता जिनके वह ख्वाब देखता था तो राजू अकेला हो जाता। कुल मिलाकर उस समय कुशक के जीवन का सारा संघर्ष राजू को डाक्टर बनाने के लिए था ताकि डाक्टर बनकर उसे किसी से कुछ मांगने की जरूरत न पड़े। उसकी फीस और पुस्तकों के खर्च के लिए कुशक को कर्ज के बोझ से दबा रहना पड़ा, लेकिन इन कष्टों को उसने खुशी-खुशी सहा क्योंकि राजू की पढ़ाई निर्विघ्न चल रही थी और एक निश्चित समय में उसके पूरा होने की पूरी आशा थी।

लेकिन डाक्टरों की अंतिम परीक्षा में राजू फेल हो गया।

कुशक उस दिन दफ्तर से घर आया, तो बाजार से मिठाई का डिब्बा भी साथ लाया था। तीन साल का अनु और पांच साल की लता जब मिठाई के डिब्बे पर झपटे तो कुशक बोला, "ठहर जाओ, राजू को आने दो।"

"भैया तो घर पर हैं नहीं," अनु ने बताया। सरला राजू को भैया कहकर बुलाती थी। मां की देखा-देखी अनु और लता भी राजू को भैया कहने लगे थे।

"कहां गया है ?" कुशक ने पूछा।

"अपने कालेज गए हैं ! रिजल्ट देखने।" लता बोली।

"रिजल्ट अभी निकला नहीं है ?"

सरला अंदर के कमरे से आई, बोली, "शाम को लगने वाला है।"

कुशक ने मिठाई का एक-एक टुकड़ा लता और अनु को दे दिया और फिर राजू की प्रतीक्षा करने लगा। आठ बज गए, राजू नहीं लौटा, तो कुशक को कुछ शंका होने लगी। फिर यह सोचकर कि वह दोस्तों के साथ पार्टी-वार्टी में शामिल हो गया होगा, वह उसी तरह बैठे-बैठे उसकी प्रतीक्षा करता रहा। नौ बजे तक भी राजू नहीं आया। दस बज गए, बच्चे खा-पीकर सो गए, लेकिन राजू नहीं आया। कुशक ने दफ्तर के कपड़े भी नहीं बदले थे। दफ्तर से आने के बाद वह जिस जगह बैठा था, वहां से एक क्षण के लिए भी नहीं उठा था। उठने की इच्छा ही नहीं हो रही थी। एक ही इच्छा थी कि राजू और उसका मुस्कराता हुआ चेहरा देखने को मिले।

सरला बोली, "खाना खा लो, ठंडा हो गया है।"

कुशक ने उसकी बात का जवाब नहीं दिया। खाने की उसकी कतई इच्छा नहीं हो रही थी। किसी भी काम की इच्छा नहीं हो रही थी।

साढ़े दस बजे के करीब राजू ने धीरे से दरवाजा ठेलकर कमरे में प्रवेश किया। बड़े भाई को कमरे में देखकर वह चुपचाप नजरें झुकाए अपने कमरे की तरफ चला गया। उसकी चुप्पी देखकर कुशक का दिल बुझ गया। उसकी हिम्मत नहीं हुई कि राजू से रिजल्ट के बारे में पूछे। उसने महसूस किया कि उसका सारा शरीर निढाल हो गया है और वह अपनी जगह से उठेगा तो लड़खड़ाकर गिर पड़ेगा। उसने यह कहकर मन को सांत्वना देनी चाही कि राजू का डिवीजन अच्छा नहीं रहा होगा। डिवीजन की चिंता कुशक को नहीं थी क्योंकि वह जानता था कि डिवीजन की जरूरत नौकरी के पीछे भागने वालों को होती है और राजू को नौकरी नहीं करनी है; वह महत्त्वाकांक्षी नहीं है। वह गरीब-गुरबों की सेवा करके

सादगी की जिंदगी बसर करना चाहता है। उसकी इच्छा हुई कि राजू के कमरे में जाकर उसे समझाए कि डिवीजन न आने से कुछ फर्क नहीं पड़ता ! अच्छा डाक्टर बनने के लिए ऊंचा डिवीजन लाना कोई जरूरी नहीं है। डिवीजन आदमी को बड़ा नहीं बनाता, बड़ा बनाती है उसकी सेवा-भावना, लगन, निष्ठा, सच्चाई, ईमानदारी।

कुछ हिम्मत करके कुशक अपनी जगह से उठा और धीरे-धीरे राजू के कमरे की ओर बढ़ा। राजू के कमरे में अंधेरा था और वह चादर ओढ़कर सो गया था। कुशक ने वत्ती जलाई।

"राजू !" उसने आवाज दी।

राजू ने कोई उत्तर नहीं दिया। कुशक ने फिर आवाज दी। इसके साथ ही वह उसके बिस्तर पर बैठ गया। शायद खड़ा होने की शक्ति उसकी टांगों में नहीं बची थी।

अब की बार राजू ने मुंह से चादर हटाई। कुशक ने देखा, उसके चेहरे पर गहरी उदासी छाई हुई है।

"पासतो हो गए न···?" कुशक ने बड़ी मुश्किल से कहा। राजू उठ बैठा।

"सर्जिकल के पेपर में रह गया।" राजू भाई की नजरों से नजर नहीं मिला सका।

"क्यों ? पेपर अच्छा नहीं हुआ था ?"

"पेपर तो ठीक था। थियोरी में नम्बर ठीक ही हैं लेकिन प्रैक्टिकल में फेल हो गया।"

कुछ देर तक कुशक के मुंह से कोई शब्द नहीं निकला। उसे लगा कि उसके बोलने की शक्ति समाप्त हो गई है। पढ़ाई में फेल होना कोई अनहोनी बात नहीं है लेकिन राजू के फेल होने की उसे आशंका नहीं थी। फिर यकायक उसे खयाल आया कि यदि इससे उसे इतना सदमा लगा तो राजू पर क्या बीती होगी ? सहसा उसके मन में विचार कौंधा कि परीक्षाओं में असफल बच्चों के आत्महत्या करने के आए दिन समाचार छपते हैं। राजू बहुत संवेदनशील लड़का है, कहीं कुछ कर न बैठे। इस विचार से ही उसका मन कांप उठा। उसे लगा कि परीक्षा प्रणाली बच्चे का सही

मूल्यांकन नहीं करती है । परीक्षा की सफलता-असफलता कई बातों पर निर्भर कर सकती है । उसका कारण संयोग, बेईमान और भ्रष्टाचार कुछ भी हो सकता है। फिर हम परीक्षा की सफलता को इतना ज्यादा महत्त्व क्यों देते हैं कि फेल होने पर बच्चा मृत्यु को गले लगाने को तैयार हो जाता है। यह एक वाहियात शिक्षा-प्रणाली का वाहियात मूल्य है। उसने राजू की पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा—"कोई बात नहीं। इससे इतना उदास होने की जरूरत नहीं। तीन महीने बाद पूरक परीक्षाएं होंगी उसमें निकल जाओगे। एक ही पेपर तो बाकी बचा है। चलो, खाना खा लो।"

राजू ने अपने भाई की ओर देखा। जब उसे विश्वास हो गया कि भाई सचमुच उसके फेल होने के सदमे को झेल गया है तो वह बोला—

"अगर वह मुझे इस परीक्षा में फेल कर सकता है तो वह तीन महीने बाद भी फेल कर सकता है और अगले साल भी···"

"वह कौन ?"

"हमारा प्रोफेसर डॉ० आनंद। उसके हाथ में प्रैक्टिकल के दो सौ नम्बर होते हैं। वह जिसे चाहे फेल कर सकता है।"

"लेकिन उसकी तुम्हारे साथ क्या दुश्मनी है ?"

"उसकी ऐसे हर लड़के के साथ दुश्मनी है जो उसके आगे कुत्ता बनकर पूंछ नहीं हिलाता या उसे हड्डी नहीं डालता। जिनके मां-बाप ऊंचे ओहदे पर हैं, वे उसके आगे हड्डी डालते हैं; दूसरे उसके आगे कुत्ता बनकर रहते हैं।"

कुशक अपने भाई के चेहरे को ध्यान से देख रहा था। जहां उसे कुछ क्षण पहले गहरी उदासी दिखाई दी थी, वहां अब एक प्रखर घृणा प्रकट हो चुकी थी।

"सभी सीनियर डॉक्टर अपने जूनियरों का मनोबल तोड़ने में शैतानी सुख अनुभव करते हैं लेकिन हमारे प्रोफेसर डॉ० आनन्द किसीसे खुन्दक खा जाएं तो वह तब तक पास नहीं होता जब तक वह उसके आगे नाक नहीं रगड़ता। वैसे वह उन सभी लड़कों से चिढ़ा रहता है जो सरकारी स्कूलों से आने के कारण अच्छी अंग्रेजी नहीं बोलते या जो रिजर्व कोटे से गरीब घरों से आते हैं। ये लड़के कालेज में दूर से पहचाने जाते हैं। इनके

चेहरों पर एक-सी मजबूरी लिखी होती है। मेरा उठना-बैठना इन्हीं लड़कों के साथ है। मैं उससे नफरत करता हूं। मैं उसे सलाम नहीं करता हूं। वह सामने से आए तो मैं अपना रास्ता बदल लेता हूं। उस आदमी के लिए मन में कभी श्रद्धा नहीं हुई और सिर्फ औपचारिकता निभाने के लिए नमस्कार करने को मन तैयार नहीं होता।"

कुशक हैरान-सा राजू के चेहरे की ओर टकटकी लगाकर देखता रहा। राजू का एक-एक शब्द उसका नहीं और किसीका लग रहा था। वह कहता गया, "सदियों से इन लोगों ने जन्मजात श्रेष्ठता के बल पर दूसरों को दास बना रखा है। आज भी उनकी यही मानसिकता है। अगर यह मानसिकता अनपढ़, अशिक्षित आदमी की होती तो कोई बात नहीं थी। पढ़े-लिखे और ऊंचे पदों पर काम करने वाले लोगों का भी रवैया नहीं बदला है। इन लोगों के लिए मन में घृणा, सिर्फ घृणा पैदा होती है।"

कुशक के लिए राजू का यह नया परिचय था। अब तक वह राजू को एक शांत, शरमीला और दब्बू किस्म का लड़का समझता था। उसका अनुमान था कि राजू अपनी गरीबी के कारण, अपने पारिवारिक वातावरण के कारण खुलकर लड़कों से या अपने अध्यापकों से नहीं मिल पाता होगा। अंग्रेजी स्कूलों से निकले हुए और परिवार में अंग्रेजी माहौल में पले हुए लड़के ही अधिकतर मैडिकल कालेजों में आते हैं। राजू उनमें अपने को मिसफिट महसूस करके गुमसुम रहता होगा, इसीलिए प्रोफेसरों से वह अच्छा मेल-जोल नहीं कर पाता होगा। लेकिन अनुमान गलत था। वह बाहर से जितना शांत था, भीतर से उतना ही उग्र था। यह परिवर्तन उसमें कब और कैसे आया, कुशक समझ नहीं पा रहा था।

लेकिन राजू के परिवर्तन के साथ-साथ कुशक के भीतर भी उथल-पुथल होनी शुरू हुई थी। उसके बाद कुशक की प्रेमगीत लिखने की इच्छा नहीं हुई। कोशिश करने पर भी वह उस शब्दावली का उपयोग नहीं कर सका जिसमें आदमी की सुधबुध भुलाने या उसे मीठी नींद सुला देने की क्षमता थी। उसकी कविता हो गई ठेठ, अनपढ़ शब्दों में व्यक्त घृणा और आक्रोश की कविता। उसने उन दिनों 'कुत्ता और ईश्वर' शीर्षक से एक कविता लिखी जो लगभग सभी बड़ी पत्रिकाओं से सधन्यवाद लौट आई

और फिर एक छोटी पत्रिका में छपी और बाद में एक गोष्ठी में भी पढ़ी गई। उस कविता को लेकर पत्र-पत्रिकाओं में खूब चर्चा हुई। कविता थी :—

मेरा एक पालतू कुत्ता
जिसके गले में मेरे नाम का पट्टा
मुझे अपने कुत्ते से बहुत प्यार है।
मैं टुकड़ा दिखाता हूं
वह नाचता है, पूंछ हिलाता है,
उछलकर मेरे हाथ को मुंह में भर लेता है
काटता नहीं।
मैं बाहर जाता हूं
तो छटपटाता है,
घर आता हूं तो गले लग जाता है
मुझे चाटता है, काटता नहीं।
और
मेरा एक पालतू ईश्वर
जिसके नाम का पट्टा—
गले में बांधकर मैं निर्भय विचरता हूं
चोरी, घूस, हत्या, बलात्कार
सब शान से करता हूं
क्योंकि मेरे पट्टे की जंजीर
उसके हाथ में है।
मैं गुनाह करता हूं
वह माफ कर देता है
मैं कमजोर की छाती पर चढ़कर
विजयघोष करता हूं
वह पथरायी आंखों से मुस्करा देता है।
मैं उसकी खोज में भटकता हूं

उसके वियोग में तड़पता हूं
उसे नगर वधू-सा सजाकर
पेट भरता हूं।
मैं ईश्वर को बहुत प्यार करता हूं
मैं अपने कुत्ते को भी बहुत प्यार करता हूं
मैं तुम्हें भी प्यार कर सकता हूं
बशर्ते कि तुम मेरे कुत्ते हो ओ या मेरे ईश्वर हो ओ।

यह कविता लाखों की संख्या में बिकने वाली किसी व्यावसायिक पत्रिका में नहीं छपी, फिर भी पाठकों की प्रतिक्रिया के रूप में उसे अनेक पत्र आए। लेकिन ये पत्र अब तक आए पत्रों की तरह रोमानी वादियों की तलाश में भटकने वाले पाठकों के नहीं, बल्कि उन लोगों के थे जो कविता पढ़कर तिलमिलाए थे। कुछ पत्रों में लेखक की प्रशंसा भी थी किन्तु अधिकांश पत्रों में लेखक के प्रति तीव्र आक्रोश व्यक्त हुआ था। कुछ धमकियों से भरे थे।

डॉ० श्याम मोहन से कुशक का परिचय उस कविता के कारण ही हुआ था। एक दिन कुशक किसी बिल के बारे में कोई बात पूछने के लिए श्याम मोहन के कमरे में गया। श्याम मोहन उस समय अपनी मेज पर सिर झुकाए कुछ पढ़ने में तल्लीन था। कुशक ने देखा, उसकी मेज पर कांच के नीचे दबी हुई उसकी कविता की कतरन थी। जब वह कविता पढ़ चुका तो उसे कुशक की उपस्थिति का भान हुआ। कुशक चूंकि प्रशासन विभाग में था और श्याम मोहन से उसका अधिक काम नहीं पड़ता था, इसलिए श्याम मोहन उसको शक्ल से तो पहचानता था लेकिन नाम से नहीं।

"आप प्रशासन में काम करते हैं न ?" श्याम मोहन ने उन्हें कुर्सी पर बैठने का इशारा करते हुए कहा, "भई, मैं यहां नया-नया हूं। बहुतसे लोगों से मेरा परिचय नहीं है। आपका शुभ नाम···"

"जी, मुझे कुशक कहते हैं," कुशक ने नम्र होकर कहा।

श्याम मोहन कुर्सी से उछलकर खड़ा हो गया।

"यह कविता आपकी है ?"

कुशक भी कुर्सी से उठ गया था, बोला—

"मुझे खेद है कि मेरी कविता ने आपके दिल को चोट पहुंचाई है।"

"चोट पहुंचाई ? आप यह कैसे कह रहे हैं ?" मैंने तो इसकी कतरन कई दिनों से संभालकर रखी है। रोज कम से कम एक बार तो उसे पढ़ता ही हूं। लेकिन हैरत है कि मैं जिस कवि से मिलने के लिए इतने दिनों से परेशान हूं, वह मेरे इतने करीब है और मैं उसे नहीं जानता।"

"अच्छा होता अगर आप न जानते।"

"क्यों ?"

"कवि को क्लर्क की कुर्सी पर देखकर आपकी भावना को ठेस लगी होगी।"

'मैं ठीक उल्टी बात सोचता हूं। इस कविता के लेखक को मैं किसी ऊंची कुर्सी पर बैठा देखता तो साहित्य के प्रति मेरी आस्था भी मर जाती।"

"आपकी साहित्य में आस्था है, यह भी अजीब बात है।"

"क्यों ?"

"सरकारी दफ्तर में दिमाग वैसे ही लाल फीते से बंध जाता है और फिर अर्थशास्त्र के आदमी का साहित्य से क्या काम ?"

"आपका कहना ठीक है लेकिन मैं सरकारी नौकर भी अधूरा हूं और अर्थशास्त्री भी अधूरा। अपने अधूरेपन को भरने के लिए साहित्य और कला के सम्पर्क में आने के सिवा क्या रास्ता है ? ईश्वर को मैंने देखा नहीं, नहीं तो उसके पास जाता।"

कुशक को लगा, श्याम मोहन ने सहज भाव से जो बात कही है वह साधारण नहीं, उसकी उसे बहुत दिनों से तलाश थी। स्वयं उसने कभी यह नहीं सोचा कि वह क्यों लिखता है। यदि श्याम मोहन जैसा पाठक अपने अधूरेपन को भरने के लिए साहित्य पढ़ता है तो लेखक भी अपने अधूरेपन को पूरा करने के लिए लिखता है। वह लिखता है क्योंकि लिखना उसके लिए जरूरी है। इसके बिना वह समूचे रूप से नहीं जी सकता।

कुछ देर सोचकर कुशक बोला—

"डॉक्टर साहब, आप मेरे अफसर न होते तो मैं अभी एक बदतमीजी कर बैठता।"

"मुझसे कुछ गलती हो गई।"

"आपने अभी-अभी जो बात कही है, उसके लिए दिल करता है, आपको चूम लूं।"

"कौन सी बात ?"

"अधूरेपन को पूरा करने की। आप न जाने इसका क्या अर्थ लेते हैं, लेकिन मुझे लगा कि रोशनी का तीर अंधेरे की छाती चीरकर बहुत गहरे धंस गया है। मैं कभी लिखता हूं। काफी दिनों से लिख रहा हूं। लेकिन मैंने कभी नहीं सोचा कि क्यों लिखता हूं या क्यों लिखना चाहिए। आपने मेरे लिखने को अर्थ दिया है।"

"यह तो संयोग की बात है। मैंने आपको अपनी परेशानी बताई, आपको इसमें कुछ काम की चीज मिल गई। अक्सर हमारे साथ ऐसा ही होता है। कभी अचानक किसी पुस्तक में, किसी बातचीत में, किसी घटना में, हमें कोई चीज, कोई विचार मिल जाता है जो हमारी मनःस्थिति में बिलकुल फिट हो जाता है। मैंने जो बात कही थी वह भी न जाने कहां से, किस क्षण में मेरे भीतर समा गई थी। मुझे तुम्हारी कविता में जो मिला वह भी कुछ ऐसी हीं चीज थी जो मेरे अंधेरे मन में रोशनी का तीर बन गई। इसीलिए मैं यह मानने लगा हूं कि हम सब एक-दूसरे के ऋणी हैं। लेकिन मुझे सचमुच बहुत खुशी हुई कि जिस आदमी से मिलने की इच्छा हो रही थी, उससे अचानक भेंट हो गई। चलो, हम चाय के प्याले पर इस परिचय को सेलीब्रेट करेंगे।"

श्याम मोहन कुर्सी से उठ गया था, लेकिन उसे अब भी कुछ संकोच हो रहा था। श्याम मोहन ने उसके हाथ से कागज छीनकर अपनी मेज पर पटके और उसके कन्धे पर हाथ रखकर बोला, "देखो यार, इस दूरी को कम करो वरना हमारी मुलाकात बेकार जाएगी।"

कुशक मुस्कराया। "सोच लो, कवि लोग बहुत बदनाम होते है।"

श्याम मोहन ने जोर का कहकहा लगाया—

"कोई बात नहीं। यही होगा न, तुम रोज कोई कविता मुझे सुनाना चाहोगे। मेरे पास उसकी काट है। मैं भी लिखने लगूंगा।"

दोनों हंसते हुए दफ्तर से बाहर निकले। कैंटीन में कोने वाली मेज

पर जाकर बैठे तो कैंटीन में माचिस की खाली डिबिया उछालकर जुआ खेलने वालों के कहकहे लग रहे थे। वैरा पानी के दो गिलास रख गया और चाय लाने चला गया। श्याम मोहन बोला—

"मुझे अफसोस है कि मैंने इससे पहले आपकी कोई रचना नहीं पढ़ी। क्या-क्या लिखा है ?"

"यह भाषा तो दूरी दूर करने वाली नहीं है।"

"ओह, गलती हो गई। आपकी नहीं, तुम्हारी···"

"सच पूछो तो अभी कुछ भी नहीं लिखा है। कुछ गीत, कुछ गजलें लिखी हैं लेकिन वह सब अब बचपने की बातें लगती हैं।"

"क्यों ?"

"उस लिखने का अब कोई तुक नजर नहीं आता।"

"मेरी समझ में तो तुम्हारी बात आई नहीं। कोई बात गजल में कही जाए या गीत में या किसी और फार्म में, उससे क्या फर्क पड़ता है। मुख्य बात तो यह है कि तुम क्या कह रहे हो।"

"मैं समझता हूं, क्या के साथ-साथ कैसे का भी अपना महत्त्व है और क्यों का भी। लेकिन इन तीनों का एक ही जवाब है कि आपके मूल्य क्या हैं और लगता है मेरे मूल्य बदल गए हैं या बदलना चाह रहे हैं। यह कविता जो आपने पढ़ी, मेरी जिंदगी का बड़ा मोड़ है। इससे पहले मैं उस चीज़ को पाने के लिए लिखता था जो मुझे अच्छी लगती थी। अब मैं उस चीज को नष्ट करने के लिए लिखूंगा जिससे मैं घृणा करता हूं। फर्क गीत, गजल का नहीं है। फर्क है उस शक्ति का जो लिखवाती है। पहले यह शक्ति प्यार थी अब है घृणा।"

"मुझे तो इन दोनों में भी कोई फर्क नहीं आता। एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इन्हें अलग तो किया ही नहीं जा सकता। जो किसीसे प्यार करेगा उसे किसीसे घृणा भी करनी पड़ेगी; जो घृणा करेगा उसे किसीसे प्यार भी करना पड़ेगा। कोई सिर्फ प्यार कर सकता है या सिर्फ घृणा कर सकता है तो मेरी समझ में वह जरूर बीमार होगा।"

"हो सकता है, आपकी बात ठीक हो। मैंने इसपर कभी सोचा नहीं। लेकिन घृणा और प्यार से प्रेरित रचनाओं में फर्क होता है।"

"क्या फर्क होता है ?"

"यही, एक में पाठक को सुलाने, बहलाने की क्षमता होगी और दूसरे में उसे बेदार करने की।'

"यह भी जरूरी नहीं। मानव-प्रेम से प्रेरित होकर लिखी गई रचना मानव-शोषण की शक्तियों के प्रति बेदार भी कर सकती है और अन्याय की घृणा से प्रेरित होने वाली रचना शुद्ध पलायन का रूप लेकर नींद लाने वाली भी हो सकती है। इसका उदाहरण तो हमारे सामने है। हमारे यहां पिछले पच्चीस-तीस वर्षों में ऐसा बहुत लेखन हुआ है जिसके तेवर तो गुस्से और घृणा के हैं लेकिन प्रभाव रोमानियत का। कोई गुस्से में औरत के कपड़े फाड़कर उसे नंगा करे तो उसका प्रभाव क्या होगा ? वही न जो फिल्मों में प्यार के दृश्य का होता है।"

कुशक को कोई उत्तर न सूझा। दरअसल वह सामने बैठे इस आदमी को समझने में असमर्थ था, जो कुछ देर पहले तक उसके लिए बिल्कुल अजनबी था। साहित्य का आदमी न होने पर भी वह साहित्य की बारीकियों का विश्लेषण कर सकता है, यह कितनी अजीब बात है।

रा चाय के बरतन उठाकर, मेज को पोंछ गया। श्याम मोहन ने उसे पैसे दिए। कुशक ने उठते-उठते कहा—

"लगता है, हमारी-आपकी निभेगी नहीं।"

"ऐसा मत कहो। इश्क की इब्तदा में ही जुदाई का रोना ले बैठे।"

"लेकिन मुझे आपसे एक दूरी तो बनाए रखनी पड़ेगी।"

"क्यों ?"

"एक तो आप मेरे अफसर हुए, उसके ऊपर एक अच्छे-खासे समीक्षक भी हैं।"

"नहीं भई, समीक्षक-वमीक्षक कुछ भी नहीं हूं। अपने को पाठक कह सकता हूं और जिज्ञासु विद्यार्थी भी। लेकिन इससे ज्यादा कुछ नहीं। अर्थशास्त्र का विद्यार्थी रहा हूं। हर चीज को अर्थशास्त्र की नजर से देखने की आदत हो गई है। साहित्य में भी मैं अर्थशास्त्र को ढूंढ़ता हूं। मुझे इससे एक अजीब अर्थशास्त्र दिखाई देता है। मिसाल के लिए एक अच्छा लेखक पाठकों की मांग देखकर साहित्य नहीं लिखता, फिर भी वह पाठक कीबहुत

बड़ी जरूरत को पूरा करता है। इसीलिए साहित्य की कसौटी मैं इसे मानता हूं कि वह आदमी की कितनी महत्त्वपूर्ण जरूरत को पूरा करता है। अगर वह सिर्फ मनोरंजन की जरूरत को पूरा करता है तो उसमें और मदारी के तमाशे में कोई फर्क नहीं होगा। यदि वह सिर्फ सेक्स की हमारी सहज भूख की परोक्ष तृप्ति करेगा, तो उसका स्थान बाजारू नाच, नाटक या घटिया फिल्म से ऊंचा नहीं होगा। असाधारण पात्रों के असाधारण कथानक से वह पाठक में मात्र कौतुहल, चमत्कार और विस्मय की सृष्टि करेगा, तो उसका स्तर जादू के खेल जितना होगा। अगर वह शब्दों, प्रतीकों या अन्य वाग्जाल में पाठक को उलझाकर मात्र बौद्धिक व्यायाम कराएगा तो वह गणित की पहेली जितना महत्त्व प्राप्त करेगा। वह पाठक को अपनी परिस्थितियों से विमुख करके स्वप्न-लोक की तरफ ले जाएगा तो वह अफीम, चरस या नींद लाने वाली गोलियों के समकक्ष होगा। लेकिन सृजन की आवश्यकता की पूर्ति करेगा तो मैं उसे सही साहित्य कहूंगा, क्योंकि सृजन मनुष्य-जीवन की सर्वोत्तम क्रिया है। उसके बिना मनुष्य, मनुष्य नहीं बनता।"

"और अधूरेपन को भरने की बात···"

"यही तो है। मनुष्य सृजन नहीं करेगा, तो अधूरा रहेगा।"

"डाक्टर साहब, आपका सृजन भी तो अच्छी-खासी पहेली है।"

"पहेली तो है, लेकिन यह हमारी नित्य प्रति की, हर घड़ी और हर लम्हे की क्रिया है। अपनी परिस्थितियों पर सकारात्मक ढंग से क्रिया करना ही मेरे विचार से सृजन है। लेकिन हर आदमी सृजन नहीं कर सकता। उसके लिए कलाकार, साहित्यकार या अन्य सर्जक को सृजन करना पड़ता है ताकि पाठक उसकी परोक्ष अनुभूति प्राप्त करके अपनी सृजन-सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति करे।"

"यह क्या झमेला ले बैठे डाक्टर साहब! इससे तो अच्छा था कि आप कविता करने लगते।"

"नहीं। कविता करने की क्षमता होती, तो चिंता ही क्या थी! हां, रोज सुबह-शाम चाय के प्याले पर कुछ ट्रेनिंग दो तो कविता करने लग जाऊंगा।"

कुशक और श्याम मोहन दफ्तर के बरामदे में आ चुके थे। हाल में आते ही कुशक अपनी सीट की तरफ चला गया और श्याम मोहन अपने कमरे की ओर बढ़ गया।

पांच

श्याम मोहन से परिचय होने के बाद रेखा को खोया हुआ आत्मबल लौट आया। परिस्थितियों के आगे हथियार डालकर एक बेमानी जिंदगी बिताने की मनःस्थिति को छोड़कर उसने एक बार पुनः परिस्थितियों से लड़ने का इरादा किया। श्याम मोहन को एक मित्र, मार्गदर्शक तथा हितैषी के रूप में पाकर उसका निराशाभाव समाप्त हो गया और जिंदगी में कुछ बनने, कुछ कर दिखाने की आकांक्षाएं जाग उठीं। दफ्तर के बाद प्रायः हर रोज वह दो-अढाई घंटे श्याम मोहन के साथ बिताती, कभी किसी रेस्तरां में, कभी श्याम मोहन के माडल टाउन स्थित मकान में। शादी की बात उसके बाद न श्याम मोहन ने की और न रेखा ने, लेकिन दोनों के मन में यह बात लगभग तय हो चुकी थी कि शादी जब भी होगी, साथी का चुनाव वही रहेगा।

शादी में सबसे बड़ी बाधा थी रेखा का परिवार। हालांकि रेखा को उससे कुछ भी लगाव नहीं रहा था। हर शाम घर पहुंचने पर उसे मां की तीखी बातें सुननी पड़ती थीं। पिता मुंह फुलाए रहते थे और दोनों भाई कालेज की फीस और महीने के जेबखर्च से ज्यादा सरोकार उससे नहीं रखते थे। फिर भी रेखा किसी नैतिक भावना से उस परिवार के साथ बंधी हुई थी। श्याम मोहन के साथ हर रोज घंटा-दो घंटे बिताना उसके लिए बहुत जरूरी होता था और उसके कारण जब उसे घर पहुंचने में देर होती तो मां की अनाप-शनाप बातें सुननी पड़ती थीं। रेखा ने श्याम मोहन के बारे में घरवालों को साफ-साफ बता दिया था। श्याम मोहन कई बार उसके घर भी आ चुका था। इसके बावजूद मां श्याम मोहन के साथ उसके घूमने-फिरने पर टीका-टिप्पणी करती थी और कभी-कभी भाई भी मां का साथ

देते थे। इस तनाव की स्थिति से छुटकारा पाने के लिए वह कई दिनों से योजना बना रही थी और वर्किंग गर्ल्स होस्टल में किसी कमरे के खाली होने की प्रतीक्षा कर रही थी। जब वहां कमरा मिल गया तो उसने घर छोड़ दिया और होस्टल में रहने लगी। घर के खर्च और भाइयों की फीस आदि के लिए वह रुपये घर देती रही।

एक दिन रेखा ने रिसर्च दोबारा शुरू करने का इरादा श्याम मोहन के आगे प्रकट किया। श्याम मोहन ने उसमें विशेष उत्साह नहीं दिखाया। रेखा को इससे निराशा हुई, बोली—"मैं इस टाइपिस्ट की नौकरी में कब तक रहूंगी?"

श्याम मोहन ने मुस्कराकर उसकी तरफ देखा और कहा—"यह तो तुम्हारे ऊपर निर्भर करता है। तुम चाहो तो आज ही इस नौकरी को छोड़ सकती हो।"

"छोड़कर और क्या करूंगी?"

"करने की जरूरत क्या है? मुझे इतना वेतन तो मिल ही जाता है कि दोनों का गुजारा हो जाए और तुम्हारे घरवालों की जरूरत भी पूरी हो जाए।"

"तुम्हारा मतलब शादी···"

"इसमें क्या बुराई है?"

"श्याम, तुम समझते नहीं हो। शादी कोई मामूली चीज नहीं है। जिंदगी की बहुत बड़ी छलांग है। एक किनारा छोड़कर दूसरे किनारे पर खड़े होने की बात है। संबंधों के इस पूरे बदलाव के लिए मन को तैयार करना पड़ता है।"

"क्या मन में अब भी शुबह बाकी है?"

"शुबह की बात नहीं है श्याम, लेकिन शादी···? इसका मतलब है बंधन, कैद। औरत की जिंदगी का एक बहुत बड़ा पड़ाव, जहां जिंदगी ठहर जाती है।"

"लेकिन इस पड़ाव पर एक दिन तो पहुंचना ही पड़ता है।"

"मानती हूं, पहुंचना पड़ता है। लेकिन जितनी देर से पहुंचा जाए उतना अच्छा। वैसे यह एक घिसा-पिटा विचार है कि औरत की सार्थकता

शादी में है।"

"सार्थकता की बात नहीं करता हूं। सार्थक जिंदगी जीने के लिए विवाह को मैं भी अनिवार्य नहीं मानता हूं। पुरुष के लिए भी नहीं और स्त्री के लिए भी नहीं। लेकिन अविवाहित जीवन बिताना कठिन जरूर होता है। देह की अपनी मांग होती है।"

"देह की मांग पूरी करने का क्या यही एक रास्ता है?"

"रास्ता तो और भी है लेकिन उसपर चलना हर आदमी के बस का नहीं है।"

"हर आदमी के रास्ते से हटकर भी तो चला जा सकता है।"

"मैंने कहा न, उसके लिए बड़े साहस की जरूरत होती है।"

"रास्ता ठीक हो तो साहस जुटाया जा सकता है।"

"लेकिन मजबूरी हो, तब तो यह रास्ता अपनाने में कोई हर्ज नहीं। महज फैशन के लिए यह सब करने में क्या तुक है?"

"मैं फैशन के लिए नहीं कह रही हूं।"

"मुझे तो यह तुम्हारी फैशन की बहक ही लगती है, वरना ऐसा कौन-सा काम है जिसे तुम शादी के बाद नहीं कर सकतीं? अपने परिवार में मैं अकेला प्राणी हूं। मां बड़े भाई के पास गांव में रहती हैं। शादी में किसी रिश्तेदार को नहीं बुलाऊंगा। अदालत में शादी कर लेंगे। उसके बाद तुम होस्टल में अलग रहना चाहो तो वहां भी रह सकती हो और मेरे साथ रहना चाहो तो और भी अच्छा। कम-से-कम हम खुलकर एक-दूसरे से मिल तो सकेंगे। इस वक्त तो लाख प्रोग्रेसिव होने पर भी हमें चोरों की तरह मिलना पड़ता है।"

"श्याम, मैं जानती हूं कि शादी के बाद भी तुम मुझे पूरी आजादी दोगे, लेकिन मैं अपनी कमजोरी जानती हूं। मैं वह सब नहीं कर सकूंगी जो करना चाहती हूं। जब मैं परिस्थितियों के आगे आत्मसमर्पण करके अपनी सारी आकांक्षाओं को छोड़ चुकी थी, उस वक्त तुम शादी का प्रस्ताव रखते तो मैं तुरंत मान लेती। लेकिन तुम्हारे परिचय ने, मेरे भीतर सोई आकांक्षाओं को जगा दिया है। अब मैं कुछ करना चाहती हूं, कुछ बनना चाहती हूं। यह इसलिए भी जरूरी है कि मैं बराबरी के धरातल से तुम्हें

छू सकूं।"

"अगर यही बात है तो मैं तुम्हारे लिए उम्र-भर प्रतीक्षा कर सकता हूं।"

"नहीं, नहीं, उम्र-भर की बात न कहो। मैं तुमसे दो या ज्यादा-से-ज्यादा तीन साल मांगूंगी।"

"और इन दो या तीन सालों में तुम क्या करना चाहती हो, कुछ सोचा है?"

"सोचा नहीं है। मुझे तुम्हारा मार्गदर्शन चाहिए।"

"लेक्चरर बनना है?"

"तुम ठीक समझो तो।"

"मेरे ठीक समझने की बात छोड़ो। मैं तो हर तरह की नौकरी के खिलाफ हूं। मेरी दृष्टि में तो यह सारी व्यवस्था आदमी के ससम्मान जीने के लिए उपयुक्त नहीं है। यूनिवर्सिटी हो, सरकारी दफ्तर हो या दूसरा कोई क्षेत्र, यहां नौकरी करने का मतलब है एक सड़ी व्यवस्था का अंग बनकर जीना। मैं तो इस व्यवस्था को ही तोड़ना चाहता हूं।"

"सदियों से स्थापित इस व्यवस्था को तुम अकेले तोड़ सकते हो? चट्टान को टक्कर मारने से क्या फायदा?"

"फायदा न सही। यह संताप तो नहीं होगा कि मैंने इस व्यवस्था का पोषण किया।"

"क्या व्यवस्था में रहते हुए उसे नहीं बदला जा सकता?"

"मेरा इसपर से विश्वास उठता जा रहा है।"

"लेकिन कोशिश करने में क्या हर्ज है? खासकर तब जब दूसरे रास्ते से कोई उम्मीद नहीं दिखाई दे रही हो।"

"ठीक है। लेकिन कोशिश ही करनी है तो ऐसी जगह के लिए करो जहां तुम बहुत कुछ कर सकने की स्थिति में आ जाओ।"

"ऐसी कौनसी जगह है?"

"तुम आई० ए० एस० की परीक्षा दो। एक बार आई० ए० एस० बन गई तो एक दिन तुम यूनिवर्सिटी की वाइस चांसलर, यू० जी० सी० की चैयरमैन या शिक्षा सचिव बन सकती हो। उस वक्त तुम चाहो तो कई

अच्छे काम भी कर सकोगी।"

"मजाक न करो श्याम। लेक्चरर तो बन नहीं सकी, आई० ए० एस० बन जाऊंगी!"

"मजाक नहीं कर रहा हूं। लायब्रेरी में किताबें तो तुम्हें मिल ही जाएंगी। ज्यादा नहीं, ब्रिटानिका सरसरी पढ़ डालो। शाम को दो घंटे किसी एकेडेमी में कोचिंग क्लास में चली जाना। किसी रिटायर्ड बड़े अफसर की दुकान में। फीस डटकर लेते हैं लेकिन आई० ए० एस० के नुस्खे सिखा देते हैं। छः महीने की कोचिंग के लिए अढ़ाई हजार रुपये देने पड़ेंगे। पैसे की चिंता मत करो, फीस मैं चुका दूंगा।"

रेखा को अब भी यह सब मजाक ही लग रहा था। श्याम मोहन से विदा लेकर जब वह अपने होस्टल के कमरे में आई तब भी उसके मन में वही बात घूम रही थी। रातभर उसे यह बात परेशान करती रही। उसे अच्छी नींद भी नहीं आई। दूसरे दिन वह अपने दफ्तर पहुंची तो उसकी मेज पर संघ लोक सेवा आयोग के विज्ञापन की कतरन थी। साथ में श्याम मोहन का पत्र था, लिखा था, "परसों फार्म देने की आखिरी तारीख है। फ़ार्म भर दो। बाकी बंदोबस्त कर रहा हूं।"

दूसरे दिन श्याम मोहन ने ज़बर्दस्ती फार्म भरवाकर भिजवा दिया। सुब्बाराव की एकेडेमी में तीन महीने की अग्रिम फीस भी दे दी। रेखा को परीक्षा की तैयारी में जुटना पड़ा।

उसकी दिनचर्या इतनी व्यस्त हो गई कि उसे विगत दिनों की घटनाओं और तनावों के बारे में सोचने की फुर्सत ही न मिलती। सवेरे जल्दी उठकर और नहाने-धोने से फारिग होकर अढ़ाई-तीन घंटे पढ़ने के लिए निकालने पड़ते। दफ्तर में जब भी समय मिलता, ब्रिटानिका या दूसरे संदर्भ ग्रंथों से नोट लेती। शाम को साढ़े पांच बजे से साढ़े आठ बजे तक एकेडेमी में जाती। वहां से होस्टल पहुंचती तो बहुत थक जाती, फिर भी एक-आध घंटा पत्र-पत्रिकाएं देखने के लिए समय निकालती। श्याम मोहन से सिर्फ टेलीफोन पर बात होती। लेकिन छुट्टी का पूरा दिन वह श्याम मोहन के साथ बिताती।

इतनी व्यस्तता के बावजूद, होस्टल का जीवन उसे रास आ रहा था।

आने-जाने की पाबंदी के अलावा, किसी तरह की दखलंदाजी नहीं थी। वह क्या करती है, कहां जाती है, किससे मिलती है आदि बातों से किसी-को कोई सरोकार नहीं था। कई कमरों में दो-दो, तीन-तीन लड़कियां मिलकर रहती थीं। रेखा ने अलग कमरा ले रखा था, इसलिए होस्टल की दूसरी लड़कियों से उसका परिचय हेलो-हेलो तक सीमित था। अल-बत्ता होस्टल की वार्डन मिसेज खन्ना जब भी दिखाई पड़ती, दो-चार मिनट के लिए उसे रोक लेती। अक्सर औपचारिक बातें ही होतीं, जैसे पढ़ाई कैसे चल रही है, दफ्तर का क्या हाल है, कोई प्राब्लेम तो नहीं, वगैरह-वगैरह···। वेश-भूषा, बनाव-शृंगार में आधुनिक, पैंतालीस के आस-पास अवस्था, चेहरे, बाजू, गर्दन और पेट की त्वचा की शिथिलता साफ दिखने पर भी शरीर स्वस्थ, सुडौल, आवाज में अधनींदी अवस्था की थकान या मिठास, कुल मिलाकर मिसेज खन्ना रेखा को अच्छी लगती थी। होस्टल में वह भी अकेली ही रहती थी। रेखा ने कभी उससे पूछने की जरूरत नहीं समझी कि वह विवाहित है, अविवाहित या तलाकशुदा।

एक दिन शाम को कोचिंग क्लास खत्म करके रेखा साढ़े नौ बजे के लगभग लौटी। दरवाजा खोलने लगी तो उसकी नजर कोने में सिमटी हुई एक लड़की पर पड़ी। उसने ललिता को पहचान लिया। कुछ दिन पहले वह होस्टल में आई थी और दो अन्य लड़कियों के साथ रेखा के बगल वाले कमरे में रह रही थी। किसी दफ्तर में उसे टाइपिस्ट की नौकरी मिली थी और वह उस नौकरी से खिंची हुई सैकड़ों मील दूर केरल में अपने माता-पिता, भाई-बहिन को छोड़कर दिल्ली आई थी। गहरे सांवले रंग की ललिता की घनी पलकों और कमर के निचले भाग को छूने वाले लंबे बालों ने रेखा को आकृष्ट किया था। कुछ क्षण बातें करने के बाद उसे वह लड़की और भी प्यारी लगी थी। उसकी आंखों में बचपन की चमक और चेहरे पर मासूमियत को देखकर रेखा ने सोचा था कि यह लड़की अपने घर से इतनी दूर अकेली काम करने कैसे चली आई। हिन्दी बोल लेती थी लेकिन दक्षिण भारतीय लोच के साथ, जो उसकी जबान पर बहुत अच्छी लगती थी।

कोने में सिमटी ललिता को देखकर रेखा को आश्चर्य हुआ, बोली—

"ललिता, तुम यहां क्यों खड़ी हो ?"

ललिता चुप रही। साड़ी के पल्लू से आंखें पोंछकर वह रेखा की तरफ देखती रही।

"क्या बात है ? कुछ बताओ तो।"

वह फिर भी चुप रही। रेखा ने कमरे का दरवाजा खोला और रेखा के कंधे पर हाथ रखकर उसे कमरे के अंदर ले आई।

कमरे में आते ही वह सुबकने लगी। रेखा ने उसे अपने पलंग पर बिठाया और खुद भी उसके साथ पलंग पर बैठ गई। कंधे पर हाथ रखकर उसने ललिता को अपने से सटा लिया और पूछा—

"क्या हुआ ? किसीने कुछ कहा तुम्हें ?"

उसकी हिचकी बंध गई। फिर कुछ रुककर बोली—

"दीदी, प्लीज, मुझे अपने रूम में रख लो।"

रेखा ने उसे ढाढस बंधाते हुए कहा—

"वह तो हो जाएगा, लेकिन यह तो बताओ क्या हुआ ? उन लड़कियों से झगड़ा हुआ ?"

उसने ना में सिर हिला दिया।

"तो फिर···"

"मेरी नौकरी छूट गई।"

वह फिर हिचकियां भरने लगी। रेखा की समझ में कुछ नहीं आया। अभी उसकी नौकरी लगे एक महीना भी तो नहीं हुआ। ऐसे कैसे नौकरी छूट गई ?

"नौकरी छूट गई तो क्या हुआ ? दिल्ली में और नौकरी नहीं मिलेगी ! लेकिन तेरी नौकरी अभी-अभी तो लगी थी।"

"हां दीदी, लगी तो अभी-अभी थी। लेकिन मेरा आफिसर कहता है, मैं टर्मिनेट हो रही हूं, मेमो कल तक मिल जाएगा।"

"कौन है तेरा अफसर ? किस दफ्तर में हो तुम ?"

"सोशल वेलफेयर का एक दफ्तर है।" मेरे आफिसर मिस्टर धीर कई दिनों से मुझे घर चलने के लिए कह रहे थे। मैं नहीं गई, तो दो बार यहां होस्टेल में मुझसे मिलने आए। मैंने चौकीदार को कह दिया था कि

कोई मिलने आए तो कह देना, मैं नहीं हूं। वो मुझे फिल्म दिखाना चाहते थे। आज कहने लगे, पहली तारीख से मेरी नौकरी खत्म हो रही है।"

रेखा समझ गई कि कोई कमीना अफसर उसकी लाचारी और भोलेपन का फायदा उठाना चाहता है। उसने कहा—

"तुम बेवकूफ हो। उसने कहा और तुमने मान लिया। सरकारी नौकरी है, यूं ही कोई छीन सकता है! छोड़ो, भूल जाओ उसकी बात। बैठो, मैं तुम्हें कॉफी पिलाती हूं।"

उसने कमरे में रखा बिजली का स्टोव चलाकर कॉफी के लिए दूध चढ़ा दिया। अलमारी खोलकर देखा कि खाने के लिए क्या है। सुबह की आधी डबलरोटी थी। मक्खन भी था और तीन अंडे भी। सामान निकालकर मेज पर रखा और कपड़े बदलने के लिए बाथरूम में चली गई। दस-बारह मिनट में ही वह बाथरूम से निकल आई। देखा, ललिता ने टोस्ट सेंक दिए हैं और उनपर मक्खन लगा रही है। कॉफी का दूध गरम हो गया है।

"अरे! तुम यह करने क्यों लग गईं?"

"क्या हुआ···? यूं ही तो बैठी थी।"

"अच्छा, मैं ग्रामलेट बनाती हूं। तू कॉफी बना। साउथ इंडियन कॉफी बहुत अच्छी बनाते हैं।"

"लेकिन दीदी, मुझे यह कॉफी बनानी नहीं आती। हम लोग तो उबालकर बनाते हैं। नेसकैफे बनानी नहीं आती। मैं आमलेट बनाती हूं।"

उसने रेखा के हाथ से चम्मच कटोरी ले ली और अंडे फेंटने लगी। रेखा कॉफी-चीनी-दूध कप में डालकर घोटने लगी। ललिता ध्यान से उसकी ओर देखती रही और अपना काम भी करती रही।

"क्या नाम बताया तुमने अपने दफ्तर का?" रेखा कॉफी को घोटते हुए बोली।

"सोशल वेलफेयर डिपार्टमेंट···"

"और मिस्टर धीर क्या हैं?"

"डिप्टी डायरेक्टर हैं। सीनियर आफिसर हैं लेकिन कोई भी लड़की उन्हें अच्छा नहीं कहती।"

"देखने में कैसे हैं?"

"अच्छी-खासी उम्र है। बाल पक गए हैं। चेहरा देखने से लगता है वर्षों से बीमार हैं, लेकिन नीयत गंदी है।"

"कुंवारे हैं?"

"नहीं। पत्नी किसी दूसरे शहर में है। अच्छी नौकरी पर। बच्चे भी उनके साथ हैं।"

"तभी तो। बेचारा भूखा है। जहां हरी घास दीखती है, लपक पड़ता है।"

कॉफी का प्याला ललिता के आगे बढ़ाते हुए रेखा ने मुस्कराकर उसकी ओर देखा और कहा—

"एक दिन चली जाती उसके साथ सिनेमा देखने। अरे···यह टोस्ट भी तो लो···"

"नहीं, मैं तो खाना खा चुकी हूं।"

"तो क्या हुआ? साथ देने के लिए तो लो।"

ललिता ने एक टोस्ट उठा लिया।

"दीदी, सचमुच नौकरी छूट गई तो मैं क्या करूंगी?"

"तू पगली है। कैसे छूट जाएगी नौकरी! मैं कल मि० धीर से बात करूंगी।"

"दीदी, आप जानती हैं उनको?"

"जानती नहीं हूं लेकिन इतना तो समझ गई हूं कि वह किस तरह का आदमी है और उसका क्या इलाज है। कल से वह तुम्हें तंग नहीं करेगा।"

रेखा खाली कप-प्लेट समेटने लगी तो ललिता ने पूछा—"मैं आ जाऊं आपके कमरे में?"

रेखा बोली—

"मैंने कहा न···तुम्हारी नौकरी नहीं जाएगी।"

ललिता ने अनुनय के स्वर में कहा—

"मैं अपने हिस्से का किराया दे दूंगी।"

रेखा ने उसके चेहरे पर नजर जमाकर उसके मन को पढ़ना

चाहा—

"तुम्हें कोई तकलीफ है अपने कमरे में?"

ललिता ने झिझकते हुए कहा—

"तकलीफ तो नहीं, लेकिन वो लड़कियां अच्छी नहीं हैं।"

"अच्छी नहीं हैं?" रेखा की उत्सुकता जागी, "क्या करती हैं?"

"पता नहीं क्या-क्या करती हैं। कभी रात-रात-भर गायब रहती हैं। बड़े-बड़े होटलों और क्लबों की बातें करती हैं।"

"काम क्या करती हैं?"

"पता नहीं···बताती तो यही हैं कि किसी दफ्तर में हैं।"

"रात को बाहर कैसे जाती हैं? मैडम मना नहीं करती?"

"मैडम से पूछकर जाती हैं।"

ललिता ने बात इतने विश्वास के साथ कही थी कि रेखा भौचक्की-सी उसकी ओर देखती रही। उसके सामने मिसेज खन्ना का मेकअप से लदा चेहरा उभर आया। नशे में डूबी, अलसाई हुई-सी आवाज, अधेड़ उम्र के बावजूद चलने-फिरने और बात करने में एक अल्हड़पन। इसके साथ ही उसे याद आया उस खद्दरधारी व्यक्ति का चेहरा जो साठ की अवस्था के करीब होने पर भी टमाटर की तरह लाल था। सिर के बाल लगभग सारे के सारे पक चुके थे लेकिन शरीर में बुढ़ापे के कोई आसार नहीं थे। जिस दिन वह होस्टेल में दाखिल होने आई थी, वह व्यक्ति मिसेज खन्ना के आफिस से लगे कमरे से निकला था। उसकी आंखें लाल हो रही थीं और पांव लड़खड़ा रहे थे। महीन खद्दर का कलफ लगा हुआ कुरता और पाजामा पहने वह व्यक्ति उसे मिसेज खन्ना का पिता या ससुर लगा था। फिर उसने सोचा था कि उसका पति होगा क्योंकि जिस बेतकल्लुफी से उसने मिसेज खन्ना से बातें की थीं, उससे पिता या ससुर होने की सारी संभावनाएं दूर हो जाती थीं। उस व्यक्ति को रेखा ने उसके बाद भी कई बार वक्त-बेवक्त होस्टल में आते देखा था और हर बार रेखा के मन में उसके विषय में कई तरह के सवाल उठे थे। लेकिन उसने किसीसे पूछताछ करने की जरूरत नहीं समझी थी।

ललिता की कहानी ने रेखा को विचलित कर दिया था। उसने

ललिता से पूछा—

"तुम उस खद्दरधारी बुड्ढे के बारे में कुछ जानती हो जो मिसेज खन्ना से मिलने आता है ?"

"मैं कुछ नहीं जानती। लेकिन मेरी रूममेट वतनी कहकर उसका जिक्र कई बार करती हैं।"

रेखा ने ललिता को सामान लाने के लिए कह दिया। ललिता की रूममेट बाहर गई हुई थीं। फोल्डिंग खाट, हल्का-सा बिस्तर, एक सूटकेस और कुछ फुटकर सामान, ललिता ने रेखा के कमरे में जमा दिया। रेखा के प्रति आभार प्रकट करते हुए उसने कहा—

"दीदी, मैं आपका एहसान कभी नहीं भूलूंगी। आज मैं इतनी दुखी थी कि आत्महत्या करने की इच्छा हो रही थी।"

"छि: छि:···" रेखा ने उसे झिड़का, "आत्महत्या का नाम मत लेना। आत्महत्या करें हमारे दुश्मन !···अच्छा, अब सो जाओ। सुबह जल्दी उठना होता है। तुम कितने बजे उठती हो ?"

"साढ़े पांच तक तो उठ ही जाती हूं।"

"ठीक है, मुझे भी जगा देना। वैसे मैं साढ़े पांच का ही अलार्म रखती हूं लेकिन कभी-कभी अलार्म भी नहीं सुनाई देता।"

कमरे की बत्ती बुझाकर दोनों अपने-अपने बिस्तर पर लेट गईं लेकिन नींद में डूब जाने से पहले शायद काफी देर तक दोनों को अपने-अपने सवालों से जूझना पड़ा।

रेखा को उस रात ठीक से नींद नहीं आई। कुछ देर के लिए झपकी-सी आती फिर जाग जाती और मिसेज खन्ना तथा वतनी के बारे में सोचने लगती। जबर्दस्ती मन को उस खयाल से हटाकर नींद का ध्यान करती लेकिन हल्की-सी झपकी के बाद फिर नींद टूट जाती। इसी तरह रात बीत गई। सुबह साढ़े पांच बजे अलार्म बजने से बहुत पहले वह बिस्तर से उठ गई थी। उसकी इच्छा हो रही थी कि बत्ती जलाकर चाय बनाए, फिर नहा-धोकर कुछ पढ़े। ललिता की नींद टूटने के डर से उसने बत्ती नहीं जलाई और बिस्तर में पड़े-पड़े सुबह का इंतजार करती रही। अलार्म बजा तो उठकर बत्ती जलाई। ललिता बच्चे की तरह बेफिक्र सो रही

थी। उसके लंबे बाल सिरहाने से नीचे लटककर फर्श पर छितराए हुए थे। उसके चेहरे पर हल्की-सी मुस्कान देखकर रेखा ने अनुमान लगाया कि उसे अच्छी नींद मिली है। ललिता को जगाना उसने ठीक नहीं समझा। स्टोव जलाकर चाय का पानी रखा और कमरे की बत्ती बुझाकर बाथरूम चली गई। नहाकर आई तो ललिता उठ गई थी।

"अरे, तुम इतनी जल्दी क्यों उठ गई?" रेखा ने कहा।

"रोज साढ़े पांच बजे उठ जाती हूं। उस कमरे में तो यह भी प्राब्लेम था। मैं उठ जाती थी तो उनको बुरा लगता था। वो तो आठ-नौ बजे तक सोती थीं।"

उसने चाय बनाकर रेखा को दी। फिर अपना प्याला हाथ में लेते हुए बोली—

"दीदी, जैसे भी हो। आज मैडम से कहकर मुझे अपने कमरे में ट्रांसफर करा लेना।"

"फिक्र मत करो, मैं बात कर लूंगी।" कहकर रेखा ने चाय का आधा प्याला एक तरफ रखा और अपने रैक से एक पुस्तक निकालकर मेज पर रखी और फिर चाय का प्याला हाथ में लिए-लिए कमरे का चक्कर लगाने लगी। उसके चेहरे से, उसकी क्रियाओं से लग रहा था कि उसके मन में कुछ दूसरी बात घूम रही है।

कुर्सी से पीठ टिकाकर वह पुस्तक पढ़ने लगी लेकिन मन पुस्तक में नहीं था। सामने बैठी ललिता का वह बीमार अफसर जो नौकरी का डर दिखाकर उसे अपना खिलौना बनाना चाहता था, उसके मस्तिष्क पर छाया हुआ था। क्या इस समाज में कहीं ऐसी जगह नहीं बची है, जहां लोग दिल-दिमाग से स्वस्थ हों और जहां काम करने वाली लड़की को भोग की वस्तु मानने वाले या भय अथवा लालच दिखाकर उसके साथ अभद्र व्यवहार करने वाले पुरुष न हों?

उसे याद आया कि यूनिवर्सिटी के दूषित वातावरण को छोड़ने के बाद उसे नौकरी ढूंढते समय कैसे-कैसे लोगों से पाला पड़ा था। रेडियो स्टेशन में कैजुवल आर्टिस्ट के लिए दो बार इंटरव्यू देने के बाद उसका चुनाव नहीं हुआ तो एक हितैषी ने उसे मिस्टर दत्ता से मिलने का मशविरा

दिया था जिनके, बारे में प्रसिद्ध था कि उनके कमर में कोई महिला जाती थी तो कमरे के बाहर लाल बत्ती जल उठती थी। टेलीविजन की दुनिया तो फिल्मी दुनिया का फूहड़ रूप है जहां हर लड़की को चालू एक्स्ट्रा मान लिया जाता है। स्कूल की नौकरी करने का विचार उसने उसी समय छोड़ दिया था जब अखबार में एक बड़े अधिकारी के बारे में पढ़ा था कि वह शहर के बाहर एक रेस्ट हाउस में अध्यापिकाओं को बुला-कर छुट्टी आदि के मामले निपटाया करता था। गर्ज इस बीमार समाज में औरत की हैसियत गुड़ की डली की है। वह जहां भी जाएगी, उसके आसपास मक्खियां भिनभिनाएंगी।

लेकिन ललिता की रूममेट क्या करती हैं, क्यों करती हैं? उनकी क्या मजबूरी है? मजबूरी है या और कुछ? और मिसेज खन्ना···वतनी···? यह सब क्या है?

वह गोद में रखी पुस्तक देख रही थी, पढ़ भी रही थी, पन्ने भी पलट रही थी लेकिन मन उसका इन्हीं सवालों में उलझा हुआ था।

साढ़े सात बजे तक वह अपने कमरे में बैठी पुस्तक पढ़ने का अभिनय करती रही। फिर वह कमरे से निकली। आठ बजे से पहले नाश्ता मिलने की कोई संभावना नहीं थी, इसलिए मेस की तरफ जाने के बजाय वह लॉन में टहलने लगी। लॉन के कोने में होस्टल की वार्डन मिसेज खन्ना का निवास-स्थान था। मिसेज खन्ना अपने मकान के बाहर लगी फूलों की क्यारी को निहारती हुई टहल रही थी। रेखा को देखकर वह उसकी तरफ चलने लगी। रेखा भी उसकी तरफ बढ़ी। बीच में दोनों मिलीं तो रेखा ने नमस्ते की।

"कहो रेखा···क्या हाल-चाल हैं?"

"ठीक हैं दीदी!"

"कैसी चल रही है तुम्हारी पढ़ाई?"

"पढ़ाई कहां दीदी···वक्त ही नहीं मिलता।"

"वक्त नहीं मिलता? कमरे में तो घुसी रहती हो। आज कितने दिनों बाद दिखाई दी हो!"

"कल रात बहुत थक गई थी। मेस में जाने की हिम्मत नहीं हुई। दो

पीस डबलरोटी के खाकर सो गई थी। बहुत भूख लगी है लेकिन मेस खुलने में अभी आधा घण्टा है।"

"चलो, मेरे कमरे में चलो। नाश्ता वहीं मंगाय देती हूं।"

"क्या जरूरत है ? अब तो मेस खुलने ही वाला है।"

"आओ तो···"

मिसेज खन्ना उसे हाथ पकड़कर कमरे की तरफ ले जाने लगी। रेखा उसके साथ-साथ चलने लगी।

सुरुचिपूर्ण ढंग से सजे ड्राइंगरूम में रेखा को बिठाकर मिसेज खन्ना दूसरे कमरे में गई और नौकर को चाय-नाश्ता लाने के लिए कहकर लौट आई। रेखा के साथ धम् से सोफे पर बैठते हुए वह रेखा पर झुकी और उसे आलिंगन में भरकर बोली—

"हाय रेखा, तुम आज कितनी सुंदर लग रही हो !"

रेखा को हंसी आ गई। गुदगुदी भी हुई, विशेषकर उस क्षण जब मिसेज खन्ना ने अपने गालों से उसके गाल सटा लिए और धीरे से होंठों को भी छुआ दिया। रेखा अपने को छुड़ाते हुए बोली—

"दीदी, आपका जवाब नहीं है। होस्टल की जिन्दगी में भी आप अपने को खुश बनाए रखती हैं। यह सचमुच कमाल की बात है !"

"इसमें कमाल-वमाल कुछ नहीं है रेखा," मिसेज खन्ना बोली, "यह तो अपने हाथ में है। मन को खुश रखो तो खुश और बिना बात के बिसूरने लगो तो उसका भी कोई अंत नहीं।"

"आपको बच्चों की याद नहीं आती ?"

"आती क्यों नहीं ! लेकिन दोनों मजे में हैं। लड़की शिमला में होस्टेल में रह रही है और लड़का रांची में पढ़ रहा है। छुट्टियों में आ जाते हैं।"

"और पति···"

रेखा ने सवाल पूछ तो लिया, लेकिन फिर सोचा यह सवाल नहीं पूछना चाहिए था। लेकिन मिसेज खन्ना ने प्रश्न को सहज भाव से लिया और बोली—

"पति-वति अब कोई नहीं है। तलाक लिए बरसों हो गए। अब उस

संज्ञा के प्राणी की जरूरत भी महसूस नहीं होती।"

अपनी बात पर वह खुद ही हंस दी। रेखा को भी हंसना पड़ा। मौका पाकर रेखा ने ललिता की बात की।

"दीदी, वह ललिता है न, केरल की लड़की। कुछ दिन पहले ही आई थी…"

"हां…"

"उसे मैंने अपने कमरे में रख लिया है। रजिस्टर में कहीं लिखना होता है क्या?"

"लिखना तो होता है, लेकिन ललिता की उन लड़कियों से नहीं बनी?"

"उस बेचारी की नौकरी खतरे में है। कहती थी नौकरी छूट गई तो कहां रहूंगी; इतनी दूर घर भी कैसे जाऊंगी और क्या मुंह लेकर जाऊंगी! मैंने उसे अपने कमरे में रख लिया। बेचारी का किराया तो बच जाएगा। नौकरी कहीं न कहीं मिल ही जाएगी।"

"नौकरी तो उसकी अभी-अभी लगी थी।"

"हां, लेकिन लगता है, कोई कमीना अफसर उसके पीछे पड़ा है। वह चाहता है कि ललिता उसके साथ नाच-सिनेमा में जाए। इसने मना किया होगा तो उसने नौकरी से निकालने की धमकी दी होगी।"

"अरे…" मिसेज खन्ना ने हैरानी से रेखा की तरफ देखा, "ऐसा भी कहीं होता है? कौन है उसका अफसर? मैं वतनी साहब से कहूंगी। उसे लेने के देने पड़ जाएंगे।"

"दीदी, मैंने उसे बहुत समझाया कि सरकारी नौकरी में यह नहीं हो सकता। प्राइवेट नौकरी में तो टुच्चे-टुच्चे लोग, जो पैसे वाले बन जाते हैं, बदफेहलियों के लिए लड़कियां काम पर रखते हैं। सरकारी नौकरी में कोई ऐसा नहीं कर सकता। लेकिन उस लड़की को विश्वास ही नहीं होता।"

"कौनसा दफ्तर है उसका?"

"सोशल वेलफेयर का दफ्तर है। उसमें कोई मिस्टर धीर हैं।"

"अरे, उसका दिमाग तो एक मिनट में ठीक हो जाएगा। वतनी साहब

उस दफ्तर की कमेटी के मेम्बर हैं।"

रेखा की जिज्ञासा अब काबू से बाहर होती जा रही थी। उसने पूछा, "दीदी, यह वतनी साहब कौन हैं ?"

"तुम नहीं जानतीं ?" मिसेज खन्ना ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा, "इस होस्टल की सलाहकार समिति के चेयरमैन हैं। पुराने फ्रीडमफाइटर हैं। सरकार की तरफ से उन्हें पांच सौ रुपये पेन्शन मंज़ूर हुई थी लेकिन वे सिर्फ एक रुपये की नॉमिनल पेन्शन लेते हैं। दिल्ली में उनकी काफी जायदाद है। तीन-चार मकान, कई प्लाट। सब-कुछ बाल-बच्चों को सौंपकर समाज-सेवा के काम में लगे हैं। फ्रीडमफाइटर होम, में एक कमरे में रहते हैं।"

रेखा ने प्रशंसाभाव दिखाते हुए कहा, "इतने बड़े त्यागी पुरुष, दिव्यात्मा से मिलने का कभी मौका नहीं मिला ! कितनी बड़ी बदकिस्मती है हमारी !"

"इसमें मुश्किल क्या है भई। अक्सर आते हैं यहां। किसी दिन मिला दूंगी। कहीं कोई काम रुका हो, मिनिस्टर-विनिस्टर से कोई काम कराना हो, तो बताना मुझे।"

नाश्ता आ गया था। नाश्ता करते समय वतनी साहब चर्चा का विषय बने रहे। मिसेज खन्ना ने बताया कि वतनी साहब ने आजादी की लड़ाई में डेढ़ साल की जेल काटी थी। आजादी के बाद वे एक शरणार्थी कैम्प के इन्चार्ज थे और उस दौरान उन्होंने सैकड़ों लावारिस औरतों और लड़कियों की मदद की थी। नेहरूजी से लेकर इन्दिरा जी तक सभी बड़े नेताओं से उनके सीधे सम्बन्ध थे। अपनी इस प्रतिष्ठा के कारण वे दर्जनों सरकारी, गैर-सरकारी समितियों के अध्यक्ष, सैक्रेटरी या सदस्य थे। समाज-सेवा ही उनका जीवन है।

नाश्ते के बाद रेखा चलने लगी तो मिसेज खन्ना को याद दिलाते हुए बोली, "दीदी, याद करके वतनी साहब से सोशल वेलफेयर के मिस्टर धीर को फोन करवा देना। उस बेचारी लड़की का काम हो गया तो एक दिन आपके साथ चलकर उन्हें मैं व्यक्तिगत रूप से धन्यवाद दे आऊंगी।"

"आज ही चलो न शाम को।" मिसेज खन्ना चहककर बोली।

"किसी छुट्टी के दिन चलेंगे, जब मेरा क्लास न हो।"

"अरी हां, एक बात याद आई। तुम्हारे काम की है। आ, बैठ जा।" कहते-कहते मिसेज खन्ना ने रेखा की कमर में हाथ डालकर खींचा और इसके साथ ही वह खुद सोफे पर लुढ़क गई और रेखा उसके ऊपर आ गिरी। हँसते-हँसते मिसेज खन्ना ने उसे दोनों बांहों में भरकर इतनी जोर से भींचा कि रेखा का दम घुटने लगा। रेखा अपने को छुड़ाने की जितनी कोशिश करती, मिसेज खन्ना उससे उतनी ही जोर से लिपट जाती। रेखा को मिसेज खन्ना का यह व्यवहार बड़ा अजीब लगा, विशेषकर तब जब रेखा ने महसूस किया कि मिसेज खन्ना की सांस तेजी से चलने लगी है। उसने किसी तरह अपने को छुड़ाया और बाहर जाने लगी। मिसेज खन्ना ने उसकी तरफ बड़ी दयनीय दृष्टि से देखा, फिर कुछ संभलकर बोली—

"अरी, वह बात तो रह ही गई। मैं कह रही थी, वतनी साहब नगर-सुन्दरी कम्पिटीशन कराने वाले हैं। तुम्हें उसमें भाग लेना चाहिए। तुम्हारे चांसेज बहुत ब्राइट हैं। जज वतनी साहब के होंगे और वतनी साहब अपने ही आदमी हैं।"

रेखा का उस कमरे में दम घुटने लगा था। चलते-चलते बोली, "दीदी, मुझे जल्दी है। फिर बात करूंगी।" और वह कमरे से निकल गई।

शाम को रेखा क्लास में नहीं गई। दफ्तर से श्याम मोहन को फोन किया था तो पता चला था कि वे दो दिन से दफ्तर नहीं आ रहे हैं, तबीयत ठीक नहीं है। दफ्तर से निकलकर वह सीधे श्याम मोहन के घर गई। तीसरी मंजिल पर एक कमरे, किचन की मियानी में जब रेखा पहुंची, श्याम मोहन किचन में स्टोव जलाने की कोशिश कर रहा था। कमरे में अचानक रेखा को देखकर उसे आश्चर्य हुआ।

"अरे, तुम कैसे आ गईं!" उसने कहा और स्टोव को वैसे ही छोड़कर धीरे-धीरे चलकर कमरे में आ गया।

"क्या हाल-चाल हैं?" उसने जैसे वातावरण को सहज बनाने की कोशिश की।

"खाक हाल-चाल हैं," रेखा ने चिढ़कर कहा, "तबियत ठीक नहीं थी, तो मुझे फोन क्यों नहीं किया ?"

"भई, फ्लू, मलेरिया तो यहां चलते ही रहते हैं। कोई लम्बी-चौड़ी बीमारी थोड़े ही है !"

"बुखार तो है। कोई दवाई लाने वाला, चाय-कॉफी देने वाला तो चाहिए।"

"लेकिन मैं फोन कहां से करता ? दफ्तर में दो दिन गया ही नहीं।"

रेखा ने उसके माथे पर हाथ रखा, फिर दोनों हाथों को छूकर देखा। बुखार उतरा लगा तो उसे कुछ तसल्ली हुई।

"कुछ खाया-पिया था ?"

"कल तो बुखार तेज था। आज उतरा है। अभी कॉफी बनाने ही वाला था।"

वह रसोई में गई। तीन-चार डिब्बे उठाने-पटकने के बाद वह झल्लाई हुई बाहर आई और बोली—

"यह क्या बना रखा है घर को ? बिस्कुट, अण्डा, डबलरोटी कुछ भी तो नहीं है घर में।"

साड़ी के पल्लू से हाथ साफ करते हुए, वह सीढ़ियों से उतर गई। कुछ ही देर में वह डबलरोटी, बिस्कुट का पैकेट, कुछ अण्डे और कुछ फल लेकर आई। सामान के साथ रसोई में चली गई और थोड़ी देर में कॉफी और टोस्ट सेंककर ले आई।

"क्लास वन अफसर हो। कुछ तो अपने घर को ढंग का बनाकर रखो।" उसने कॉफी कप में डालते हुए कहा।

श्याम मोहन मुस्करा दिया और बोला—

"तुम नहीं समझोगी। यह फकीरी हमने किसीका दिल जीतने के लिए जानबूझकर अपनाई है।"

"भगवा कपड़े और सिला लेते।"

"उसका भी इन्तजाम हो रहा है। दफ्तर में कशमकश चल रही है। किसी भी दिन उनका काम पड़ सकता है।"

"दफ्तर में किस चीज की कशमकश चल रही है ?"

"कशमकश नौकरी की है। 'कड़ाही से उछले चूल्हे में गिरे' वाली बात हुई। सोचा था यूनिवर्सिटी की गन्दगी से मुक्ति मिली, अब मानसिक संताप नहीं झेलना पड़ेगा। लेकिन सरकारी दफ्तरों का हाल तो और भी खराब है। यहां तो ऐसा आदमी रह ही नहीं सकता, जो ईमानदारी से जीना चाहता है।"

रेखा श्याम मोहन के दफ्तर के बारे में काफी कुछ जान चुकी थी। श्याम मोहन के साथ कई बार उनपर चर्चा हुई थी। वह बेकार की योजनाओं पर पैसा खर्च करने वाला दफ्तर था। लेकिन रेखा को इसमें कोई ऐसी बात नजर नहीं आती थी कि श्याम मोहन को नौकरी छोड़ने के लिए, बाध्य होना पड़े। श्याम मोहन को वह भली-भांति जानती थी कि वह बहुत संवेदनशील व्यक्ति है और सार्वजनिक जीवन में झूठ और बेईमानी को बर्दाश्त करना उसके लिए बहुत मुश्किल है। लेकिन ऐसी संवेदनशीलता भी किस काम की कि आदमी कहीं पांव नहीं जमा सके ! वह बोली—

"श्याम, तुम कभी-कभी बिल्कुल 'एब्नार्मल' व्यक्ति की तरह बातें करते हो। सरकारी दफ्तरों में लाखों आदमी काम करते हैं। अगर सब तुम्हारी तरह महसूस करने लगें तो इस देश में कोई व्यवस्था नहीं बचेगी; सब जंगल हो जाएगा।"

"जंगल हो जाए तो बड़ा फायदा होगा। मैं तो समझता हूं कि इस व्यवस्था में अब सुधार की गुंजाइश नहीं रही है। यह जंगल हो जाए तो नये सिरे सब शुरू होगा।"

"यह तो घोर निराशावादी रवैया है।"

"आशा के लिए बचा ही क्या है ! जब पेड़ अपनी जड़ों को खाने लग जाए, तो आशा किस बात की ? शिक्षण-संस्थाओं और शिक्षकों का काम होता है बच्चों में सच्चाई, ईमानदारी, परिश्रम, न्याय-निष्ठा जैसे ऊंचे मानव-मूल्यों की भावना का विकास करके जीवन के प्रति आस्था और साहस का बल प्रदान करना। लेकिन वह काम कर रही हैं बच्चों को तोड़ने का। अपने आचार-व्यवहार से वे पैसे को सर्वोच्च मूल्य सिद्ध करके बच्चों में निराशा, अनास्था और घृणा के बीज बोती हैं। सरकारी ढांचे का काम है इस जनता को ससम्मान जीवन की सुविधाएं जुटाना, जिसके

लिए उसका अस्तित्व बना हुआ है। लेकिन उसका रवैया है जनता को लूटना-खसूटना, उसकी चमड़ी उधेड़कर अपने लिए कवच बनाना। पैंतीस करोड़ लोग हैं इस देश में जिन्हें ढंग का खाने-पहनने को नहीं मिलता। और सरकारी दफ्तरों में हर साल योजनाओं के नाम पर अरबों रुपये खर्च हो जाते हैं। कहां जाता यह पैसा ? राजनेता, भ्रष्ट-नौकरशाही, ठेकेदार, व्यापारी, पूंजीपति आदि को छोड़कर इस देश में किसकी हालत सुधरी है ? पुलिस को देखो, कोर्ट-कर्मचारियों को देखो। जहां भी नजर घूमती है, एक ही दृश्य नजर आता है कि पेड़ अपनी जड़ों को खाए जा रहा है। क्या इस व्यवस्था से जंगल अच्छा नहीं है ?"

रेखा बड़े ध्यान से उसकी बातें सुन रही थी। वह श्याम मोहन के विचारों से पूरी तरह सहमत नहीं हो पाती है। लेकिन जब कभी श्याम मोहन समाज और जीवन की समस्याओं पर कुछ बोलता था तो रेखा अभिभूत हो जाती थी। उसके तर्क में, उसकी युक्तियों में एक सम्मोहिनी का-सा असर था, जिससे वह उस समय बच नहीं पाती थी। यह दूसरी बात है कि बाद में उसे लगता था कि श्याम मोहन कुछ एब्नार्मल ढंग से सोचने वाला व्यक्ति है।

"जब तुम ऐसा समझते हो, तो मुझे इस व्यवस्था में क्यों धकेल रहे हो ?"

रेखा के इस प्रश्न से श्याम मोहन कुछ पशोपेश में पड़ा, बोला—

"मैं समझा नहीं।"

"तुम मुझे आई० ए० एस० बनने की सलाह क्यों दे रहे हो ?"

श्याम मोहन मुस्कराकर बोला—

"भई, नौकरी ही करनी है, तो आई० ए० एस० बनकर करो। बाकी सब बेकार है।"

"ये सब दकियानूसी बातें हैं, "रेखा ने कहा, "अब न तो आई० ए० एस० में कुछ रखा है, न किसी और नौकरी में। चांदी सिर्फ राज-नीति में है या फिर समाज-सेवा में। हमारी होस्टल कमेटी के चेयरमैन हैं एक सज्जन। बहुत जबर्दस्त समाज-सेवी हैं। दर्जनों कमेटियों के कहीं अध्यक्ष हैं, कहीं मन्त्री और कहीं सदस्य। वेतन एक पैसा नहीं लेते। लेकिन

जनाब कई फ्लैटों और प्लाटों के मालिक हैं। साठ-पैंसठ की उम्र में भी टमाटर की तरह लाल हैं। देश के सभी मन्त्रियों, उपमन्त्रियों से जान-पहचान है और बड़े-बड़े अफसरों पर इतना दबदवा है कि जिसे चाहें नौकरी दिलवा सकते हैं और जिसे चाहें, नौकरी से निकलवा सकते हैं। बढ़िया कार है, सरकारी रेस्ट हाउस में मुफ्त में रहते हैं। सुन्दरियों की भीड़ उनके आसपास रहती है। फाइव स्टार होटलों में कमरे बुक होते हैं जहां वह जिसका चाहें उसका ईमान लूट सकते हैं।"

श्याम मोहन को रेखा का विवरण बहुत रोचक लगा। बोला—

"कौन है भई, वह महापुरुष ?"

"हमारे वतनी साहब।"

"वतनी साहब ? वह खद्दरधारी फ्रीडमफाइटर ?"

"आप जानते हैं उन्हें ?"

"हां-हां, हमारे दफ्तर की सलाहकार कमेटी के चेयरमैन हैं। एक ही धूर्त हैं।"

"अच्छा। हमारे होस्टल की वार्डन मिसेज खन्ना तो उनकी बहुत तारीफ करती हैं।"

"मिसेज खन्ना ?" श्याम मोहन को एक और धक्का लगा, "वही तो नहीं—गोरी चिट्टी, बालकटी, उम्र की अधेड़ लेकिन बनाव-श्रृंगार में टिपटाप···"

"हां, हां, आप उसे कैसे जानते हैं ?" अब रेखा के चौंकने की बारी थी।

"जानता इसलिए हूं कि वह अक्सर वतनी साहब के साथ हमारे दफ्तर में आती है। हमारे बॉस श्री दयानिधि शर्मा को वतनी साहब ने मिसेज खन्ना की आंखों के जादू से मोह लिया है। हो सकता है वह हमारे यहां से नगरसुन्दरी चुन ली जाएं।"

"आपका दफ्तर नगरसुन्दरी प्रतियोगिता कर रहा है ?"

"हां, हमारी पंचवर्षीय योजना में एक योजना ब्यूटी कम्पिटीशनों की भी है। हम लोग पुरुषों, महिलाओं, बच्चों, कारों और कुत्तों के लिए सौंदर्य-प्रतियोगिता करने वाले हैं।"

रेखा खिलखिलाकर हँसने लगी।

"तुम हँसती हो ?" श्याम मोहन ने गम्भीर होकर कहा, "अरे भई, हमारा दफ्तर नगर की सुन्दरता को बढ़ावा देने के लिए है।"

रेखा हँसते-हँसते लोट-पोट हो रही थी।

"हमारे दफ्तर का बॉस एक आई० ए० एस० प्राणी है। वह सरकारी तन्त्र के सारे रहस्य जानता है। योजना कैसे बनाई जाती है, कैसे मंजूर कराई जाती है और जनता का पैसा कैसे खर्च किया जाता है, इन सब बातों में वह माहिर है। और फिर उसे वतनी जैसे देशभक्त स्वतन्त्रता-सेनानी सलाहकार के रूप में मिले हैं।"

रेखा की हँसी यकायक रुक गई। श्याम मोहन की तरफ देखकर उसने जानना चाहा कि आई० ए० एस० प्राणी की बात कहकर उसपर व्यंग्य तो नहीं किया गया है। लेकिन श्याम मोहन का शायद वैसा कोई इरादा नहीं था। वह कहता गया।

"और उस देशभक्त की बात सुनो। जनाब गुण्डागर्दी के किसी मामले में अंग्रेजों के वक्त जेल गए लेकिन तिकड़म ऐसा भिड़ाया कि स्वतन्त्रता-सेनानी की पेंशन मंजूर करवा ली। अपनी कराई सो कराई उस तिकड़म के बल से जनाब ने धन्धा शुरू कर दिया। पाकिस्तान से आए कई लोगों के उन्होंने जेल के झूठे प्रमाणपत्र बनवाए और उन्हें पेंशन लगवा दी। अब जनाब, हींग फिटकरी लगाए बिना चार-पांच हजार रुपये हर महीने बना लेते हैं। पहली तारीख को खजाने में पहुंच जाते हैं। जैसे ही उनके ग्राहकों को पेंशन मिलती है, पचास-पचास रुपये हरएक से वसूल कर लेते हैं। बीच में एक बार सरकार बदली तो रैकेट पकड़ा गया और कई लोगों की पेंशन बन्द हो गई। अब फिर चालू हो गई है। वतनी साहब की पेंशन चालू होने में कुछ बाधाएं थीं तो उन्होंने किसी मिनिस्टर से कहकर एक रुपये की नामिनल पेंशन चालू करा ली और पेंशनधारी होने का रुतबा बनाए रखा। जनाब खुद ही बता रहे थे कि जब लोगों की पेंशन बन्द हुई तो एक दिन वे डेलीगेशन लेकर मोरारजी के पास गए और उन्हें कहा कि मोरारजी भाई···आप तो पेशाब पीकर गुजारा कर लेते हैं, लेकिन इन लोगों का गुजारा कैसे होगा ! जब उन्होंने बिना किसी हिचक के

मेरे सामने ये शब्द कहे तो मैंने अनुमान लगाया कि भाई जरूर अंग्रेजों की जेल में रहे होंगे।"

श्याम मोहन ने उठकर एक सिगरेट सुलगाई। फिर दाढ़ी का सामान इकट्ठा किया और दाढ़ी बनाने की तैयारी में शीशे के सामने खड़ा हुआ।

"कल से दाढ़ी भी नहीं बनाई और सिगरेट भी नहीं पी। यह फ्लू तो एकदम जिंदगी बेकार कर देता है।"

रेखा को वतनी के इतिहास ने विचलित कर दिया था। इसके साथ ही उसे मिसेज खन्ना का वह अजीब व्यवहार याद आ रहा था। वह उसकी चर्चा श्याम मोहन से करना चाहती थी लेकिन यह सोचकर रह गई कि शायद वह मिसेज खन्ना को गलत समझ रही थी। फिर भी उसने कहा—

"आज सुबह मिसेज खन्ना मुझे कह रही थीं कि मैं ब्यूटी कम्पिटीशन में हिस्सा लूं। जज वतनी साहब के अपने आदमी होंगे और वतनी साहब अपने आदमी हैं। मुझे नगरसुन्दरी की ट्राफी मिल जाएगी।"

श्याम मोहन धीरे से हँसा और बोला—

"मिसेज खन्ना ठीक ही कह रही थी। आइडिया बुरा नहीं है। नगरसुन्दरी बन जाओगी तो विश्वसुन्दरी बनने का रास्ता भी खुल जाएगा। और नहीं तो फिल्म-नायिका तो बन ही जाओगी।"

रेखा चिढ़कर बोली, "बेकार की बातें मत करो।"

श्याम मोहन उसके चिढ़ने का मजा लेते हुए बोला—

"बेकार की बातें नहीं हैं। देखना, हमारे दफ्तर का विज्ञापन निकलते ही कितनी भीड़ होगी बड़े-बड़े घरानों की लड़कियों और औरतों की। हजारों रुपये का लेन-देन होगा। वतनी साहब मुफ्त का सौदा नहीं करते हैं।"

रेखा ने अब श्याम मोहन को चिढ़ाने के लिए कहा—

"मिसेज खन्ना मुझपर लट्टू हैं। कह रही थीं कि आज शाम वतनी साहब के पास मुझे ले जाएंगी। मैंने कहा, आज नहीं, फिर कभी।"

"क्यों आज क्यों नहीं? अभी तो काफी वक्त है। वतनी साहब का द्वार समाज-सेवा के लिए रात के बारह बजे भी खुला रहता है।"

रेखा कट गई। गुस्से से तिलमिलाकर बोली—

"मैं तुमसे बात नहीं करूंगी।"

"अरे, इसमें गुस्सा करने की क्या जरूरत है? भई, जिसे नगरसुन्दरी बनना होगा उसे वतनी साहब की कृपा प्राप्त करनी ही पड़ेगी। पिछले साल उनके कमरे में लड़कियों की भीड़ लगी रहती थी।"

"पिछले साल भी हुए थे कम्पिटीशन?"

"हुए नहीं थे। होने वाले थे लेकिन श्याम मोहन नाम के एक निकम्मे अफसर की वजह से नहीं हुए।"

"आपने क्या किया?"

"कुछ नहीं किया। एक तो योजना की स्वीकृति आने में आठ महीने निकल गए। फिर साल का बजट खर्च करने के लिए वित्त-विभाग से मंजूरी मांगी गई। कई बार फाइल के इधर से उधर भटकने के बाद मार्च के दूसरे हफ्ते में मंजूरी मिली। 31 मार्च तक सारा पैसा खर्च होना था। मैंने फाइल पर लिख दिया कि इस थोड़े-से समय में प्रतियोगिताएं नहीं हो सकतीं। हमारे बॉस झल्लाए, वतनी साहब ने खूब हाथ-पांव पटके, ऊपर तक मामला गया। लेकिन मैं भी अपनी जिद पर था। मैंने कम्पिटी-शन नहीं होने दिए और बजट सरेंडर कर दिया।"

"इसका मतलब, आपने जनता का कुछ लाख रुपया बरबाद होने से बचा लिया।"

"नहीं, दफ्तर के कायदे-कानूनों में इसे बहुत बड़ी गलती माना जाता है। बॉस ने मेरी रिपोर्ट खराब कर दी।"

"क्यों?"

"इसलिए कि बजट में जो पैसा मंजूर होता है, उसे हर हालत में खर्च करना होता है। यही दफ्तरों की रीत है।"

"फिर आपने क्यों नहीं किया? आप भी खर्च कर देते।"

"जान-बूझकर नहीं किया। हमारे दफ्तर की और भी स्कीमें थीं। उनकी मंजूरी भी देर से आई थी। जगह-जगह होर्डिंग लगाने, पेड़ लगाने और मेले-प्रदर्शनियां करने की स्कीमें थीं। उनका बजट पंद्रह दिनों में खर्च हो गया। झूठे टेंडर मंगवाए गए, दिखावे के लिए कुछ काम किए गए और काम

पूरा होने के झूठे प्रमाणपत्र देकर खजाने से पैसा निकालकर ठेकेदारों, अफसरों और वतनी जैसे समाज-सेवियों में बंट गया। वहां हर साल ऐसा ही होता है। वित्त-विभाग साल-भर फाइलों को इधर-उधर सरकाता रहता है। आखिरी दिनों में मंजूरी आती है तो जैसे-तैसे रुपये को खर्च किया जाता है। फैक्टरी में सामान बना भी नहीं होता है लेकिन उसे खरीद-कर पैसा चुका दिया जाता है। कागजात ठीक, नियम-कायदों में कोई कोताही नहीं। आडिटर क्या उसके फरिश्ते भी नहीं पकड़ सकते। पैसा मंजूर हुआ हो गरीब लोगों को राहत देने के लिए, खर्च हो जाता है अफसरों के फर्नीचर पर और उनके दफ्तरों को एयरकंडीशन बनाने पर। ठेकेदारों और व्यापारियों की भीड़ शिकारी कुत्तों की तरह सारे दफ्तरों को सूंघती रहती है। वित्त विभाग वालों से भी उनकी सांठ-गांठ होती है ताकि वे मंजूरी ज्यादा से ज्यादा देर से भेजें। फिर दफ्तर के चपरासी व बाबू से लेकर बड़े अफसर तक उनका अलिखित करार होता है। बिल बनाने वाले, उसे पास करने वाले और चैक जारी करने वाले सबको वाजिब इनाम दिया जाता है।"

रेखा का दिमाग भन्ना गया। उसके लिए यह इतनी अजीब बातें थीं कि उनपर विश्वास नहीं किया जा सकता था। लेकिन श्याम मोहन ने ये बातें बताई थीं और उसकी बातों पर विश्वास न करने का कोई कारण नहीं था। अगर यह एक दफ्तर की कहानी है तो और दफ्तरों में भी ऐसा होता होगा। इस लूट का कोई हिसाब है! पिछले तैंतीस-चौंतीस सालों में जनता का कितना पैसा इस तरह लूटा गया होगा! क्या इसीलिए इस देश में कुछ पांच-दस प्रतिशत लोगों को छोड़कर बाकी की हालत वैसी की वैसी है, या बदतर हुई है?

छः

उस दिन सुबह से ही रुक-रुककर बारिश हो रही थी। पिछले तीन दिनों में काफी पानी बरसा था लेकिन जमुना पर इसका कोई विशेष असर

नहीं पड़ा था। पिछली रात मौसम-विभाग की खबरों में कहा गया था कि ताजेवाला से दो लाख क्युसेक पानी छूटने के कारण कल शाम तक जमुना का जल-स्तर खतरे के निशान से ऊपर चला जाएगा।

राजू घर से निकला तो सड़क की बत्तियां अभी जली नहीं थीं लेकिन झुटपुटा घिरने लगा था। बसों-स्कूटरों और लोगों की भीड़ से निकलकर वह जमुना की तरफ जाने के लिए मजनू के टीले की तरफ मुड़ा तो खंभे के नीचे खड़ा अजय चुपचाप उसके साथ-साथ चल पड़ा।

मजनू के टीले में तिब्बती शरणार्थियों की दुकानों पर लोगों की अच्छी-खासी भीड़ थी। हाथ में हाथ डाले अर्धनग्न हिप्पियों के अतिरिक्त कालेजों में पढ़ने वाले युवा लड़के और छांग, भांग, गांजे की लत से पीड़ित कई अधेड़-गरीब और अमीर सही ठिकाने की तलाश में भटक रहे थे। राजू और अजय चुपचाप चलते हुए इस भीड़ से निकलकर बाहर की खुली सड़क पर आ गए जिसके साथ-साथ जमुना अपने किनारों को फांदने का रास्ता तलाशती हुई बह रही थी।

"तुम्हारी जेब में कितने पैसे हैं?" अजय ने मौन तोड़ा।

राजू रुक गया। पेंट की पिछली जेब से छोटा-सा बटुआ निकला, जिसमें कालेज का आइडेंटिटी कार्ड, बस का रियायती पास और पैसे रहते थे। हाथ से टटोलकर ही उसने पैसे गिने।

"कितने चाहिए?" उसने पूछा।

"दो भी चलेंगे यार। भूख लगी है। सुबह से कुछ खाया नहीं है।"

"घर नहीं गए थे?"

"नहीं..."

"दोसा ले आऊं?"

"नहीं, नहीं, दोसा कौन खाएगा? आलू की चार टिकियां ले आओ।"

राजू मुड़कर फिर मजनू के टीले की दुकानों की तरफ चल दिया। उसे टिकियां खरीदकर लौटने में दस मिनट से ज्यादा नहीं लगे होंगे। वापस उस जगह पहुंचा तो अजय दिखाई नहीं दिया। दूर तक नजर डाली लेकिन सड़क बिल्कुल सूनी थी। सड़क से लगभग दस-बारह कदम के फासिले पर जमुना के मटमैले विस्तार पर नजर पड़ते ही एक क्षण के

लिए वह कांप उठा। तभी अजय की आवाज सुनाई दी, "इधर आ जाओ।"

वह जमुना के प्रवाह से बिल्कुल सटकर, एक पत्थर पर बैठा हुआ था। राजू घास और कीच में चलकर उसके पास पहुंचा। आलू की टिकियों का पत्ता उसकी तरफ बढ़ाते हुए बोला—

"अरे यार, मैं तो डर गया था कि तुमने जमुना में छलांग लगा दी।"

अजय ने आलू की टिकिया का टुकड़ा मुंह में डाला और उसे निगलने के बाद पत्ता राजू की तरफ बढ़ाते हुए बोला—

"तुम भी लो न।"

"नहीं, मेरी इच्छा नहीं है।"

अजय ने ज्यादा जोर नहीं डाला। बोला—

"एक बार तो इच्छा हुई थी। फिर सोचा यह भी एक बेवकूफी ही है। अरविन्द की याद आ गई।"

राजू का दिल धड़कने लगा।

"अरविन्द को क्या हुआ ?" उसने घबराकर पूछा।

"फांसी लगा ली···। बेचारा कल से बहुत परेशान था। मैं सुबह मोतीबाग गया था। सोचा, उसको दिलासा दूंगा। वहां जाकर देखा तो घर में लोगों की भीड़ थी। घरवाले धाड़ मारकर रो रहे थे।"

राजू के मुंह से इतना ही निकला, "यह तो बहुत बुरा हुआ।"

दोनों थोड़ी देर तक चुप खड़े रहे। जमुना की लहरें हरी घास को फांदकर उनके पैरों को छू रही थीं।

"यह अंग्रेजी न जाने कितने लोगों की जान लेगी।" अजय ने चुप्पी को तोड़ते हुए कहा।

राजू बोला, "मैं तो कहूंगा, अरविंद की जान उसके घर वालों ने ली। उन्होंने जबर्दस्ती उसे ऐसे कालेज में भेजा जहां पब्लिक स्कूलों के लड़के-लड़कियां ज्यादा होते हैं। यह जानते हुए भी कि लड़के की अंग्रेजी कमजोर है उन्होंने उसके साथ जबर्दस्ती की। वह उस माहौल में मिसफिट था।"

"घरवालों का इसमें क्या दोष ?" अजय ने जिरह की, "हर आदमी

सोचता है मेरा बच्चा और कुछ जाने या न जाने अंग्रेजी बोलना जरूर सीख जाए। मैंने अपने घरवालों से कितना कहा कि मैं अंग्रेजी मेन सब्जेक्ट नहीं लूंगा। लेकिन पिताजी की जिद थी। कहते रहे कि अंग्रेजी के बिना फ्यूचर कहां है ? अब तीन साल से बी० ए० में रुका हूं। अंग्रेजी क्लीयर नहीं होती। अब तक किसी और विषय में एम० ए० कर चुका होता। तुम अपनी तरफ देखो। अगर तुम अंग्रेज-पुत्रों की तरह गिटपिट अंग्रेजी बोलते तो प्रैक्टिकल में बार-बार फेल होते ?"

राजू मुस्करा दिया—

"अरे, मैं तो इसलिए फेल हो रहा हूं कि डाक्टर आनंद चाहता है, मैं उसके पांव पकड़ूं, उसकी खुशामद करूं, माफी मांगूं।"

"मतलब वही है यार, तुम समझते नहीं। अगर तुम उस क्लास से आए होते जो अंग्रेजों की गुलाम हैं, तो डॉ० आनंद की हिम्मत नहीं होती। तब उसका कोई स्वार्थ तुम्हारे किसी रिश्तेदार के हाथ में होता। बराबर का लेन-देन होता।"

"लगता है तुम्हारा कहना ठीक ही है। वैसे तो यहां जातियों की लड़ाई भी है और धर्मों की लड़ाई भी, लेकिन असली लड़ाई है अंग्रेजी से पलने वालों और अंग्रेजी के सताए हुए लोगों के बीच। इस वक्त देश में अंग्रेज ही राज कर रहे हैं। सब जगहों पर अंग्रेजों के गुलाम बैठे हैं और किसी दूसरे को अपनी एम्पायर में घुसने नहीं देते। लीडर इनके, अखबार इनके, यूनिवर्सिटियां इनकी। कमबख्तों ने माहौल ऐसा बना दिया है कि पनवाड़ी भी अपना बोर्ड अंग्रेजी में ही लगाता है। एक दिन मैं त्रिलोकपुरी गया। वहां मैंने जगह-जगह बोर्ड देखे, छोटे बच्चों के लिए अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों के। पच्चीस गज की झोपड़ियों में रहने वाले बच्चों को भी ससुरे अंग्रेजी-स्कूलों में पढ़ाना चाहते हैं। इस देश के लोग पागल हो गए हैं। नेता तो पागल हैं ही, अब जनता भी पागल हो गई है।"

अजय बड़े ध्यान से राजू की बातें सुन रहा था। उसने कहा—"तुम्हारे पागल कहने से क्या होता है ? वे तो अपने को सबसे बड़ा बुद्धिमान समझते हैं। कहते हैं अंग्रेजी हट गई तो देश जहन्नुम में चला जाएगा।"

राजू ने दांत भींचकर अपना गुस्सा उगला—

"जहन्नुम में जाएंगे ये दो-अढ़ाई फीसदी लोग जो अट्ठानवे फीसदी लोगों को मनमानी लूट रहे हैं। जिस दिन देशी भाषाओं में काम होने लगेगा, ये सब नंगे हो जाएंगे।"

"अरे यार, कौन जाने वह दिन कब आएगा ? आएगा भी या नहीं। अभी तो उन्होंने हमारे लिए यहीं जहन्नुम बना रखा है। बाहर जाएं तो बाहर जहन्नुम, घर पर रहें तो घर जहन्नुम। मां-बाप सोचते हैं, हम निठल्ले हैं। कुछ करते-धरते नहीं। नौकरी ढूंढने जाएं तो नौकरियां हैं नहीं।"

"नौकरियां तो बहुत हैं।" राजू तैश में आकर बोला, "लेकिन सिफारिश वालों के लिए, रिश्तेदारी वालों के लिए, घूस वालों के लिए और अंग्रेजी वालों के लिए। कभी तुमने किसी लीडर के लड़के को या किसी बड़े अफसर या धनपति के लड़के को हमारी तरह नौकरी के लिए तरसते देखा है ? कालेज से निकले नहीं कि नौकरियां-धंधे तैयार। कोई किसी फर्म का मैनेजर हो जाता है, कोई पार्टनर। किसीकी फैक्टरी लग जाती है और अगर बिल्कुल गधा निकला तो उसके नाम मिनी बसें और मैटेडोर गाड़ियां कर दी जाती हैं। उधर हमारे-तुम्हारे जैसे लोग हैं जो नौ-दस साल नाक-रगड़ाई करके और मां-बाप का कचूमर करके डिग्रियां लेंगे, फिर नौकरी के लिए मारे-मारे फिरेंगे। क्या कीमत है इन डिग्रियों की जिनके लिए हम मां-बाप का पैसा बरबाद करते हैं और टुच्चे-टुच्चे प्रोफेसरों के आगे दुम हिलाते हैं ?"

"लेकिन यार, इसका कुछ इलाज भी तो नहीं दिखाई देता।"

"भई, इलाज तो ढूंढना पड़ता है लेकिन ढूंढ शुरू होने से पहले अफीम के नशे में डूबे दिमाग को झकझोरकर जगाना पड़ता है और उससे सोचने का काम लेना पड़ता है। हमारे देश की ट्रैजेडी यह है कि जिन्हें सोचना चाहिए, वे सोचते नहीं। सत्तर फीसदी लोग तो यहां ऐसे हैं जिनका कोई मांस नोचता है तो भी उन्हें पता नहीं चलता कि कोई मांस नोच रहा है। मांस नोचने वाले को वे समझते हैं कि वह उनके जख्मों पर मरहम कर रहा है। जो पढ़े-लिखे हैं, वे अंग्रेजी की वजह से इस तरह पढ़े-लिखे हैं कि अपने दिमाग को काम में लाना उन्होंने सीखा ही नहीं। उनके लिए सोचने

का काम दूसरे लोग करते हैं। जो इस व्यवस्था का सुख भोग रहे हैं उन्हें सोचने की जरूरत ही नहीं पड़ती। रह गया नौजवान तबका, स्कूलों-कालेजों से निकला, अपनी जमीन की तलाश में भटकता। उसका ध्यान मोड़ दिया गया है झूठे मूल्यों की तरफ जैसे धन का मूल्य, शान-शौकत का मूल्य, कार-कोठी का मूल्य। ये चीजें राजनीति से मिल सकती हैं तो राजनीति करेंगे, चोरी और डकैती से मिलती हैं तो चोरी-डकैती करेंगे, खुशामद, धोखा-धड़ी से मिलती हैं तो खुशामद,धोखाधड़ी करेंगे और शादी करने पर दहेज के रूप में मिल सकती हैं तो प्रेम, मोहब्बत के आदर्शों को ताक पर रखकर बिरादरी में शादी करेंगे तथा जरूरत पड़ी तो एक पत्नी को मारकर दूसरी-तीसरी शादी करेंगे।"

राजू की बातों से अजय को छटपटाहट होने लगी थी। राजू उसका स्कूल का दोस्त था। हालांकि वह अजय से दो साल आगे था, इससे उनकी दोस्ती में कभी कोई दुराव नहीं आया था। राजू की दोस्ती शुरू से ही कुछ गिने-चुने लड़कों से थी और अजय उनमें से था। मैडिकल कालेज में जाने के बाद राजू में एक बड़ा परिवर्तन आया था, जो उसके उग्र विचारों में कभी-कभी होता था। अजय के लिए कई बार उसके विचारों को समझ पाना मुश्किल होता था, लेकिन यह एक छटपटाहट, एक बेचैनी तो अपने भीतर महसूस करने लगा था। बी० ए० में तीन बार फेल होने के बावजूद अगर उसने अपने को जिंदा रखा है तो वह सिर्फ राजू की वजह से था जो उसे बार-बार हिम्मत बंधाता रहा था। लेकिन राजू के दिमाग में क्या है, वह क्या करना चाहता है, ये बातें उसकी समझ में ठीक-ठीक कभी नहीं आईं। आज तो उसने बेहद तनाव के क्षणों में अजय को एक भयानक कदम उठाने से बचाया था। वह बोला—

"राजू, तुम्हारी बातें कभी-कभी मेरी समझ में बिल्कुल नहीं आतीं। हम क्या सोचें? क्या करें? कहां जाएं? इस हाल में जब हम रोटी तक के लिए दूसरों पर आश्रित हैं, हम क्या कर सकते हैं?"

"बहुत कर सकते हैं अजय।" राजू ने अंगड़ाई-सी लेती हिल्लोरों पर नजर गड़ाकर कहा, "तुम अकेले नहीं हो। हम उन लाखों नौजवानों में से हैं जिन्हें इस व्यवस्था ने तोड़ा है जिनके लिए इस व्यवस्था में कोई

जगह नहीं है। वे सब मिलकर कुछ करें तो क्या नहीं हो सकता?" तुम्हारी इच्छा हो तो मैं तुम्हें कुछ ऐसे लोगों से मिला सकता हूं जो इस दिशा में कुछ काम कर रहे हैं।"

अजय तैयार था, बोला, "अभी चलो।"

"नहीं··अभी नहीं," राजू बोला, "जिस दिन मीटिंग होगी, ले चलूंगा। लेकिन इरादा पक्का कर लो।"

अजय और राजू पार्क में टहलने लगे। अंधेरा काफी घिर आया था लेकिन सड़क पर बत्तियों का प्रकाश झलमला रहा था। थोड़ी दूरी पर उन्हें लड़कों की एक टोली जोर-जोर से बोलती और ठहाके मारती आती दिखाई दी।

"चलो, यार लोग आ रहे हैं।" राजू ने कहा।

दोनों चलकर सड़क पर आ गए।

टोली दस-बारह लड़कों की थी। इनमें से कुछ कालेजों में पढ़ रहे थे, कुछ पढ़ चुके थे लेकिन थे सब बेकार, जिन्हें सरकारी आंकड़ों में बेकार के बजाय बेरोजगार कहा जाता था, लेकिन मां-बाप और समाज की नजरों में वे सचमुच बेकार थे। जब किसीकी नौकरी लग जाती थी या वह किसी धंधे में लग जाता था, तो वह इस टोली से निकल जाता था। इनमें कोई शर्मा, वर्मा, चड्डा, जोशी नहीं था। यह सिर्फ व्यक्तिवाचक नामों और सर्वनामों का समूह था।

'आप जैसा कोई मेरी जिंदगी में आए' की धुन पर नाचता हुआ, युवकों का यह समूह जब राजू और अजय के निकट पहुंचा तो सुलफे की तीखी गंध हवा में भर गई। जानी ने सुलफा भरी सिगरेट का दम खींचकर उसे गुल्लू के हाथ में दिया और राजू से जाकर यूं लिपट गया जैसे वह बरसों बाद उससे मिला हो। थोड़ी देर गुत्थम-गुत्था रहने के बाद जब वे अलग हुए तो जानी बोला—

"लेकिन यार, तू यहां कैसे आया? तू तो डॉक्टर-वाक्टर बन गया था।"

"नहीं प्यारे, इस मंडली को छोड़कर डॉक्टर बनने में क्या मजा है? हम फिलहाल शान से फेल होते जा रहे हैं।"

"अरे·····उस प्रोफेसर के बच्चे ने इस बार भी तुम्हें पास नहीं किया ?"

"भाई मेरे, एक दिन गुल्लू के साथ चले जाओ घर, और उससे माफी मांग लो ।"

हिप्पियों की वेश-भूषा में गुल्लू की तरफ जानी ने इशारा किया तो राजू ने उसे तुरन्त पहचान लिया। हालांकि गुल्लू मंडली का नया सदस्य था लेकिन डॉ० आनंद के लड़के को उसने पहले कई बार देखा था । गुल्लू ने सिगरेट का कश खींचकर आसमान में धुआं छोड़ा, फिर राजू की तरफ हाथ बढ़ाकर कहा—

"आई एम गुल्लू, सन आफ ग्रेट रास्कल डॉ० आनंद। आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई। क्या आप उनके स्टुडेंट हैं ?"

"जी···" राजू ने हल्का-सा उत्तर दिया।

गुल्लू ने नशे में डूबी अपलक आंखों से हवा में दूर देखते हुए कहा—

"एक दिन आप भी बहुत बड़े डॉक्टर बनेंगे। मेरे बाप की तरह। बड़े-बड़े लीडरों और अफसरों को खुश करने के लिए मुर्गे की तरह नाचा करेंगे। लाखों रुपये कमाएंगे और इन्कम-टैक्स के झूठे-रिटर्न भरकर शरीफ कहलाएंगे ।अस्पताल की दवाइयों और सामान में हेर-फेर करके गरीबों की सेवा के लिए कोई पद्मश्री-छद्मश्री पुरस्कार पाएंगे। फिर आपके नीचे भी जब कोई जूनियर डॉक्टर काम करने आएगा तो आप भी उस कुत्ते की तरह दुतकारेंगे। वेरी गुड माई डियर फ्रेण्ड, वेरी गुड। आई कान्ग्रेच्युलेट यू। मैं आपको हार्दिक बधाई देता हूं।"

और गुल्लू सड़क पर टांगें फैलाकर बैठ गया। फिर विपिन को पुकार कर कहा—

"ऐ विपिन, बता साले, तुम्हारे बाप ने तुम्हारा सौदा कितने में तय किया ? साला हिंदी का प्रोफेसर है न तुम्हारा बाप ? गुरुकुल में पढ़ा होगा। तभी साले को पैसे की इतनी भूख है। साठ हजार नगद और गाड़ी ···छि:, साला मरा भी तो साठ हजार पर। साठ हजार तो किसी फाइव-स्टार होटेल में एक रंगीन रात बिताने के लिए भी काफी नहीं है। मेरा बाप साला चार लाख से कम पर सौदा नहीं करेगा···"

विपिन ने आगे बढ़कर उसे उठाना चाहा तो उसने अपने को छुड़ाते हुए कहा, "साले, तू एकदम गधा है। समझे ! अक्लमंद होता तो हिंदी में एम० ए० करता। अब तक लेक्चरर बन गया होता। तुम्हारे बाप का सिक्का सब जगह चलता है। फर्स्ट क्लास फर्स्ट मिलता तुम्हें। बिना हाथ-पांव हिलाए पी-एच० डी० हो जाती। गधा ले बैठा एन्थ्रोपॉलिजी··· अच्छा उस छमिया का क्या हाल है ? प्रोफेसर बन गई या नहीं ?"

नासिर बोला, "बनी नहीं, बनने वाली है। सुना है, वाइस चांसलर को भी फांस लिया है उसने।"

गुरदीप बोला, "वह कोई हूर परी थोड़े ही है कि वाइस चांसलर देखते ही लट्टू हो जाएगा। वाइस चांसलर के पास उससे भी बढ़िया तरो-ताजा माल पहुंचता है। लाइन लगी रहती है।"

जानी बीच में कूद पड़ा, "अबे सालो, क्या छमिया-वमिया का रोना ले बैठे ! यह सब तो चलता ही है। यूनिवर्सिटियों में चलता है। दफ्तरों में चलता है, अस्पतालों में चलता है, पुलिस थानों में चलता है, मंदिर-मस्जिदों, गुरुद्वारों और गिरजों में चलता है। कहां नहीं चलता ? निकालो सब एक-एक रुपया। मजनू टीले से कुछ सामान लाया जाए।"

लड़के अपनी-अपनी जेबें टटोलने लगे तो राजू बोला—

"भई यह सुलफा-गांजा मत लाओ।"

जानी बोला, "यहां क्या हीरोइन मिलेगी ? एल० एस० डी० मिलेगी ?"

"कुछ खाने-पीने का सामान लाओ।" राजू बोला।

"चल बे ! डॉक्टर अभी बना नहीं और नुसखे देने लगा।"

असीम ने बीच में कमेंट किया, "अरे, बंदर क्या जाने अदरक का स्वाद। एक कश खींचो तो तीन लोक नजर आने लगें। शंकर की बूटी के आगे सारी दुनिया झूठी।"

सड़क के बीचों-बीच एक लड़का धड़ाम से गिर पड़ा। रवि और सुमेर ने उसे दौड़कर उठाया। विक्की ने पहली बार कश लिया था। उसे लगा कि हवा में तैर सकता है। स्विमिंग पूल में डुबकी मारने के अंदाज में उसने दोनों हाथ आगे करके छलांग लगाई तो पक्की सड़क पर साष्टांग

दंडवत् की मुद्रा में गिर पड़ा। घुटने छिल गए। माथे से खून बहने लगा। रवि ने जेब से रूमाल निकालकर उसके हाथ-मुंह साफ किए और कपड़े झाड़े।

रवि और सुमेर को पीछे धकेलते हुए विक्की चिल्लाया—

"छोड़ दो मुझे कमीनो ! छोड़ दो। मैं डुबकी मारकर पाताल से वह अंगूठी लाऊंगा जिसे उस कमीने ने मेरी महबूबा की अंगुली से निकल जमुना में फेंक दिया था। जानी यार, मुझे दो कश और दो।"

जानी बोला, "प्यारे, माल खत्म है। जाकर ले आता हूं। एक रुपया निकालो।"

"क्या साला एक रुपये की बात करता है ? दस ले जाओ। मेरी घड़ी ले जाओ। मेरी पतलून ले जाओ। लेकिन जल्दी लाओ माल !"

किसीने बटुवा निकालने के लिए जेब में हाथ डाला, तो खाली जेब की जीभ बाहर लटक गई। कलाई से घड़ी उतारकर बोला, "यह लो···"

"अबे साले, घड़ी अपने पास रख," जानी बोला, "नहीं तो तुम्हारे पापा का हार्ट फेल हो जाएगा।"

सुमेर बोला, "इसका खान दोस्त शम्मी सलामत है, घड़ियों की क्या कमी ?"

"वह तो तिहाड़ में पड़ा है," किसीने कहा।

"अजी नहीं, वह कल छूट आया है। ठाठ से होस्टल में रह रहा है।"

नासिर ने कहा, "किसी मिनिस्टर का फोन गया। बस, दूसरे दिन छूटकर आ गया। आज कह रहा था कि प्रिंसिपल के बच्चे को सबक सिखाऊंगा। उसने झूठमूठ में फंसाया था।"

"झूठ-मूठ में कैसे ?" रवि ने टिप्पणी की, "उसके कमरे से शराब की बोतलें और पिस्तौल मिली। क्या यह भी झूठ है ?"

गुरदीप बोला, "दुनिया जानती है, वह प्रिंसिपल का गुर्गा था। डूटा के मेम्बरों की पिटाई करने के लिए उसे पांच हजार देने का वायदा किया था प्रिंसिपल ने। जब प्रिंसिपल ने पांच हजार के बजाय हजार में काम निकालना चाहा तो शम्मी के गैंग ने उसकी भी धुनाई कर दी।"

"डूटा के सैक्रेटरी मिस्टर गुप्ता के आजकल मजे हैं। दो बॉडी गार्ड मिले हैं।"

"बेचारे की पिटाई भी तो खूब हुई थी। कोई दुबला-पतला आदमी होता तो मर गया होता।"

"अरे, वह भी पुराना खिलाड़ी है। कालेज के दिनों से यूनियन बाजी करता रहा है। याद है जिस साल वह स्टुडेंट यूनियन का प्रेजीडेंट बना था, उस साल चार हफ्ते कैम्पस में धारा 144 लगी थी। रजिस्ट्रार का दिमाग तो उसीने ठीक किया था।"

"यह प्रिंसिपल भी रजिस्ट्रार की तरह अपने को हिटलर से कम नहीं समझता है।"

जानी मजनू के टीले से सामान लेकर लौट आया। अपनी खास चीज के अलावा वह पकौड़े, चना-चबेना और जलेबियां भी लाया था। सड़क से हटकर सब लॉन पर आकर बैठ गए। दो सिगरेट भरे गए और बीच में खाने का सामान रख दिया गया।

गुल्लू ने सिगरेट का कश लेकर अजय की तरफ बढ़ाया। अजय ने सिगरेट को हाथ में लिया, सूंघा और राजू की तरफ देखा। गुल्लू बोला, "अरे उसकी तरफ मत देखो, सूटा मारो। तुम्हारे चेहरे से लगता है, तुम आज बहुत दुखी हो। लगाओ एक दम और डुबा दो सारे गम को।"

अजय ने एक कश लिया। धुआं अंदर जाते ही बेहद घुटन-सी महसूस हुई। धुआं निकालने के बाद उसे गले में खराश से ज्यादा कोई अनुभूति नहीं हुई। अलबत्ता सुगंध अच्छी लगी। एक कश और लगाकर उसने सिगरेट को आगे बढ़ा दिया।

विक्की लॉन में लेटा-लेटा बकने लगा, "जानी यार, तुम मेरे घर जाकर बता देना कि विक्की पाताल से अपनी महबूबा की अंगूठी लाने गया है। जल्दी ही आ जाएगा। और सुन। उस बदनसीब पुष्पा को भी जाकर बता देना कि मेरा इंतजार करे। मैं अंगूठी लेकर जरूर लौटूंगा और फिर उसे घोड़े पर बिठाकर ले जाऊंगा।"

अजय को न जाने क्या हुआ। वह धीरे-धीरे सुबकने लगा और फिर अचानक धाड़ मारकर रो पड़ा, "हाय अरविन्द, तूने यह क्यों किया ?"

राजू ने उसे सम्हाला, "अजय क्या कर रहे हो ? यार चुप रहो ।"

अजय उसके गले से लिपटकर रोने लगा ।

"क्या हुआ इसे ?" रवि ने पूछा ।

"इसका दोस्त था अरविन्द," राजू ने बताया, "वेचारा अंग्रेजी में फेल हो गया । आज उसने फांसी लगा ली ।"

"कहां ?" सुमेर ने आगे बढ़कर पूछा ।

"मोती बाग में रहता था ।"

अजय रोए जा रहा था । लड़के उसे जितना समझाने की कोशिश करते, उसकी रुलाई उतनी ही बढ़ जाती ।

जानी बोला, "अरे, उसे रोने दो । रोने से दिल हलका होगा। अरविन्द के मां-बाप, भाई-बहिन भी तो रोए होंगे । आदमी रोएगा नहीं तो पागल हो जाएगा। अरविन्द अकेला तो नहीं फांसी लगाने वाला। इस देश में हर साल सैकड़ों-हजारों लड़के-लड़कियां आत्महत्या करते हैं । कोई फांसी लगाकर, कोई जहर खाकर, कोई कपड़ों में आग लगाकर, कोई गाड़ी के आगे छलांग लगाकर । कोई परीक्षा में फेल होने पर आत्महत्या करता है, कोई नौकरी न मिलने पर, कोई महबूबा के छिन जाने पर । किसने रखा है इन सब का हिसाब ? कौन रोया है इनके लिए, सिवाय घर वालों के ? यह मन्त्री, यह लीडर, प्रोफेसर, वाइस-चांसलर, प्रिंसीपल, अखबार-नवीस, अफसर, लेखक, पुरोहित, पण्डे-पुजारी किसकी सेहत पर कोई असर पड़ा है इनके मरने से ? सबके सब साले मोटे होते जा रहे हैं । सबने इन्हें अपने फायदे के लिए इस्तेमाल किया है । ये लोग जिनके बारे में हमें बचपन से सिखाया जाता है कि पूज्य हैं, देवता हैं, साले सबके सब जड़-पत्थर हैं । आदमी के मरने का इनपर कोई असर नहीं होता । लाखों लोग हर साल भूख से मरते हैं, बाढ़, लू, सरदी-फ्लू से मरते हैं, दंगों में मरते हैं, चौराहों में कुचलकर मरते हैं, खान खोदते मरते हैं, बिना दवा-दारू के मरते हैं, दर्शनों के लिए इकट्ठी भीड़ में कुचलकर मरते हैं और उनसे नहीं तो पुलिस की लाठियों और गोलियों से मरते हैं । मेरा बाप साहब लोगों के घर में एयरकण्डीशन चलाए रखने के लिए बिजली के तार से लटककर मर गया था । दो घण्टे उसकी लाश हवा में लटकी रही ।

हजारों तमाशबीन जमा हुए लेकिन रोया कौन ? कोई नहीं ।"

जानी का गला भर आया। आवाज थोड़ी देर के लिए रुकी, फिर वह धाड़ मारकर रो पड़ा। उसका रोना सारी मण्डली के लिए अनहोनी बात थी। जानी को किसीने रोते नहीं देखा था। उसे उसके साथियों ने हंसते देखा था, नाचते-गाते देखा था, गाली-गलौज करते देखा था, मार-पिटाई करते देखा था। यूनिवर्सिटी के मशहूर गुण्डे और जालिम रीडर-प्रोफेसर उसे एक सख्त जान का आदमी मानकर डरते थे। लेकिन सुलफे के धुएं ने उसके भीतर छिपे असली आदमी को बेनकाब कर दिया था।

हंसी-मजाक का वातावरण काफी गम्भीर हो गया। राजू ने जानी का सिर अपनी गोद में लेकर कहा—

"रो मेरे प्यारे दोस्त, आज जी भरकर रो ले। देख जब तिनका रोता है, तो लोग शबनम कहकर उसकी खूबसूरती पर लट्टू होते हैं। लेकिन जब पहाड़ रोता है तो भयानक बाढ़ आती है। चट्टानें सरकती हैं, बरसों की जमी काई धुल जाती है, झाड़-झंखाड़, कूड़ा-करकट सब बह जाता है। कूल-किनारे टूट जाते हैं। इस देश को भी, इस समाज को भी बाढ़ की जरूरत है। सब जगह काई, कूड़ा, गन्दगी जमा है। स्कूल-कालेजों में, समाज और राजनीति में, मन्दिर और मसजिदों में, पुलिस और कचहरी में सब जगह गन्दगी के ढेर लग गए हैं और उनपर कीड़े पल रहे हैं, मक्खियां भिनभिना रही हैं, चील, कौवे और गीध जुट रहे हैं, कुत्ते, गीदड़ और सूअर जमघट किए हुए हैं। अरविन्द ने फांसी लगा ली। अजय अभी थोड़ी देर पहले जमुना में छलांग मारने वाला था। विक्की जिस लड़की से प्यार करता था उसे एक बूढ़े-खूसट प्रोफेसर ने लालच दिखाकर गुमराह कर दिया और वह पाताल जाना चाहता है। यह हार, यह टूटन, यह लाचारी इस कूड़े की दी हुई है जानी, जो चारों तरफ जमा हो गया है। चलो कुछ नया काम करें, नये अन्दाज से जिएं जिससे यह कूड़ा-कर्कट बह जाए।"

जानी ने अपनी आंखें पोंछीं और वह तनकर खड़ा हो गया, "राजू, तुम जहां चाहो, ले चलो। मैं आज से न दो कौड़ी की डिग्रियों के पीछे भागूंगा और न नौकरी की तलाश में भटकूंगा। तीन महीने नौकरी की तो

पता चला ऊंची, डिग्री लेकर अनपढ़ और बेवकूफ आदमी की नौकरी करना कितना बड़ा अपमान है। आठवीं तक पढ़ा बनिया बड़े से बड़े डिग्रीधारी को खरीद सकता है और उसका इस्तेमाल तस्करी, चोर-बाजारी, मुनाफा-खोरी और हर तरह के दूसरे पाप-कर्मों में कर सकता है। वह बड़े से बड़े अफसर को खरीद सकता है, बड़े से बड़े वकील और जज को खरीद सकता है, प्रिंसिपल, प्रोफेसर और वाइस-चांसलर को खरीद सकता है, सारे बुद्धि-जीवियों को खरीद सकता है। फिर इन डिग्रियों के लिए इतनी हाय-तौबा क्यों? इस शिक्षा को इतनी अहमियत क्यों कि बच्चा फेल हो तो आत्म-हत्या की बात सोचने लगे?"

राजू ने जानी का हाथ अपने हाथ में लिया और कहा—

"वायदा करो जानी कि जब तक जान में जान है, इस घिनौनी व्यव-वस्था को बदलने के लिए काम करोगे। इसके लिए भूखे रहेंगे, लोगों का अपमान सहेंगे, जेल जाएंगे और जरूरत पड़ी तो जान भी देंगे।"

जानी ने राजू का हाथ कसकर पकड़ लिया।

गुल्लू जो अब तक लॉन में लेटा अपने ही कल्पना-लोक में विहार कर रहा था, तड़ाक से उठा और राजू तथा जानी के बीच आ खड़ा हुआ।

"तुम सब साले झूठे हो, मक्कार हो, डरपोक हो," वह गरजने लगा।

जब तक नौकरी नहीं मिलती तब तक दुनिया को बदलने की बड़ी-बड़ी बातें करते हो। जब नौकरी मिल जाती है तो चूहों की तरह दया, धर्म और नीति की चूं-चूं करने लगते हो। यही साला विक्की जो महबूबा की अंगूठी ढूंढ़ने के लिए पाताल तक डुबकी लगाना चाहता है, डैडी-मम्मी का आज्ञाकारी बेटा बनकर बिरादरी में शादी करेगा और दहेज में कार, फ्रिज और क्या-क्या लेने की जिद्द करेगा। यही राजू डाक्टर बन जाएगा तो अच्छी कमाई करने के लिए इंग्लैण्ड, अमरीका, कनाडा चला जाएगा या यहीं किसी अस्पताल में नकली दवा-फरोशों का दलाल बनकर ढेर सारा पैसा कमाएगा। यही साला जानी जब कोई सरकारी अफसर बन जाएगा, तो बिजली के तार से लटकते अपने बापू की लाश को भूल जाएगा और फुटपाथों पर पड़ी जिन्दा लाशों को ट्रक में भरकर शहर के बाहर फेंक आएगा। यह सब बकवास है, इन बातों में कोई दम नहीं है। रास्ता एक

ही है, शंकर की बूटी का सेवन करके मस्त रहो और इस दुनिया जहन्नुम में जाने दो।"

गुल्लू की बातों से राजू को तैश आ गया, वह बोला—"गुल्लू, आदमी सपने बड़े-बड़े देखता है लेकिन सब सपनों को साकार नहीं कर सकता। यही जिन्दगी का द्वन्द्व है। इसका मतलब यह नहीं कि हमें सपने नहीं देखने चाहिए। मैं मानता हूं कि सपनों को साकार करने में हम कोशिश न करें, सिर्फ हाथ पर हाथ धरे बैठे रहें, तो हमारा सपने देखने का कोई मतलब नहीं है। कोशिश करते हुए वह हार जाता है तो मैं उसे दोष नहीं मानता। लेकिन कोशिश से बचकर अगर वह धर्म, ईश्वर, अफीम, चरस किसीके नशे में अपने को डुबो देता है तो मैं उसे इन्सान नहीं, केंचुआ कहूंगा जो समस्या से डरकर अपनी कुंडली में छिप जाता है।"

"तुम्हारा मतलब, मैं केंचुआ हूं ?" गुल्लू की जबान लड़खड़ा गई।

"नहीं, मेरा मतलब सिर्फ इतना है", राजू बोला, "कि दूसरों की बात मैं नहीं कहता, मैं अगर वैसा करने लगूं तो मुझे गोली मार देना। एक दोस्त के नाते मैं तुम्हें कसम देता हूं।"

राजू की कसम ने गुल्लू के भीतर किसी मार्मिक स्थल को कुरेद दिया।

कुछ देर राजू की आंखों में डूबने के बाद वह बोला—

"तुम यह बात इसलिए कह रहे हो न कि मैं डरपोक हूं। तुम जानते हो कि मैं गोली नहीं चला सकता। मैं यह भी नहीं जानता कि पिस्तौल को कैसे पकड़ा जाता है। राजू···मेरे दोस्त, मैं तुम्हारी कसम को जरूर निभाऊंगा अगर तुम मुझे पिस्तौल चलाना सिखा दो। मैं सबसे पहले अपने बाप से निपटना चाहता हूं जिसने बुढ़ापे में एक खूबसूरत लेडी डाक्टर से इश्क करके मेरी मां को 'स्लो प्वाइजन' दिया था।"

गुल्लू यह कहते-कहते बच्चे की तरह रो पड़ा। राजू ने उसके कन्धे पर हाथ रखा। जानी ने उसे सम्हाला। विक्की घबराकर उठ खड़ा हुआ। अजय अरविन्द को पल-भर के लिए भूलकर गुल्लू की मां के बारे में सोचने लगा। फिर राजू ने कहा, "चलो, रात गहरा गई है।"

मण्डली चुपचाप लॉन से उठकर सड़क की ओर चल दी।

सात

पिछले वित्त-वर्ष में सौन्दर्य प्रतियोगिताओं के लिए बजट में मिली तीस लाख रुपये की रकम डॉ० श्याम मोहन की अयोग्यता की वजह से बेकार गई थी। नगरश्री निदेशालय के डायरेक्टर श्री दयानिधि शर्मा को ऊपर के अधिकारियों के आगे इसकी सफाईदेनी पड़ी थी। हालांकि उन्होंने सारा दोष डॉ० श्याम मोहन पर डालकर अपनी खाल बचा ली लेकिन वतनी साहब और सलाहकार समिति के अन्य सदस्य जल-भुन गए थे। कारण यह था कि उन्होंने सौन्दर्य प्रतियोगिताओं के नाम पर कई लोगों से कई प्रकार के वायदे कर रखे थे और योजना के अधर में रह जाने के कारण उन्हें कई लोगों के आगे नीचा देखना पड़ा था।

इस बार साल के शुरू से ही वे दयानिधि शर्मा पर जोर डालने लगे कि जल्दी-जल्दी वित्त विभाग से मंजूरी ली जाए और प्रतियोगिताओं की तैयारी शुरू कर दी जाए। श्याम मोहन पर वे मिस्टर शर्मा के माध्यम से जोर डलवाते थे कि वे कागजी कार्रवाई में तेजी लाएं। लेकिन श्याम मोहन अपनी रफ्तार से चल रहे थे। वित्त विभाग को स्वीकृति के लिए पत्र भेजने के बाद वे महीने में एक स्मरण पत्र भेजने के अलावा कुछ नहीं कर रहे थे।

वतनी साहब ने अपने सम्बन्धों का उपयोग करके पिछले साल की सलाहकार समिति को चालू साल के लिए भी ऊपर के अधिकारियों से मंजूर करा लिया था। इस समिति में सचिव तारकनाथ और डायरेक्टर दयानिधि शर्मा को तो रखा ही था, समिति के अन्य गैर-सरकारी सदस्य भी वतनी साहब के ही आदमी थे। इनमें वतनी साहब के अलावा अन्य दो स्वतन्त्रता-सेनानी थे, शहीद साहब और सरफरोश साहब। दोनों सज्जन वतनी साहब के प्रयत्नों से पेंशनधारी बने थे। सामाजिक कार्यकर्ताओं की प्रतिनिधि के रूप में मिसेज खन्ना को रखा गया था। इनके अतिरिक्त राजधानी के सुप्रसिद्ध पांच-सितारा होटल 'कुमारी प्रभा' के मालिक निर्मलसिंह और एक प्रसिद्ध मोटर कम्पनी क मालिक जयरथ को भी

समिति में शामिल किया गया था। एक पत्रकार प्रतिनिधि की जगह खाली थी क्योंकि पिछले साल जिन पत्रकार महोदय को नारी-सौन्दर्यबोध की ख्याति के कारण समिति में रखा गया था, वे एक विदेशी दूतावास की तरफ से विदेश भ्रमण पर गए थे और वहां यथार्थ को भोगते हुए किसी गुप्तरोग का इलाज कराने के लिए कई दिनों से अस्पताल में पड़े थे। उनके स्थान पर अपनी सेवाएं अर्पित करने के लिए कई बूढ़े और नौजवान पत्रकार वतनी साहब से सम्पर्क कर चुके थे, लेकिन वतनी साहब ने अभी कोई निर्णय नहीं लिया था।

नगर प्रशासन विभाग के केन्द्रीय मन्त्री ने अपनी एक प्रेस कान्फ्रेंस में नगरश्री निदेशालय की सौन्दर्य-प्रतियोगिताओं को चालू वर्ष की महत्त्वपूर्ण घटनाएं कहकर प्रचारित कर दिया था। समाचारपत्रों में उस खबर को दो कालम का शीर्षक देकर पहले पृष्ठ पर छापा गया था। साधारण जनता में इनके बारे में तरह-तरह के अनुमान लगाए जा रहे थे। वामपन्थी विरोधी दल के नेताओं ने धनी वर्ग के चोंचले कहकर इस कार्यक्रम की निन्दा की थी और पूंजीपतियों तथा व्यापारियों के समर्थक दक्षिणपन्थी दलों ने इसमें विदेशी पूंजी के लाभ से लेकर, आर्थिक विकास को 'बूस्ट' मिलने तक की अनेक सम्भावनाएं देखी थीं। प्रतियोगिताओं के व्यापक चर्चा का विषय बन जाने के पीछे वतनी साहब की जनसम्पर्क योग्यता थी। उनकी योजना थी कि इसपर इतनी चर्चा समाचारपत्रों में हो जानी चाहिए कि इस साल इनका आयोजन सरकार की इज्जत का सवाल बन जाए। अब तक वे अपने लक्ष्य में काफी सफल रहे थे।

वतनी साहब के कहने पर सलाहकार समिति की पहली बैठक बुलाई गई थी। कुमारी प्रभा होटल के मालिक श्री निर्मलसिंह ने बैठक के लिए अपने होटल का कमरा देने का नम्र प्रस्ताव किया था और सदस्यों के लिए लंच की व्यवस्था की थी।

दोपहर को एक बजे कुमारी प्रभा होटल में बैठक थी। उसमें शामिल होने के लिए दफ्तर के अफसर और कर्मचारी लालायित हो रहे थे क्योंकि कुमारी प्रभा होटल नगर का सर्वश्रेष्ठ होटल माना जाता था और उसमें लंच करने का अवसर किसी खुशकिस्मत को ही मिल सकता था।

मिस्टर वर्मा ने तो पिछले दिन ही बड़े साहब को यह कहकर पटा लिया था कि डॉ० मोहन को अभी मीटिंगों का अनुभव नहीं है और फिर उनका रवैया भी कुछ अजीब है। बड़े साहब मिस्टर शर्मा ने मिस्टर वर्मा को सारी व्यवस्था सम्हालने का काम दे दिया था। आज सुबह जब वे दफ्तर आए तो उनकी वेश-भूषा से लग रहा था कि वे किसी बड़े उत्सव के लिए तैयार होकर आए हैं। हालांकि दीवाली कुछ दिन पहले हुई थी और गरम सूट पहनने लायक सरदी अभी शुरू नहीं हुई थी, लेकिन मिस्टर वर्मा गरम सूट पहनकर आए थे। कालर पर गुलाब की एक कली और टाई की जगह पर बो लगी थी जिसे वे अपने पुराने वक्तों की निशानी बताते थे जब वे एक रजवाड़े के साथ सम्बद्ध थे और शाही पार्टियों में बो पहनकर जाया करते थे। बढ़िया इतर की महक उनके आस-पास बिखरी थी। मिस्टर कपूर और मिस्टर फ्रैंकदास ने वर्मा से कहा था कि बैठक में उनका मौजूद रहना भी जरूरी होगा क्योंकि सैक्रेटरी साहब आएंगे और वे दूसरी स्कीमों के बारे में भी कुछ पूछ सकते हैं। मिस्टर वर्मा ने उन्हें बड़े साहब के पास भेजा था और वहां से वे झाड़ खाकर लौट आए थे। प्रशासनिक मामलों के इन्चार्ज मिस्टर खुल्लर की राय थी कि उनका वहां मौजूद होना जरूरी हो सकता है क्योंकि कौन से नियम के अन्तर्गत क्या काम किया जा सकता है और क्या नहीं, इस पर वही मशविरा दे सकते थे। रस्तोगी साहब बैठक में लेखन-सामग्री बांटने और चायपान की व्यवस्था करने के लिएजाना चाहते थे। कपूर और फ्रैंकदास को बड़े साहब से मिली फटकार की खबर सुनकर उन्होंने अपना इरादा बदल दिया था।

लेकिन जिस व्यक्ति ने मजाक-मजाक में इस योजना को जन्म दिया था और जिस पर बाद में इस अवैध शिशु के लालन-पालन की जिम्मेदारी थोप दी गई थी, वह इस बैठक के विषय में निर्विकार था। सुबह आते ही उसने प्रतियोगिताओं की योजना की फाइल निकालकर मेज पर रखी थी और वह कैंटीन की तरफ निकल गया था।

कैंटीन में अपनी रोज की मेज पर आज वह अकेला ही बैठा था। कुशक तीन दिनों से दफ्तर नहीं आ रहा था इसलिए श्याम मोहन को

अकेले ही चाय पीने आना पड़ा था। दफ्तर से दो दिन की आकस्मिक छुट्टी तो आम बात समझी जाती है लेकिन कोई तीसरे दिन भी दफ्तर नहीं आता तो साथी लोग उसकी खैर-खबर पूछने लगते हैं। श्याम मोहन ने भी आज आते ही कुशक के बारे में अनुभाग के लोगों से पूछताछ की थी और कुछ पता न चलने पर उसे चिंता होने लगी थी। वैसे वह पिछले दो दिनों में उसके घर जाने की बात सोचता रहा था लेकिन रेखा की वजह से उसे अपना कार्यक्रम स्थगित करना पड़ा था।

रेखा आई० ए० एस० की परीक्षा में उत्तीर्ण हो गई थी और उसका नाम भी योग्यताक्रम में काफी ऊपर था। रेखा को सफलता पर इतनी खुशी थी कि वह पिछले दो दिनों में सारी परेशानियों को भूलकर घूमने-फिरने, पिक्चर देखने और शापिंग करने में व्यस्त रही थी और श्याम मोहन को अपनी शामें उसके साथ बितानी पड़ी थीं। श्याम मोहन को भी रेखा की सफलता से बहुत प्रसन्नता हुई थी लेकिन उस प्रसन्नता में सब कुछ भूलने जैसा उत्साह नहीं था। वस्तुतः श्याम मोहन की प्रसन्नता में एक अबूझ-सी उदासी भी थी जो रेखा की चौकस नजरों से छिपी नहीं रही।

पिछली शाम स्टैंडर्ड में बैरे को खाने का आर्डर देने के बाद रेखा ने पूछा था—

"क्या बात है श्याम, तुम्हें मैं उतना खुश नहीं देख रही हूं जितना देखना चाहती थी।"

श्याम मोहन ने मुस्कराकर कहा था, "भई, यह तो अपनी सूरत का ही कसूर हो सकता है।"

"सूरत तुम्हारी हर रोज तो बदलती नहीं। हां, मूड बदलता है और उसका पता सूरत से चल जाता है। बोलो न, तुम क्या सोच रहे हो?"

श्याम मोहन ने बहानेबाजी करनी चाही लेकिन रेखा को वह आश्वस्त नहीं कर सका था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि पिछले दो दिनों से वह एक बेचैनी-सी महसूस कर रहा था और उस बेचैनी का सम्बन्ध भी रेखा के आई० ए० एस० पास होने से था। अपने एकांत क्षणों में उसने आत्म-

विश्लेषण करके इसे बेबुनियाद सिद्ध करने की कोशिश की थी, पर उसमें उसे सफलता नहीं मिली थी।

रेखा के बार-बार कहने पर श्याम मोहन ने बताया कि उसे रेखा के खो जाने का डर लग रहा है। रेखा इसपर खिलखिलाकर हँस पड़ी थी; बोली थी, "तुम्हारे दिमाग में हमेशा कुछ-न-कुछ फितूर उठता रहता है। तुम हमेशा कुछ बेतुकी बातें सोचते रहते हो।"

"इसमें बेतुका क्या है?" वह बोला, "तुम उस वर्ग में प्रवेश कर रही हो जो दो नम्बर के राजाओं और नवाबों का वर्ग है। तुम्हें जल्दी ही इस वर्ग के मूल्यों को अपनाना पड़ेगा, इसके चरित्र को अपनाना पड़ेगा और तब तुम पुरानी रेखा नहीं रहोगी, नई रेखा बन जाओगी। तुम सामानांतर रेखा बन जाओगी, हमेशा कुछ दूरी रखने वाली।"

"श्याम—!" वह कहते-कहते रुक गई। उसकी आवाज रुद्र हो गई। बड़ी मुश्किल से उसने अपने पर काबू रखा। फिर भी दो-चार बूंदें आंखों से टपक ही पड़ीं। साड़ी के पल्लू से जल्दी-जल्दी उन्हें पोंछकर वह बोली—

"तुम कभी-कभी बहुत छोटी बातें करते हो। मैं इस बात को कैसे भूलूंगी कि रेखा जो कुछ है, सिर्फ तुम्हारी वजह से है, इसपर सिर्फ तुम्हारा अधिकार है।"

श्याम मोहन को पश्चात्ताप हो रहा था कि उसने यह प्रसंग क्यों छेड़ा। रेखा का भावुक स्वभाव उससे छिपा नहीं था। हर लड़की इस उम्र में भावुक होती है। लेकिन यह भावुकता अच्छी नहीं होती। जिंदगी की असलियत से जब सामना होता है तो भावुकता एक बवाल बन जाती है। उसे रेखा की भावुकता से ही ज्यादा खतरा था। इसलिए जब उसने अधिकार की बात कही तो वह चुप नहीं रह सका। "अधिकार की बात मत करो," वह बोला, "मुझे यह शब्द अच्छा नहीं लगता। एक व्यक्ति का दूसरे व्यक्ति पर अधिकार हो, मुझे यह पसन्द नहीं है भले ही वे दो व्यक्ति बाप-बेटा हों, प्रेमी-प्रेमिका हों, पति-पत्नी हों या मालिक नौकर हों।"

रेखा ने उसकी तरफ ध्यान से देखा, फिर बोली—

"तुम यह क्यों नहीं कहते कि मुझसे पीछा छुड़ाना चाहते हो?"

श्याम मोहन के दिल में यह बात चुभ गई।

वह सोच ही रहा था कि रेखा उसकी बात का गलत अर्थ लगाएगी। वह बोला, "तुम्हारे साथ यही तो मुश्किल है कि तुम बात को तोड़-मरोड़कर बिलकुल बदल देती हो। तुम समझती हो मेरा-तुम्हारा रिश्ता ऐसा है कि हम जब चाहें, उसे झटककर तोड़ दें? यह काम न तुम्हारे लिए आसान होगा, न मेरे लिए। लेकिन मेरा अटूट रिश्ते या शाश्वत रिश्ते जैसी किसी चीज पर विश्वास नहीं है। अटूट रिश्ते का मतलब है गतिहीन जिन्दगी और इसमें और मौत में कोई खास फर्क नहीं है। जिन्दगी में स्थितियां बदलती हैं, स्थितियों के साथ सम्बन्ध बदलते हैं। हमें इस सत्य को स्वीकार करना चाहिए। अधिकार शब्द में मुझे गुलामी के स्थायी रिश्ते की गंध आती है।"

रेखा फफक पड़ने को हो रही थी। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि श्याम मोहन इस तरह की बातें अचानक क्यों करने लगा। वह बोली—

"मैं मानती हूं श्याम, तुम्हारा दर्शन मेरी समझ में नहीं आता। तुम क्या सोचते हो, तुम्हारे भीतर क्या उथल-पुथल होती है, इतने दिनों के परिचय के बाद भी तो नहीं समझ सकी। लेकिन इतना तो अनुमान लगा ही सकती हूं कि तुम्हें मेरा आई० ए० एस० पास करना अच्छा नहीं लगा।"

"इस अनुमान के लिए तुम्हारे पास क्या आधार है?"

"आधार यही है कि तुमने आई० ए० एस० में बैठने का सुझाव भी मजाक में दिया था। तुम इस वर्ग से ही घृणा करते हो।"

वर्ग से घृणा करने का मतलब उस वर्ग के व्यक्ति से घृणा करना तो नहीं होता।"

"वह अपने-आप होने लगती है।"

"मानता हूं, अक्सर ऐसा होता है लेकिन यह ध्रुव सत्य नहीं है। जो आदमी अपने वर्ग-चरित्र में बन्दी रहते हैं उनमें ऐसा होता है, लेकिन वर्ग-चरित्र से ऊपर उठकर या बाहर निकलकर भी व्यक्ति काम कर सकता है।"

"फिर आप यह क्यों नहीं मानते कि मैं भी वैसा व्यक्ति हो सकती हूं।"

"मैं इन्कार कहां कर रहा हूं। मैं प्रत्येक व्यक्ति में इस संभावना को मानकर ही चलता हूं। ऐसा न हो तो इस जिन्दगी में आस्था बनाए रखने के लिए क्या बचेगा ?"

"ऐसा है, तो मुझे खोने की बात तुम्हारे मन में कैसे आई ?"

"इसलिए कि दुनिया हमारे चाहे अनुसार नहीं चलती। हम चाहते हैं कोई बात न हो, फिर भी वह हो जाती है। अक्सर तो ऐसा ही होता है। चाही हुई बात तो कभी-कभार ही होती है। इसलिए उसकी आशंका भी रहती है और उसके लिए आदमी को तैयार भी रहना चाहिए।"

"आप उसके लिए, जिसे मैं अनहोनी कहूंगी, अपने को तैयार कर चुके हैं ?"

"फिलहाल तो नहीं। भविष्य में कर पाऊंगा, यह भी विश्वास से नहीं कह सकता। लेकिन विचार के स्तर पर तो यह कह ही सकता हूं कि अपने को तैयार करना चाहिए।"

रेखा चुप हो गई। सिर झुकाकर खाना खाती रही। श्याम मोहन की तरफ देखने का भी उसे साहस नहीं हुआ। उसे लगा कि बात घूम-फिरकर वहीं आ गई है। श्याम मोहन के मन में दुविधा पैदा हो गई है।

रेस्तरां से बाहर निकलकर वे फुटपाथ पर चलने लगे तो श्याम मोहन ने ही चुप्पी तोड़ी।

"देखो रेखा···तुम न जाने क्या-क्या सोचने लगी हो। मेरा मतलब कतई यह नहीं है कि मैं अब तुमसे अलग होना चाहता हूं। लेकिन मैं यह जरूर चाहता हूं कि तुम अपने मन से यह विचार निकाल दो कि तुम किसी तरह मुझसे बंधी हुई हो। मैं चाहता हूं तुम अपने स्वतन्त्र मन से परिस्थितियों के अनुसार अपना रास्ता, बिना किसी वचनबद्धता के, तय कर सको। अपनी तरफ से मैं इतना आश्वासन दे सकता हूं कि जब भी तुम्हें मेरी जरूरत होगी, मुझे प्रतीक्षा में खड़ा पाओगी।"

रेखा ने श्याम मोहन का हाथ पकड़ लिया मानो उसके लड़खड़ाते

कदमों को सहारे की जरूरत थी। दोनों चुपचाप बस स्टाप पर आ गए।

रेखा को बस में बिठाने के बाद उसने अपने घर के लिए बस पकड़ी। माल रोड के करीब आने पर उसे कुशक की याद आई थी और वहीं उतरना चाहता था। लेकिन उस वक्त दस बज रहे थे, इसलिए उसने कुशक के घर जाने का इरादा छोड़ दिया था।

राजू के तीसरी बार फेल होने के बाद कुशक को बहुत निराशा हुई थी। हालांकि बातचीत में वह निराशा को प्रकट होने नहीं देता था लेकिन श्याम मोहन जानता था उसका दिल टूट गया है। टूटा तो राजू का दिल भी जरूर होगा पर राजू ने अपना मन किसी दूसरी तरफ मोड़ लिया था। वह क्या करता है, दिन-भर कहां रहता है, घर में कोई नहीं जानता था। न घर में कोई यह बात पूछता था और न वह स्वयं इस विषय में बात करता था। कुशक को डर लगा रहता था कि वह इस बारे में राजू से ज्यादा पूछताछ करेगा तो हो सकता है वह घर से भाग जाए या कुछ और कर बैठे। कालेज में उसे एकाध लेक्चर एटेंड करना होता था और उसकी भी कोई पाबंदी नहीं थी क्योंकि उसे एक ही प्रश्नपत्र की परीक्षा देनी थी।

उन दिनों जब राजू का परीक्षा-परिणाम निकला था, कुशक चार दिन तक दफ्तर नहीं आया था। श्याम मोहन तीसरे दिन उसके घर गया तो पता चला कि वह तीन रात बिलकुल नहीं सोया है। दिन में तो वह अपने कमरे में बैठा सोचता रहता या लिखता-पढ़ता रहता, रात को बिस्तर पर पड़े-पड़े करवटें बदलता। चौथे दिन से उसे नींद की गोली रात को लेनी पड़ी थी। कई दिनों तक यह सिलसिला चला था। उस बेहद तनाव की स्थिति में उसने कई कविताएं भी लिखी थीं लेकिन वह कहता था, वे पत्रिकाओं में छपने लायक नहीं हैं। वह कहता था ये कविताएं मैंने अपने लिए लिखी हैं। दूसरों के लिए इनका शायद कोई उपयोग नहीं होगा, इसलिए इनको प्रकाशित करने का इरादा नहीं है। श्याम मोहन को उसने एक कविता सुनाई थी जो अध्यापकों पर लिखी गई थी। श्याम मोहन ने अपने लिए वह कविता एक कागज पर लिखो ली थी और उसे भी उसने अपनी मेज पर कांच के नीचे रख लिया था। कविता का शीर्षक था 'आचार्यदेवो भव' और उसके शब्द इस प्रकार थे :—

मुझे याद है
जब पहली बार आपसे
हुआ था साक्षात्कार
श्रद्धा से मेरा सिर झुक गया था
यह जानते हुए कि
आप पिता से भी ऊंचे
और ईश्वर से भी बड़े हैं
मुझे पशु से मानव बनाएंगे
अंधकार से रोशनी में ले जाएंगे ।
और आपने जो कुछ कहा
मैंने स्वीकार किया
आपके हर उपदेश को पिया
यह मानते हुए कि
आदमी बनने के लिए
यह सब जरूरी है ।
लेकिन क्षमा करें
अब मुझसे वह नहीं होगा
आपके मुंह से सुनकर उपदेश
आने लगती है उबकाई
विराट नगरी के हिजड़ों की भीड़
और कटे अंगूठों का ढेर
देखने के बाद
मैं हर उपदेश को थूक चुका हूं ।
मुझे याद है
जब पहली बार आपने दिया था
शब्द का जादुई चिराग
मुझे लगा था कि
आप हैं ज्योतिमय ब्रह्म साकार
देख रहे क्षितिज के आर-पार

आपके एक इशारे से
हृदय के बन्द कपाट
खुल जाएंगे
आप मेरे जीवन को
सार्थक बनाएंगे।
लेकिन क्षमा करें
वह मेरा भ्रम था
आप जहां खड़े थे
आज भी खड़े हैं
क्षितिज के पार क्या है
आपकी बला से
आप सिर्फ टीन के सिपाही
बनाते हैं
और उनमें चाबी भर
बुलडोजरों से कुचले जाने के लिए
चौराहों पर लुढ़काते हैं।
नौकरी बजाते हैं।

श्याम मोहन जानता था कि कुशक कविता न लिखता तो पागल हो जाता। उसने न जाने कितना विष इस समाज में, स्कूल, कालेज और दफ्तर में पिया था। इस विष को उसने अपनी कविता के बल पर पचाया था वह विषपायी था और कविता उसकी संजीवनी थी। फिर भी वह कुशक के बारे में अत्यधिक चिन्तित रहता था क्योंकि वह जानता था कि अत्यंत संवेदनशील और ईमानदार आदमी के लिए इस दुनिया में पागल होने के सिवा कोई चारा नहीं है।

विचारों में डूबा हुआ श्याम मोहन भूल गया था कि वह कैंटीन में बैठा है और दफ्तर में उसकी तलाश हो रही होगी। परमात्मा ने आकर उसे बताया कि बड़े साहब ने मीटिंग वाली फाइल मंगवाई है।

वह दफ्तर पहुंचा तो देखा, वहां तूफान खड़ा हो गया है। दफ्तर का जैसे हर आदमी डा० मोहन को पकड़कर लाने के लिए बेचैन था। हुआ

यह कि बड़े साहब ने चपरासी को भेजकर डा० मोहन को बुलाया तो पता चला, वे कमरे में नहीं हैं। बस वे चपरासी पर बरस पड़े। फिर डिप्टी डायरेक्टर मिस्टर वर्मा को बुलाकर उन्हें झाड़ दिया कि लोग जरूरी मीटिंग के दिन भी सीट से गायब रहते हैं और उनपर कोई निगरानी नहीं रखता। मिस्टर खुल्लर को बुलाकर एक आदेश जारी करने के लिए कहा दफ्तर के समय जो चाय पीने जाए उसके खिलाफ अनुशासनिक कार्रवाई की जाएगी। डा० मोहन के अनुभाग के तीन सहायकों को बुलाकर डांटा कि मीटिंग के कागजात तैयार क्यों नहीं हुए।

मोहन अपने कमरे में पहुंचा तो इतर की महक बिखेरते हुए मिस्टर वर्मा कमरे में घुस आए।

"मिस्टर मोहन ! आप कहां रहते हैं ? साहब गुस्से में भन्नाए हुए हैं। आज की मीटिंग के कागजात कहां हैं ? आप तो सबकी नौकरी ले लेंगे।"

मिस्टर वर्मा की हड़बड़ाहट को देखकर मोहन को हँसी आ गई। उनकी बो और ऊपर से नीचे तक खास मौके के लिए सुसज्जित देहयष्टि को देखकर बोले, "अरे यार, आज तो गजब ढा रहे हो।"

लेकिन मिस्टर वर्मा को तो पतलून के भीतर कंपकंपी हो रही थी।

"मिस्टर मोहन···यह मजाक का वक्त नहीं है," उन्होंने रौब गांठने की कोशिश की, "मीटिंग में एक घंटा बाकी है। सेक्रेटरी साहब आने वाले हैं। कागज तैयार नहीं होंगे तो सबकी छुट्टी हो जाएगी।"

श्याम मोहन ने गौर से मिस्टर वर्मा की तरफ देखा। उनकी बदली हुई आवाज और बदले हुए रुख से उसने अनुमान लगा लिया कि वे वेश-भूषा से ही नहीं, काम से भी अपने को बॉस जताना चाहते हैं। उसने मेज पर पड़ी फाइल को उठाकर उसे वर्मा के हाथ में थमाते हुए कहा, "फाइल तो मेज पर रखी थी। सारा आसमान सिर पर उठाने की क्या जरूरत थी ?"

मिस्टर वर्मा बिना उत्तर दिए फाइल उठाकर बाहर हो गए। सीधे बड़े साहब के कमरे में घुसे और बोले—

"लीजिए सर, मैं फाइल ढूंढ़ लाया हूं।"

बड़े साहब बौखलाकर बोले, "फाइल ढूंढ लाए तो कौनसा कमाल

कर दिया। मिस्टर मोहन कहां हैं?"

"मिस्टर मोहन कमरे में बैठे हैं सर!"

"कमरे में बैठे-बैठे क्या अंडे से रहे हैं? उन्हें पता नहीं कि मीटिंग में चलना है।"

दोनों की बातें बगल वाले कमरे में मोहन के कानों में पड़ रही थीं। बड़े साहब की आखिरी बात सुनकर श्याम मोहन उठा और सीधा बड़े साहब के कमरे में घुस गया। उसे देखकर मिस्टर शर्मा कुछ परेशान-से दिखे और फिर फाइल पढ़ने लगे।

"मिस्टर शर्मा," श्याम मोहन खड़े-खड़े बोला, "आपको सभ्य लोगों की भाषा सीखने का कभी मौका न मिला हो तो मेहरबानी करके अपनी टूटी-फूटी अंग्रेजी में ही बोल लिया कीजिए।"

मिस्टर शर्मा का चेहरा लाल हो उठा, "मिस्टर मोहन, मैं आपसे बात नहीं करना चाहता।"

"बात तो मैं आपसे नहीं करना चाहता क्योंकि आप ढोर चराने वालों की भाषा बोलते हैं।"

"आप मेरे कमरे से बाहर चले जाइए।"

"मुझे इस कमरे में आकर खुशी नहीं होती। आपको इतना बताने के लिए आया कि अपनी जबान पर लगाम लगाकर रखिए।"

वह बाहर निकल गया तो मिस्टर शर्मा ने वर्मा की तरफ देखकर कहा, "देख रहे हो न इसके तौर-तरीके। अभी यू० पी० एस० सी० से प्रोबेशन क्लीयर नहीं हुआ है। मैं आज सैक्रेटरी साहब से बात करूंगा। आप मिस्टर मोहन का काम संभालने के लिए तैयार रहिए। इस आदमी के पास काम रहा तो पिछले साल की तरह इस साल भी पैसा बरबाद जाएगा।"

मीटिंग एक बजे शुरू होने वाली थी। मिस्टर वर्मा, कपूर और फ्रैंक-दास को लेकर इंतजाम ठीक-ठाक करने के लिए आधा घंटा पहले ही कुमारी प्रभा होटल में पहुंच गए। जब दरवाजे पर छः फुट ऊंचे दरबान ने सिर झुकाकर मिस्टर वर्मा का अभिवादन किया तो उनको लगा कि वे खुद दो फुट ऊंचे हो गए हैं। काउंटर पर बैठी एक खूबसूरत लड़की के

पास जाकर उन्होंने अमरीकी लहजे में अंग्रेजी में अपना परिचय दिया और अपने आने का कारण बताया। लड़की ने बताया कि सारी व्यवस्था हो गई है और उन्हें किसी तरह की चिंता करने की जरूरत नहीं है। तीनों अफसरों से उसने सामने पड़े सोफे पर इंतजार करने को कहा। तीनों चुपचाप सोफे पर जाकर बैठ गए। पन्द्रह-बीस मिनट तक वे वहीं एक-दूसरे की शक्ल देखते बैठे रहे। फिर होटल के मालिक निर्मलसिंह एक घूमते कांच के दरवाजे वाले कमरे से निकलकर बाहर आए। वर्मा लपककर उनके पास गए और अपना परिचय दिया, "आई एम सीनियर डिप्टी डायरेक्टर वर्मा, नगरश्री डायरेक्टोरेट···" निर्मलसिंह ने उनसे हाथ मिलाया।

"मिस्टर शर्मा नहीं आए ?" निर्मलसिंह ने पूछा।

"आते ही होंगे।"

"और डा० मोहन ?"

"वे भी आ रहे हैं।"

"तो आप चलकर अंदर बैठिए।"

यह कहकर निर्मलसिंह तो दूसरी तरफ चले गए लेकिन मिस्टर वर्मा और उनके दो साथी अफसर सोचते खड़े रहे कि अंदर कहां जाना है। आखिर मिस्टर वर्मा ने फिर अमरीकी लहजे की अंग्रेजी में काउंटर वाली खूबसूरत लड़की से पूछा। उसने दाईं ओर के बरामदे की तरफ इशारा किया। तीनों उस बरामदे में दो-चार कदम बढ़े तो उन्हें लगा कि वे घुप्प अंधेरी गली में बढ़ते चले जा रहे हैं। तीनों चुपचाप बढ़ते गए, मन-ही-मन डरते हुए कि कोई उन्हें चोर समझकर पकड़ न ले। अंधेरी गली जहां खत्म हुई, उन्हें शीशे की घूमती पैनल से दो चेहरे झांकते दिखाई दिए। एक चेहरा इंग्लैंड के किसी बादशाह का था और दूसरा रानी का। वे सोच ही रहे थे कि अब क्या करें और कहां जाएं, कि दोनों पैनल घूमे और उनमें से दो सुन्दर लड़कियां बाहर आईं। वे उनकी तरफ देखे बिना आगे निकल गईं। अब उनकी समझ में आया कि पैनल घुमाकर अंदर जाने का और रास्ता है। तीनों पैनल घुमाकर आगे बढ़े तो देखा सामने फिर रानी की तसवीर वाला पैनल था और बाईं ओर बादशाह की

तसवीर वाला। हक्का-बक्का होकर वे कुछ देर खड़े रहे। फिर कपूर ने बाईं ओर के पैनल को घुमाकर अंदर झांका।

"अरे यह तो पेशाबघर है।" उसके मुंह से निकला। मिस्टर वर्मा ने जिज्ञासावश सामने वाले पैनल को घुमाया तो एक सुंदर लड़की आइने के सामने खड़ी दिखाई दी। उसने घूमकर मिस्टर वर्मा को देखा।

"ईडियट।" वह अंदर से चीखी।

मिस्टर वर्मा घबराकर पीछे हटा और फ्रैंकदास से टकरा गया। और कोई रास्ता न देखकर तीनों मरदाना पेशाबघर में घुस गए।

"क्या मुसीबत है," आखिर कपूर ने कहा, "क्या मीटिंग पेशाबघर में ही होती है?"

मिस्टर वर्मा, जो अपने दफ्तर के साथियों के सामने शाही दरबारों और पार्टियों की शेखी बघारा करते थे, पानी-पानी हो रहे थे। तीनों लघुशंका से निवृत्त होकर और हाथ-मुंह धोकर बाहर निकले तो वापस उसी अंधेरी गली में चलने के सिवा कोई चारा नजर नहीं आया। शुक्र हुआ कि उन्हें बीच में ही डा० मोहन, निर्मलसिंह के साथ आते दिखाई दिए। वे दोनों अंधेरी गली के बीचोंबीच दाईं ओर बने एक गुफानुमा दरवाजे में घुस गये। उनके पीछे-पीछे तीनों अफसर भी गुफा में घुस गए और एक नीम अंधेरे गोल कमरे में पहुंच गए।

कमरे में डायरेक्टर मिस्टर शर्मा और सैक्रेटरी साहब श्री तारकनाथ तो मौजूद थे ही, वतनी, शहीद और सरफरोश, मिसेज खन्ना, मोटर कंपनी के मालिक जयरथ भी थे। वर्मा को देखते ही मिस्टर शर्मा ने पूछा—

"आप कहां चले गए थे मिस्टर वर्मा? आपको तो मैंने आधा घंटा पहले भेजा था।"

वर्मा अपनी परेशानी बताने में असमर्थ थे। बस इतना ही कहा, "जरा बाथरूम चला गया था।"

कुमारी प्रभा होटल का यह अंधेरा कक्ष 'डेविल्स डंजन' कहलाता है। इसकी दीवारें और छत कुदरती, पुरानी चट्टानों की लगती थीं। बरसों की सीलन और काई के धब्बे, ऊबड़-खाबड़, नुकीली, खुरदरी सतह, कहीं-कहीं दिखाई देने वाली कोई चट्टानी लता, सब चीजें मिलाकर कुदरती

गुफा का शत-प्रतिशत प्रभाव दे रही थीं।

कमरा गोलाकार था और काफी बड़ा था। फर्श पर मखमली गलीचा बिछा था जो शायद इतना मोटा था कि पांव धंसता लगता था। एक तरफ करीब एक फुट ऊंचा स्टेज-सा बना था जिस पर एक गोल मेज और चार कुर्सियां रखी थीं। बीच में गोलाकार फर्श था जिसके चारों ओर सोफे और गद्देदार कुर्सियां रखी थीं। तीनों कोनों में तीन छोटी गोल मेजें और उनके गिर्द तीन-तीन कुर्सियां पड़ी थीं। चौथे कोने में एक काउंटर था जिस पर लंच सजा था। छत से एक बहुत बड़ा शमादान लटक रहा था जिसमें, लगता था, एक साथ कई दर्जन मोमबत्तियां जल रही हों। लेकिन प्रकाश वस्तुतः मोमबत्तियों का नहीं छोटे-छोटे बल्बों का था और वह दीवारों पर असंख्य जुगनुओं के रूप में प्रतिबिम्बित हो रहा था। दीवारों को ध्यान से देखने के बाद पता चलता था कि सारी दीवारों और छत पर कांच के छोटे-बड़े टुकड़े चिपकाए गए थे और उनपर काई का पेंट किया गया था जो रोशनी पड़ने पर पारदर्शी हो जाता था।

गोलाकार फर्श के चारों ओर बिछे सोफों और कुर्सियों पर समिति के सदस्य बैठ गए। सचिव श्री तारकनाथ ने सदस्यों को सम्बोधन किया—

"एलोन लेडी एंड जैंटलमेन," उन्होंने सदस्यों पर नजर डालकर कहा जिसके साथ ही संभ्रांत हँसी कमरे में बिखर गई, "आप लोग जानते ही हैं कि आज हम यहां किसलिए इकट्ठे हुए हैं। ब्यूटी कम्पीटीशन की हमारी स्कीम बहुत प्रेस्टीजियस स्कीम है। हम चाहते हैं कि आप लोगों की देख-रेख में इस स्कीम को इस तरह इम्पलीमेंट किया जाए कि देश का नाम ऊंचा हो। आप जानते ही हैं कि यह शहर सिर्फ हमारे देश की राजधानी ही नहीं है। सारी दुनिया के लोग इसकी तरफ नजरें बिछाए रहते हैं। हम यहां जो भी काम करें वह ऐसा होना चाहिए कि सारी दुनिया में हमारा नाम रोशन हो। हमारी खुशकिस्मती है कि इस कमेटी में वतनी साहब जैसे देशभक्त और निर्मलसिंह साहब और जयरथ साहब जैसे समाजसेवी हैं। मुझे उम्मीद है कि नेशनल प्रेस्टीज के इस काम को पूरा करने में आप कोई कोर-कसर नहीं उठा रखेंगे। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि पिछले साल की तरह इस साल फाइनेंशियल रुकावट रास्ते

में नहीं आएगी। मैंने फाइनेंस के सेक्रेटरी से बात कर ली है और जल्दी ही सेक्शन मिल जाएगी। बस आप लोगों को काम शुरू कर देना चाहिए।" फिर उन्होंने मिस्टर शर्मा की तरफ देखकर पूछा—"आप लोगों ने अब तक क्या-क्या किया है ? कोई ब्लूप्रिंट बनाया है ?"

मिस्टर शर्मा ने फाइल के ऊपर लगा नोट आगे बढ़ाते हुए कहा, "सर अखबारों के लिए एडवर्टिजमेंट का ड्राफ्ट बन गया है। सेक्शन आएगी तो उसे दे देंगे।"

"मैं पूछता हूं, आपने कोई ब्लूप्रिंट बनाया है ?" तारकनाथ ने कुछ रूखे स्वर में कहा, "कम्पिटीशन कहां होंगे, फंक्शन में क्या-क्या होगा, कौन वी० आई० पी० आएगा ? यह काम तो आपके करने के हैं।" मिस्टर शर्मा हकला गए, "सर, यह काम डा० मोहन देख रहे हैं।" तारकनाथ ने डा० मोहन की तरफ देखा। श्याम मोहन ने बताया—

"सदस्यों की राय मिल जाए तो रूपरेखा तो अभी बन जाएगी।"

इससे पहले कि तारकनाथ कुछ कहें, निर्मलसिंह जी बोल उठे, "जी हां, डा० मोहन ठीक कहते हैं। सारी डिटेल हम आज तय कर लेते हैं। मेरा खयाल है हर कम्पिटीशन के लिए एक उपसमिति बना दी जाए। कार कम्पिटीशन का काम जयरथ साहब के ऊपर छोड़ दीजिए। कम्पिटीशन के साथ कार-रैली भी होगी ही। क्यों जयरथ साहब, आपका क्या खयाल है ?"

"नो प्राब्लेम, सर। हम दिल्ली-आगरा कार-रैली का रूट रखेंगे। आप लोग तय करें तो रैली हमारी फैक्टरी से शुरू हो सकती है। दस एकड़ का प्लाट है, वहीं पर बढ़िया शामियाने लगाकर प्राइज डिस्ट्रीब्यूशन फंक्शन भी किया जा सकता है।"

तारकनाथ खुश हो गए, "यह तो बहुत अच्छी बात है। आप दस एकड़ का प्लाट दे रहे हैं तब तो हमारी सारी समस्या हल हो गई। सारे कम्पिटीशन वहीं पर हो सकते हैं। सिर्फ आपको पुरुषों, बच्चों, कुत्तों और महिलाओं के लिए अलग-अलग वेटिंग रूम बनाने पड़ेंगे।"

निर्मलसिंह ने सुझाव दिया, "सर, जहां तक नगर सुंदरी कम्पिटीशन का सवाल है, मैं समझता हूं उनकी साड़ी परेड भी होनी चाहिए। साड़ी

परेड के लिए मैंने अपने दोस्त श्रीकृष्णप्रसाद से बात की थी। उनका साड़ियों का बहुत बड़ा बिजनेस है। हर डिजाइन की साड़ियां उनके शो-रूम में मिल सकती हैं। उनमें से कुछ बढ़िया डिजाइन चुनकर परेड में इस्तेमाल किए जा सकते हैं। सरकार की इसमें बचत भी होगी और काम भी बढ़िया हो जाएगा।"

"लेकिन श्रीकृष्णप्रसाद जी इसके लिए तैयार हैं ?" मिसेज खन्ना ने पूछा।

"तैयार हैं, आप लोग कहें तो मैं अभी उन्हें बुला सकता हूं। वे मेरे दफ्तर में बैठे हैं।"

"बुला लीजिए," तारकनाथ बोले, "सामने बात हो जाए तो अच्छा ही है।"

निर्मलसिंह ने अंधेरी गुफा के दरवाजे की तरफ इशारा किया। चम-चमाते सफेद-नीले सूट में एक बैरा गुफा से निकलकर निर्मलसिंह के पास आया और उनका संदेश लेकर चला गया। थोड़ी देर में श्रीकृष्णप्रसाद साड़ी वाले कमरे में आ गए।

तारकनाथ ने तपाक से उनसे हाथ मिलाया और उन्हें आदर से बिठाते हुए कहा, "सेठ जी, हम लोग आपकी मदद चाहते हैं।"

"कैसी मदद साहब," सेठजी नम्रता से झुककर बोले, "हम लोग तो आपके सेवक हैं। आपके किसी काम आए यह हमारी खुशकिस्मती है।"

"तो आप साड़ी परेड के लिए अपने शोरूम से साड़ियां देने के लिए रजामंद हैं न।" तारकनाथ ने पुष्टि के लिए पूछा।

"अजी साहब, शोरूम आपका है।" सेठजी बोले।

"चलो यह प्राब्लेम भी सॉल्व हुआ," तारकनाथ ने राहत की सांस ली।

वतनी साहब बोले, "बच्चों के कम्पिटीशन में कई मुश्किलें आएंगी। बच्चे आएंगे तो उनके साथ बच्चों की माताएं भी होंगी। बच्चों के लिए आइसक्रीम, चाकलेट और खिलौनों का बंदोबस्त भी करना पड़ेगा। मैं समझता हूं सरफरोश साहब इस मामले में हमारी कुछ मदद करगे। इन्हें बच्चों से बड़ा प्यार है। चाचा नेहरू बाल-संगठन नाम से एक संस्था भी

चलाते हैं। बेबीफूड और खिलौनों के बड़े-बड़े व्यापारियों के साथ इनका सम्पर्क है। शहर की बाल-कल्याण संस्थाओं का सहयोग भी इन्हें मिल सकता है। मैं समझता हूं कि यह काम इनपर छोड़ दिया जाना चाहिए। क्यों सरफरोश साहब !"

"जैसी आपकी मर्जी," उन्होंने कहा, "मेरे लिए तो यह कोई समस्या ही नहीं है। बच्चों के लिए तो मैंने अपना जीवन लगा दिया है। नेहरू जी के सपनों के लिए जिया हूं और उन्हींके लिए मरूंगा। हर साल बच्चों के कई फंक्शन करता हूं। इसमें क्या मुश्किल है ?"

शहीद साहब को अभी तक कुछ कहने का मौका नहीं मिला था, वे बोले—

"आदमियों और कुत्तों के कम्पिटीशन के लिए तो एक ही कसौटी होनी चाहिए और वह है अनुशासन। अनुशासन राष्ट्र की सबसे बड़ी जरूरत है। अनुशासन के बिना सब कुछ भ्रष्ट हो रहा है। इसके लिए एक खास उम्र तक के युवकों को कम्पिटीशन में लेना चाहिए और उनसे योगा एक्सरसाइज करानी चाहिए। भद्राचारी योगाश्रम को यह काम सौंप देना चाहिए। योगा से बढ़कर अनुशासन सिखाने वाली कोई चीज नहीं। भद्राचारी जी मेरे मित्र हैं और वे इस काम के लिए खुशी से तैयार हो जाएंगे। उन्हें कुत्तों से बहुत प्यार है और वे कुत्तों से भी कुछ योगा एक्सरसाइज करा सकते हैं। नावेल आइडिया होगा।"

"आपकी भद्राचारी साहब से बात हुई थी ?" तारकनाथ ने पूछा।

"जी हां, एक दिन चर्चा चली तो उन्होंने मुझे यह सुझाव दिया था।"

जयरथ जी बोले, "सर, भद्राचारी जी मेरे अच्छे दोस्त हैं। मैं कहूंगा तो वे इन्कार नहीं कर सकते। आप यह काम शहीद साहब के सुपुर्द कर दीजिए। मैं इनकी मदद करूंगा। नो प्रॉब्लेम सर, नो प्रॉब्लेम।"

तारकनाथ ने संतोष की सांस ली, "फिर तो सब तय हो गया। अब पैसे का मामला रहा। मैं आज ही फाइनेंस सैक्रेटरी को फोन करके सैंक्शन भिजवा दूंगा। मिस्टर शर्मा आप एडवर्टाइजमेंट दे दीजिए। हां फंक्शन की तारीख क्या रखी जाए ?"

"तयारी के लिए एक महीना तो कम-से-कम चाहिए।" शहीद साहब बोले।

"जनवरी में हो जाए तो कैसा रहेगा ?" तारकनाथ ने पूछा।

"नो प्रॉब्लेम सर," जयरथ बोले।

"मेरा एक सुझाव है," निर्मलसिंह बोले, "असल में यह सुझाव मेरा नहीं, डा० मोहन का है। उन्होंने थोड़ी देर पहले हल्के-फुल्के ढंग से यह सुझाव दिया था। लेकिन मुझे लगता है कि यह बहुत इम्पोर्टेंट है। दुनिया में जहां भी महिलाओं के ब्यूटी-कम्पिटीशन होते हैं, स्विमिंग पूल में उनकी बिकनी परेड जरूर होती है। अगर आप इसे एप्रूव करें तो कुमारी प्रभा का स्विमिंग पूल एक दिन के लिए दिया जा सकता है और फ्लडलाइट में बिकनी परेड की व्यवस्था की जा सकती है। यह आइटम टूरिस्ट एट्रेक्शन भी होगा और देश को विदेशी मुद्रा का लाभ होगा।"

"यह तो बहुत बढ़िया आइटम है।" तारकनाथ ने सब सदस्यों की तरफ देखकर कहा, "आप लोगों की क्या राय है ?"

वतनी साहब बोले, "इसमें राय पूछने की क्या जरूरत! यह तो हमारा बेस्ट आइटम होगा। वी० आई० पी० को पकड़ने की नजर से भी और अखबारों में पब्लिसिटी की नजर से भी।"

"तो फिर तय हुआ···अब तारीख···" तारकनाथ को याद आया।

"जनवरी के तीसरे-चौथे हफ्ते में कोई दिन रख लिया जाए।" निर्मलसिंह ने कहा, "फरवरी में चुनाव होने वाले हैं। सरकार की पब्लिसिटी भी हो जाएगी और वी० आई० पी० भी खुशी से आएंगे।"

मीटिंग समाप्त हो गई। मिस्टर वर्मा, कपूर और फ्रैंकदास जो पीछे की कुर्सियों पर बैठे, अलग-अलग नोट ले रहे थे, अब उठ गए। निर्मलसिंह ने गुफा के दरवाजे की तरफ इशारा किया। बैरे ट्रे में चिकनसूप की प्यालियां लेकर आए और सबके आगे एक-एक प्याली रख गए। किसी ने टमाटर सूप की फरमाइश की तो उसे टमाटर सूप लाकर दिया गया। वातावरण हल्का हो गया। श्याम मोहन सूप नहीं पी रहा था। उसने बैरे को सूप ले जाने के लिए कहना चाहा, तो मिस्टर वर्मा ने उसे रोक दिया और वे उसकी प्याली भी अपने पास उठा लाए।

कुमारी प्रभा होटल का खाना लाजवाब था। चिकन के लिए तो सारे शहर में उसकी प्रसिद्धि थी। नान रोटी, आलू दम, गोभी दम, पालक पनीर, दाल उड़द, राजमाह, फिंगर फिश कई तरह का सलाद, पापड़, रायता और स्वीट डिश में फ्रूटक्रीम। एक बैरा बड़े अदब से हर एक के हाथ में प्लेट और नैपकिन देता। फिर सब बारी-बारी काउंटर से अपनी मनपसंद चीजें लेते और अपनी कुर्सी पर बैठकर या खड़े होकर खाने लगते। किसने क्या खाया, कितना खाया, यह जानने की किसीको फुर्सत नहीं थी। श्याम मोहन अपनी कुर्सी से नहीं उठा। वह कोने में बैठा तमाशा देखता रहा।

कुमारी प्रभा होटल में हुई मीटिंग के बाद श्याम मोहन को यकीन हो गया कि सौंदर्य प्रतियोगिताओं का काम उससे छीन लिया जाएगा। दफ्तर बंद होने से पहले ही चपरासी ने उसके हाथ में सचिव श्री तारकनाथ के हस्ताक्षरों वाला एक ज्ञापन दिया जिसमें कहा गया था कि डॉ० श्याम मोहन अपनी फाइलें उपनिदेशक श्री वर्मा को दे दें। इसका न तो कोई कारण बताया गया था और न यह कहा गया था कि श्याम मोहन को अब क्या काम करना है। बिना किसी उलझन के श्याम मोहन ने ज्ञापन लिया, फाइलों का बंडल बांधकर निदेशक श्री शर्मा की मेज पर रखा और चुपचाप दफ्तर से चल दिया।

दफ्तर से निकलकर वह सीधा कुशक के घर पहुंचा। तिमारपुर के दोमंजिला सरकारी मकानों में दूसरी मंजिल पर कुशक का मकान था। आधे खुले दरवाजे के बाहर रुककर श्याम मोहन ने देखा कि कमरे में दरी बिछी हुई है और उसपर पंद्रह-बीस स्त्री-पुरुष बैठे हुए हैं। उसे लगा जैसे अंदर कीर्तन चल रहा है। दरवाजे को जरा ठेलकर उसने अंदर झांका तो कुशक कोने से उठकर उसके पास आया। कुशक के चेहरे पर उदासी थी और कमरे में बैठे दूसरे लोगों के चेहरे भी लटके हुए से थे। कमरे में बिखरे मातमी माहौल को देखकर श्याम मोहन का दिल धड़क उठा और उसने कमरे में नजर डालकर राजू को तलाश किया। वह दिखाई नहीं दिया तो उसने घबराकर कुशक की ओर देखा। कुशक ने स्थिति स्पष्ट की।

"मेरी मां का देहांत हो गया," वह अपनी भावनाओं पर संयम रखते हुए बोला।

"कब ?"

"आज चौथा है।"

"कैसे हुआ ? क्या बीमार थीं ?"

"नहीं बीमार नहीं थी। सदमा लगा।"

"सदमा ?" श्याम मोहन की परेशानी और बढ़ गई।

कुशक श्याम मोहन का हाथ पकड़कर उसे दूसरे कमरे में ले गया। वहां उसने सारी कहानी सुनाई—

" राजू के प्रोफेसर डॉ० आनंद का लड़का गुलशनकुमार राजू का दोस्त है। कुछ दिन पहले ही राजू से उसकी दोस्ती हुई। जानते तो वे एक-दूसरे को बहुत दिनों से थे लेकिन कुछ दिन पहले गुलशन जिसको सब लोग गुल्लू कहते हैं, राजू के दोस्तों की टोली में शामिल हुआ। स्वभाव से थोड़ा अक्खड़ तो वह शुरू से ही रहा होगा लेकिन बाप के कारनामों ने उसे बागी बना दिया। कहते हैं डॉ० आनंद ने एक जवान लेडी डॉक्टर से शादी करने के लिए अपनी पत्नी याने गुल्लू की मां को स्लो-प्वाइजन किया था। गुल्लू शायद अपनी मां की यातनाओं का साक्षी रहा है, इसलिए अपने बाप के प्रति उसके मन में बहुत कटुता है। इस कटुता के कारण ही वह सुलफे-शराब की लत में पड़ गया।

" कुछ दिन पहले राजू के दोस्तों की टोली में वह आया तो उसे पता चला कि उसके बाप ने राजू को सर्जिकल की प्रैक्टिकल परीक्षा में बार-बार फेल किया है। घर आकर उसने अपने बाप को धमकी दी कि इस बार अगर राजू फेल हुआ तो वह अपनी मां के हत्यारे का खून कर देगा। नशे में न जाने उसने क्या-क्या कहा। डॉ० आनंद ने इस धमकी के पीछे राजू का हाथ देखा। उन्होंने अपने किसी परिचित पुलिस अफसर से बात की। पुलिस ने राजू के खिलाफ झूठ-मूठ का केस बनाया कि वह नक्सलाइटों के गिरोह का लीडर है। तीन दिन हुए, पुलिस राजू को पकड़कर ले गई और उसे हवालात में बंद कर दिया। मेरी मां को जब इस बात की खबर मिली तो उसे इतना सदमा लगा कि वहीं बेहोश हो गई।

पास-पड़ोस के लोग उसे अस्पताल ले गए, लेकिन वहां पहुंचने के बाद उसकी मृत्यु हो गई। मैं राजू को जमानत पर छुड़ाने की भाग-दौड़ करने में लगा था। शाम को घर लौटा तो मां की खबर मिली। दूसरे दिन अस्पताल से लाश मिली। दूसरे दिन राजू भी हवालात से छूटकर आ गया। पुलिस ने हवालात में राजू को खूब मारा-पीटा। उसके जिस्म पर जगह-जगह नीले दाग पड़ गए थे। शायद पुलिस अड़तालीस घंटे की रिमांड लेकर उसकी और पिटाई करती लेकिन इस बीच राजू के दोस्तों को ख़बर मिल गई। साठ-सत्तर लड़के थाने में पहुंच गए और उनमें गुल्लू भी था। गुल्लू ने पुलिस अधिकारी से कहा, 'मैं डॉक्टर आनंद का लड़का हूं। उन्हें मारने की धमकी मैंने दी है। मुझे पकड़ो, मुझपर मुकदमा चलाओ। मैं आपको बताऊंगा कि डॉ० आनंद मेरी मां का हत्यारा है और उस हत्या में कौन-कौन लोग शामिल हैं।'

"लड़कों ने पुलिस के अफसरों का घिराव कर दिया और मुर्दाबाद के नारे लगाने लगे। आसपास से गुजरने वाले लोग भी थाने में जमा होने लगे। भीड़ को देखकर पुलिस के अफसर घबराए और उन्होंने राजू को छोड़ दिया। ये सारी घटनाएं इतनी अचानक हुईं कि मेरा दिमाग चकरा गया। मैं दफ्तर में फोन भी नहीं कर सका। वैसे दफ्तर वालों को मैं बताना भी नहीं चाहता था। आपको जरूर खबर करना चाहता था, लेकिन मुझे कुछ होश ही नहीं था।"

कुशक की कहानी सुनकर श्याम मोहन भौंचक्का रह गया। आए दिन अखबारों में छपने वालों किस्सों से श्याम मोहन यह तो जानता था कि पुलिस गुंडागर्दी में किसी भी हद तक जा सकती है लेकिन उसकी पशुता का शिकार राजू जैसा सीधा-सादा लड़का भी बन सकता है, इसकी कल्पना उसे नहीं थी।

"राजू कहां है ?" श्याम मोहन ने पूछा।

"ऊपर छत पर होगा। उसके दोस्त भी हैं।"

बाहर के बड़े कमरे में मातमपुरसी के लिए आए लोग बैठे थे। कुशक और श्याम मोहन दोनों उनके पास आकर बैठ गए। साधारण मौत होती तो शायद सरकारी नौकरों की इस कालोनी में पास के दो-चार घरों को

छोड़कर किसी को पता भी न चलता। लेकिन इस मौत के साथ कुछ नाटकीय घटनाएं जुड़ी हुई थीं। कालोनी के सब घरों में इसकी चर्चा हो रही थी। कुशक की मां को शायद वहां बहुत से लोगों ने देखा भी नहीं था। लेकिन जिस स्थिति में उसकी मौत हुई थी, उससे सब लोगों की कुशक के परिवार के साथ सहानुभूति हो गई थी।

गिने-चुने वाक्यों में समवेदना प्रकट करने के बाद आगंतुकों में पुलिस की धींगामुश्ती और गुंडागर्दी पर बात होने लगती और चारों तरफ फैले भ्रष्टाचार और लूट-खसूट पर बहस चलती। उस समय भी लोगों में भ्रष्टाचार पर बहस हो रही थी। एक सज्जन जो तौर-तरीके में कोई अफसरी ओहदे के आदमी लग रहे थे, पंजाबी लहजे में कह रहे थे—

"क्रप्शन सारी बीमारियों की जड़ है। जब तक गवर्मेंट क्रप्शन को खत्म नहीं करती तब तक कुछ नहीं होगा।"

दूसरे सज्जन बोले—

"गवर्मेंट कैसे खत्म करेगी! क्रप्शन तो वही कराती है। मंत्रियों से शुरू होती है तो नीचे के लोग क्यों पीछे रहें! एक बार कोई एम० पी०, एम० एल० ए० बन जाता है तो सारे खानदान के पाप धुल जाते हैं।"

"भ्रष्टाचार और महंगाई यह दो चीजें ऐसी हैं जिन पर कोई भी सरकार आए, काबू नहीं पा सकती।" तीसरे महाशय ने फतवा दिया, "सोचने की बात यह है कि महंगाई से भ्रष्टाचार बढ़ता है और भ्रष्टाचार से महंगाई। तनख्वाह में गुजारा नहीं होता तो लोग-बाग ऊपर की कमाई करते हैं जिससे भ्रष्टाचार फैलता है। फिर व्यापारी लोग अफसरों और मंत्रियों को पैसा खिलाकर मनमानी कीमतें बढ़ाते हैं।"

"वैसे तो महंगाई और भ्रष्टाचार हमेशा ही रहे हैं, लेकिन साहब ऐसी हालत कभी नहीं देखी थी," बीच में कोई बोला, "मिनिस्टर और चीफ मिनिस्टर करोड़ों रुपये इकट्ठा करके अपने ट्रस्ट बनाएं और खुलेआम कहें कि हम ईमानदारी से यह काम कर रहे हैं। पुलिस डाकुओं, चोरों, स्मगलरों से तो बची रहे लेकिन इनके खिलाफ आवाज उठाने वाले नौजवानों को नक्सलाइट कहकर जंगल में पेड़ों से बांधकर मार डाले।"

एक वृद्ध सज्जन जो बिल्कुल मातमपुरसी के मूड में मुंह लटकाए बैठे

हुए थे, इन बातों से मन ही मन चिढ़ रहे थे। वे अपने को काबू में नहीं रख सके, बोले, "अजीब बात है। यहां महंगाई का रोना सबसे बढ़कर दुकानदार रोता है और भ्रष्टाचार का सरकारी नौकर। मोटे भी होते जा रहे हैं और शिकायत भी कर रहे हैं।" वे उठकर जाने लगे तो उनके साथ कई और लोग भी उठ खड़े हुए। श्याम मोहन भी उठा। कुशक से बोला, "मैं ऊपर जा रहा हूं। राजू से मिल लूं।"

श्याम मोहन छत पर पहुंचा तो सात-आठ लड़के राजू को घेरे खड़े थे और कुछ गरम बहस चल रही थी। एक लम्बा तगड़ा लड़का बोल रहा था—

"देखो राजू, यह सिर्फ तुम्हारा मामला नहीं है। अगर हमने इस मामले को यहीं छोड़ दिया तो कुछ फायदा नहीं होगा। लोगों को पता भी नहीं चलेगा। पुलिस अपनी मनमानी करती रहेगी और बेकसूर आदमी के ऊपर जुल्म करती रहेगी। हमें कुछ तो करना पड़ेगा वरना हमारे इकट्ठा होने का, हमारी बातों का तुक नहीं है।"

छत के एक कोने में मुंडेर से पीठ लगाए कुशक के पिता प्रेमदास बैठे थे। थूकने की सुविधा के लिए लोगों की भीड़ से दूर अकेले में वे न जाने क्या सोच रहे थे। श्याम मोहन थोड़ी देर के लिए उनके पास रुका। उन्हें देखकर प्रेमदास ने दोनों हाथ ऊपर उठाए और बोला, "सब भगवान की माया है, श्याम बाबू···थू: भगवान जो करे सो ठीक थू: जिनगी रो-पीट-कर बिताई दीन्ह, अब जरा खुसिन के दिन आईगे तो भगवान ने बुलाय लीन्ह···थू:।"

राजू कहने लगा, "जानी, मैं यह सब इसलिए कह रहा हूं कि कोई भी काम शुरू करने से पहले हमें अच्छी तैयारी कर लेनी चाहिए। सारे पहलुओं को सोच-विचारकर कोई कदम उठाना चाहिए। जोश में कोई काम शुरू करो और बीच में छोड़ दो, मुझे यह पसंद नहीं है। अभी तो हमें यह भी पता नहीं है कि हमारे साथ कितने लोग हैं। फिर यह भी तो अभी हम लोगों ने तय नहीं किया कि हम क्या करेंगे और किस तरह करेंगे। हमें किन-किन साधनों की जरूरत पड़ेगी और वे कैसे हमें मिलेंगे।"

"मैं समझता हूं यह सब बातें साथ-साथ तय होती जाएंगी।" अजय ने सुझाव दिया, "असली बात यह है कि हमें काम शुरू कर देना चाहिए। आंदोलन शुरू होगा तो लोगों को पता चलेगा और दूसरे लोग हमारे साथ आएंगे। अब अगर हम उसी दिन गृहमंत्री के घर पर धरना दे देते या अखबारों के दफ्तरों में जाते तो सारी दिल्ली को क्या, सारे देश को पुलिस अफसर की कारस्तानी की खबर मिलती।"

श्याम मोहन को आते देखकर लड़कों की बातें बंद हो गईं। राजू ने आगे बढ़कर श्याम मोहन को नमस्ते की।

"आप कब आए?" राजू ने पूछा।

"थोड़ी देर हुई। कैसे हो?"

"ठीक हूं।"

"सुना, थाने में काफी आदर-सत्कार हुआ।"

"ठीक ही हुआ।"

"हड्डी-पसली तो सही सलामत हैं?"

"ऐसी कोई बात नहीं।"

"अब क्या करने जा रहे हो?"

"कुछ नहीं..."

"भई कुछ योजना तो बन रही है। हमारी मदद की जरूरत हो तो बताओ।"

राजू ने अपने दोस्तों से उनका परिचय कराया, "आप भाई साहब के दफ्तर में प्लानिंग के विशेषज्ञ हैं डॉ० श्याम मोहन। और यह सब मेरे दोस्त हैं...जानी, अजय, विपिन, नासिर, गुरुदीप, विक्की, असीम, सुमेर।"

"गुल्लू नहीं है?" श्याम मोहन ने पूछा।

"गुल्लू आया था। थोड़ी देर हुई, चला गया।"

"आप लोगों की योजना क्या है?"

जानी आगे बढ़कर बोला, "अजी साहब योजना ही तो नहीं है। सिर्फ बातें हो रही हैं। न जाने बातों का सिलसिला कब तक चलेगा! मैं राजू से कह रहा हूं, हमें जल्दी से जल्दी कोई काम शुरू कर देना

चाहिए।"

"आप बिल्कुल ठीक कहते हैं," श्याम मोहन ने जानी का समर्थन किया, "हम योजना बनाने में इतना वक्त बरबाद कर देते हैं कि काम करने का वक्त निकल जाता है। आप लोगों के पास इस समय कितने आदमी हैं?"

"ज्यादा से ज्यादा सौ हो जाएंगे।"

"कोई संस्था बनाई है?"

"संस्था वैसे तो कोई नहीं है।"

"बिना संस्था के आप लोग कैसे काम करेंगे? कोई मंच तो होना चाहिए। संस्था के पास कुछ साधन होने चाहिए। कुछ प्रचार तंत्र होना चाहिए। उसके पास अपना कुछ कार्यक्रम होना चाहिए।"

राजू ने स्थिति स्पष्ट की—

"वैसे तो संस्था है 'युवाशक्ति-मंच,' लेकिन न तो यह रजिस्टर्ड संस्था है और न इसका कोई लिखित संविधान या कार्यक्रम बना है। हमारा उद्देश्य है कि हमारे आस-पास जहां भी कोई गलत काम हो, उसके खिलाफ आवाज उठाई जाए।"

"आवाज ही उठाई जाए या विरोध भी किया जाए।"

"विरोध तो करना ही पड़ेगा।"

"विरोध के दो रास्ते हैं। या तो मार-पीट से करो, बंदूक-पिस्तौल से करो या धरने-सत्याग्रह से करो।"

राजू ने बताया, "अब तक युवाशक्ति-मंच की जितनी बैठकें हुई हैं, उनमें इस मुद्दे पर काफी बहस हुई है। फैसला यही है कि रास्ता अहिंसा का रहेगा, धरने-सत्याग्रह का रहेगा। लेकिन मुश्किल यह है कि यह रास्ता बेअसर होता जा रहा है। इसमें कुछ आकर्षण नहीं है, कुछ गरमी नहीं है। लोग समझते हैं, बेकार की खुराफात है। कहीं धरना दिया जाता है, जुलूस निकलता है, नारे लगाए जाते हैं तो लोग मजाक उड़ाते हैं। पढ़े-लिखे लोग मजाक उड़ाते हैं।"

"उन लोगों की परवाह करोगे तो काम नहीं चलेगा," श्याम मोहन ने टिप्पणी की, "ये पढ़े-लिखे लोग अनपढ़ों से ज्यादा बेवकूफ होते हैं। इन्हें

सिर्फ अपनी सुविधा चाहिए, अपना स्वार्थ चाहिए। और किसी बात की इन्हें चिंता नहीं होती। धरने-जूलूसों का मजाक उड़ाते हैं लेकिन जब गोलियां चलती हैं, हत्याएं होती हैं तो ये पुलिस की हिंसा का, सरकार की हिंसा का समर्थन करने लगते हैं और कहने लगते हैं इस देश में डिक्टेटर-शिप होनी चाहिए। लेकिन इस समाज में सब इनकी तरह मूर्ख नहीं हैं। ऐसे लोगों की तादाद ज्यादा है जो सोचते हैं गलत काम का विरोध होना चाहिए। अगर हम अहिंसा के रास्ते विरोध का आदर करना नहीं सीखेंगे तो सिवाए रक्तपात के कोई विकल्प नहीं बचेगा। क्योंकि हिंसा के रास्ते का मतलब है गरीब और कमजोर का रक्तपात। विरोध और विद्रोह समाज की जरूरत है। ये बदनाम नकारात्मक शब्द नहीं हैं। ये रचनात्मक दर्शन हैं बशर्ते कि विद्रोह विचारों का हो शस्त्र का नहीं। शस्त्र का विद्रोह नकारात्मक है क्योंकि इसमें निर्माण से अधिक विनाश होता है। सामाजिक परिवर्तन के लिए तो यह बिल्कुल गलत रास्ता है। निहत्थी जनता बदलाव के लिए हिंसा का रास्ता अपनाएगी तो वे लोग जिनके हाथ में पुलिस है, सेना है, हथियार हैं, अपने मनसूबों में हमेशा कामयाब होंगे। कमजोर सींगों से हिंस्र बाघ को चुनौती देने वाली बकरी अपने को वीर भले ही समझे यह उसकी मूर्खता ही कहलाएगी। समाज को बदलने के लिए आदमी को भी बदलना पड़ता है और शस्त्र आदमी को बदलता नहीं उसकी हत्या कर सकता है। विचार आदमी को बदलता है।"

राजू और उसके साथी बड़े ध्यान से उनकी बातें सुन रहे थे। उनके सामने एक आंदोलन का चित्र उभरने लगा था। अब तक वे दिशाहीन थे। उन्हें क्या करना है, क्यों और कैसे करना है, इसकी स्पष्ट कल्पना नहीं थी। श्याम मोहन की बातों से उन्हें लगा कि एक सार्थक आंदोलन शुरू किया जा सकता है।

नासिर ने अपनी शंका बताई, "थोड़े से लोग हैं। हमारे पास कोई साधन नहीं, पैसा नहीं, अपनी बात लोगों तक पहुंचाने का कोई माध्यम नहीं। ऐसी स्थितियों में हम क्या कर सकते हैं?"

"हर नया आंदोलन कुछ मुट्ठी-भर लोगों से शुरू होता है। आंदोलन ठीक हो, उसका दर्शन सही हो, अगर वह समाज की किसी जरूरत को

लेकर हो, उसके पीछे समाज को आगे ले जाने का इरादा हो तो साधन अपने आप जुटते हैं। लोग भी साथ आते हैं। समाज को जरूरत है इस समय ऐसे आंदोलन की जो लोगों को सिखाए कि गलत काम के खिलाफ कैसे आवाज उठानी है, जड़ता से कैसे विद्रोह करना है। गलत काम को चुपचाप सहन करना ही जड़ता ही लक्षण है और उससे विद्रोह करना जीवन। हर युवक जो इस आंदोलन में शामिल होगा अपने जीवन में एक अनुशासन सीखेगा। किसी व्यक्ति के इशारे पर उठक-बैठक करने वाला अनुशासन नहीं। न डंडे के भय से सर्कस के जानवरों को सिधाने वाला अनुशासन बल्कि विचार और विश्वास से पैदा होने वाला अनुशासन जो मनुष्य को अपनी परिस्थितियों पर सही ढंग से रिएक्ट करना सिखाए। समाज के लिए जो शिव है उसकी रक्षा करना और जो अशिव है उसके खिलाफ विद्रोह करना सिखाए। इस प्रकार के अनुशासन वाला व्यक्ति जिस क्षेत्र में जाएगा, जो भी काम करेगा, उसमें एक नया परिवर्तन लाएगा। अपने विचारों को लोगों तक पहुंचाने के लिए आपके पास अपना पत्र होना चाहिए। आप उसकी रूपरेखा बनाइए। मेरे पास जो भी साधन होंगे, उनसे मैं आपकी मदद करूंगा।"

राजू और उसके दोस्तों से बातचीत करने के बाद जब श्याम मोहन कुशक से विदा लेकर अपने घर की तरफ चला, तो उसे अपने लिए भी एक रास्ता मिल गया था। दोपहर की मीटिंग के बाद ही उसे लगने लगा था कि इस दफ्तर में बने रहना अब उसके लिए संभव नहीं होगा। उस स्थिति में उसे क्या करना चाहिए, इस प्रश्न का समाधान उसे मिल गया था।

आठ

इस महान देश की महान परंपराओं में एक प्रमुख परंपरा त्योहारों और समारोहों की है। कोई समाज वर्ग, कोई सम्प्रदाय, कोई धर्म इस परंपरा से अछूता नहीं है। विभिन्न धर्मों का आदिरूप जो भी रहा हो, यहां सब

एक ही रंग में रंग गए। कर्मकाण्ड, उत्सव, त्यौहार और समारोह में प्रकट होने वाला धर्म का बाहरी रूप हमारी जीवन पद्धति का एक अभिन्न अंग बन गया है। धर्म के कंकाल की पूजा करते-करते लोग धर्म की आत्मा के प्रति बिल्कुल काठ हो गए हैं। मन्दिर की मूर्तियों का शृंगार करते-करते हमारे हृदय पत्थर हो गए हैं और हमें चारों ओर फैली नृशंसता तथा क्रूरता का बोध नहीं होता। हमारी धार्मिकता, सच्चाई, ईमानदारी, मानव-प्रेम आदि गुणों में नहीं, समारोहों और तमाशों की भव्यता के रूप में प्रकट होती है। जुलूस, पंडाल, शोभा-यात्रा, भीड़, माइक, शोर, वैभव-प्रदर्शन धर्मों की महानता की कसौटियाँ हैं। मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारा, सत्संग, कीर्तन और भगवती जागरणों में भक्ति का सोता, कनफाड़ माइक के माध्यम से ही फूट सकता है। न सिर्फ कबीर के खुदा का बहरापन हजार-हजार गुना बढ़ गया है, उसका अंधापन भी इस सीमा तक पहुंच गया है कि हजारों वाट की रंग-बिरंगी रोशनियों के बिना उसकी आरती नहीं हो सकती।

धार्मिक जीवन में ही नहीं, सामाजिक और राजनैतिक जीवन में भी उत्सवों और समारोहों का स्थान इतना महत्त्वपूर्ण है कि बड़े से बड़े संकट को भी उत्सव के रूप में बदलने के लिए हम हमेशा तैयार रहते हैं। देश की सीमाओं पर लड़ाई छिड़ी हो तो जवानों के लिए पकवान बनाने और मोजे-स्वैटर बुनने का काम समारोह की शक्ल लेता है। बाढ़, भूकम्प, तूफान से लोग मर रहे हों तो रोटियां बांटने और लंगर चलाने के लिए मर्द-औरतों की भीड़ राहत कार्यों की बाधा बन जाती है।

संसार के प्रत्येक कार्य-व्यापार को भगवद्-लीला मानने की लोक-प्रवृत्ति इतनी व्यापक और विशद है कि हमारे सार्वजनिक जीवन का आधे से ज्यादा समय समारोहों, त्योहारों और तमाशों में बीत जाता है। स्वतन्त्रता के राष्ट्रीय पर्व, महापुरुषों के जन्म दिवस, जयंतियां, शताब्दी-अर्धशताब्दी समारोहों के साथ-साथ दशहरा, दीवाली, क्रिसमस, गुरुपर्व, ईद आदि असंख्य त्योहारों का तांता इस देश की जनता की गरीबी, भुख-मरी, अन्याय और शोषण की समस्याओं से विमुख किए रहता है। यहां तक कि पांच साल में एक बार चुनाव के रूप में अपने भाग्य का फैसला

करने का मौका आता है, तो उसे भी हम एक बड़े तमाशे में बदल देते हैं और पिछले पांच सालों में भोगी गई यातनाओं या अगले पांच सालों में भोगी जाने वाली यातनाओं को भूल जाते हैं।

समाज में आर्थिक-सामाजिक परिवर्तन लाने के उद्देश्य से बनी पंचवर्षीय योजनाओं को कार्यान्वित करने का दायित्व जिन चुनींदा प्रतिभावानों को सौंपा जाता है, वे इस लोकप्रवृत्ति का पूरा लाभ उठाते हैं और वे योजनाओं के लिए निर्धारित राशि का एक बड़ा अंश तमाशों के आयोजन में खर्च करके गरीबों के पैसों की अंधी लूट को निष्कंटक बना देते हैं।

नगरश्री निदेशालय के निदेशक श्री दयानिधि शर्मा और उनके विभागीय सचिव श्री तारकनाथ भी इन दिनों सरकारी हलकों में ईर्ष्या के पात्र बने हुए थे। नगर प्रशासन के कार्यभारी केन्द्रीय मन्त्री प्रद्युम्नकुमार के साथ उनका सीधा सम्पर्क बना हुआ था। मन्त्री जी अपने चिकने-चुपड़े मासूम चेहरे के कारण चिरकुमार होने जैसा प्रभाव बनाए रखते थे। नगरश्री प्रतियोगिताओं की भव्य योजनाओं ने उनके समक्ष असंख्य संभावनाएं अनावृत कर दी थीं। अपनी पहली प्रेस-कांफ्रेंन्स की सफलता को देखकर उन्हें लगने लगा था कि राजधानी के राष्ट्रीय समाचारपत्रों में छा जाने का इससे बढ़िया मौका उनके हाथ नहीं लगेगा। सौन्दर्य प्रतियोगिताओं के लिए जनवरी मास का अंतिम सप्ताह चुना गया था। इस निर्णय के पीछे एक कारण तो यह था कि गणतन्त्र दिवस समारोहों की कड़ी के रूप में प्रतियोगिता के आयोजन से उपयुक्त वातावरण मिलेगा और राजधानी में बाहर से आने वालों की भीड़ का लाभ मिलेगा। इसके अतिरिक्त फरवरी मास के शुरू में ही नगर निगम के चुनाव होने वाले थे। केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल की दृष्टि में इन चुनावों का बड़ा महत्त्व था क्योंकि शासक दल राजधानी में विपक्ष के लोगों को किसी भी कीमत पर नहीं आने देना चाहता था। नगर प्रशासन मन्त्री को इन प्रतियोगिताओं को सफल बनाने के लिए पूरे अधिकार दे दिए गए थे और उन्हें दल के युवा कार्यकर्ताओं का भरपूर सहयोग उपलब्ध कराने का आश्वासन दिया गया था। मन्त्री ने प्रतियोगिताओं की प्रत्येक समिति में अपने दो-दो युवा नेताओं को नामजद कर दिया था और सर्वोच्च सलाहकार समिति को स्वतन्त्रता सेनानी

वतनी जी की अध्यक्षता में इस प्रकार पुनर्गठित किया था कि उनके रास्ते में कोई बाधा न रहे।

सप्ताह में दो बार मन्त्री जी प्रेस संवाददाताओं का सम्मेलन बुलाते थे और इसमें प्रतियोगिताओं के काम में हो रही प्रगति की जानकारी जनता को दी जाती थी। इन संवाददाता सम्मेलनों से सौन्दर्य प्रतियोगिताओं की ऐसी हवा बंधने लगी थी मानो समग्र राष्ट्र का अस्तित्व इन पर टिका हो। विभाग के सचिव श्री तारकनाथ और निदेशालय के डायरेक्टर श्री दयानिधि शर्मा रोज शाम को मन्त्री की कोठी पर जाकर उन्हें काम की प्रगति को जानकारी देते थे। कुमारी प्रभा होटल के चार सूट बुक कर लिए गए थे। एक-एक सूट मन्त्री, सचिव, निदेशक और वतनी साहब के हवाले कर दिए गए थे ताकि वे महत्त्वपूर्ण विचार-विमर्श दफ्तर के उबाऊ वातावरण से दूर यहां कर सकें।

प्रेस विज्ञप्तियों और विज्ञापनों द्वारा देश की जनता को सूचित किया गया था कि किस प्रतियोगिता में शामिल होने के लिए उम्मीदवार को किस व्यक्ति से सम्पर्क स्थापित करना चाहिए। पुरुष सौन्दर्य प्रतियोगिता में भाग लेने वालों से कहा गया था कि वे भद्राचारी जी के योगाश्रम में शहीद जी के साथ सम्पर्क स्थापित करें ताकि वे उम्मीदवारों का चुनाव करके योगाश्रम में उन्हें योगा का प्रशिक्षण दिलाने की व्यवस्था कर सकें। कारों की प्रतियोगिता में भाग लेने के इच्छुक व्यक्तियों से कहा गया था कि वे कारों के प्रसिद्ध व्यापारी श्री जयरथ से मिलें। इसी प्रकार कुत्तों के मालिकों को श्री दयानिधि शर्मा से, बच्चों के अभिभावकों को सरफरोश जी से और महिला प्रतियोगियों को वतनी जी से सम्पर्क स्थापित करने को कहा गया था। हालांकि प्रतियोगिता में प्रवेश के लिए शुल्क कोई नहीं रखा गया था लेकिन प्राथमिक चयन समिति के अध्यक्षों को अधिकार दिया गया था कि वे किसी भी आवेदन-पत्र को बिना कारण बताए अस्वीकृत कर सकते हैं। परिणामस्वरूप सभी की दुकानें ठीक चल रही थीं। भद्राचारी के योगाश्रम में योगा का अल्पकालीन प्रशिक्षण लेने वालों की तादाद इतनी बढ़ गई थी, कि उन्हें दस अतिरिक्त कक्षाएं चलानी पड़ीं। अल्पकालीन प्रशिक्षण का शुल्क भी डटकर लिया जाने लगा।

सरफरोश साहब के नेहरू बाल संगठन में दिनभर बच्चों और उनके अभि-भावकों की चहल-पहल रहने लगी और संगठन की सदस्यता में भारी वृद्धि होने लगी। प्रतियोगिता के मौके पर प्रकाशित की जाने वाली नेहरू बाल-स्मारिका में चित्र छपवाने के लिए तो ब्लाक इत्यादि का खर्च अभि-भावकों से लिया ही जाता था, संस्थाओं और फर्मों से संबद्ध लोगों को स्मा-रिका में विज्ञापन देने के लिए भी प्रेरित किया जाता था।

कार कम्पनी के मालिक श्री जयरथ ने दिल्ली के जिस क्षेत्र में फैक्टरी के लिए दस एकड़ का प्लाट ले रखा था वहां न कोई सड़क थी न पानी सीवर आदि की व्यवस्था थी। फैक्टरी के नाम पर एक रोड बनाने के बाद वे निराश होकर बैठ गए थे क्योंकि अनधिकृत क्षेत्र में होने के कारण प्लाट के विकास की कोई संभावना नहीं थी। कुछ दिन पहले वे शेड समेत प्लाट को बेच देने की बात सोच रहे थे। अपने दफ्तरी सूत्रों से उन्हें पता चला था कि दिल्ली विकास समिति उस प्लाट को एक्वायर करने की तैयारी कर रही है। नगर प्रशासन मन्त्री के साथ बातचीत करने के बाद उनकी तमाम अड़चनें दूर हो गईं। दिल्ली विकास समिति ने उसके सर्वां-गीण विकास का काम हाथ में ले लिया। पानी की नाली और सीवर की व्यवस्था हो गई। प्लाट को बुलडोजरों से समतल करके उसे आधुनिक उद्यान के रूप में विकसित किया जाने लगा। फूलों के हजारों गमलों से उसे सुसज्जित किया गया। जमीन पर गेरु की सड़कें तथा खाली जगह पर हरी दूब उगाई जाने लगी। प्लाट के आसपास के हिस्से में पक्की सड़कें और कार पार्क बनाने का काम शुरू हुआ। कुल मिलाकर उस उजड़े इलाके में एक नये नगर का निर्माण होने लगा। प्लाट पर एक भव्य मंच और विशाल शामियाना लगाने की व्यवस्था नगरश्री निदेशालय के खर्चे से होनी थी। इसके लिए नगर के जाने माने टेंट व्यापारियों से टैंडर लिए गए लेकिन काम के स्तर और साधन सम्पन्नता को देखते हुए पांच लाख का ठेका एक युवा कार्यकर्ता के सम्बन्धी को मिला जो मन्त्री जी के बहुत नजदीक था।

कुमारी प्रभा के मालिक श्री निर्मलसिंह ने फ्लड-लाइट में सुन्दरियों की बिकनी परेड के लिए स्विमिंगपूल के आसपास के वातावरण को कृत्रिम

कुंजों और झुरमुटों से सुसज्जित किया और इस भव्य और अनूठे अवसर का आनन्द उठाने के लिए विदेशी पर्यटकों को आकृष्ट करना शुरू किया। कुमारी प्रभा होटल के सारे सूट बुक हो गए और शहर के एक दर्जन पांच सितारा होटलों में कुमारी प्रभा का नाम सर्वप्रथम हो गया।

निर्मलसिंह के मित्र श्री कृष्णप्रसाद साड़ीवाले का नाम मन्त्री की दो प्रेस कान्फ्रेंसों में लिया गया। सरकार का समर्थन करने वाले समाचार-पत्रों में प्रस्ताव की प्रशंसा में और आलोचना करने वालों में आलोचनात्मक शब्दों में श्री कृष्णप्रसाद के साड़ी एम्पोरियम का बार-बार जिक्र आया। इससे श्री कृष्णप्रसाद के साड़ी एम्पोरियम में नवधनाढ्य वर्गों की महिलाओं ने जैसे हमला बोल दिया। दिल्ली के थोक साड़ी बाजार से बण्डल रातों-रात श्री कृष्णप्रसाद की दुकान में पहुंच जाते और पीछे के हिस्से में रात-दिन काम करने वाले कर्मचारी साड़ियों पर फर्म के नाम और दुगुनी तिगुनी कीमत का लेवल लगाते। दुकान खुलने और बन्द होने के समय मालिकों को भीड़ पर काबू रखने के लिए पुलिस की सहायता लेनी पड़ती।

वतनी साहब और मिसेज खन्ना ने सुन्दरी प्रतियोगिता की उम्मीदवार महिलाओं के प्राथमिक चुनाव के लिए अपना दफ्तर फ्रीडम फाइटर होम में वतनी साहब के निवास-स्थान पर ही खोल दिया था। मिसेज खन्ना ने कागजी काम में अपनी मदद के लिए होस्टल की संवासिनी ललिता को अपने साथ लगा लिया था। वतनी साहब ने ललिता के दफ्तर वालों को उसे एक महीने की ड्यूटी छुट्टी देने को तैयार कर लिया था। ललिता के प्रशासन अधिकारी डिप्टी डायरेक्टर मिस्टर धीर को जबसे वतनी साहब की झाड़ पड़ी थी, वे उनकी हर इच्छा को प्रधानमन्त्री का आदेश मानकर चलते थे। ललिता इस उपकार के लिए मिसेज खन्ना और वतनी साहब दोनों के प्रति कृतज्ञ थी और इस महान आयोजन में उनका हाथ बंटाने के लिए वह खुशी-खुशी तैयार हो गई थी। वतनी साहब के दफ्तर के बाहर सुबह नौ बजे से शाम छः बजे तक उम्मीदवार महिलाओं का तांता लगा रहता। ललिता दिनभर उम्मीदवारों के परिचय-पत्र भरती और उनके फोटो फार्म पर चिपकाती और वतनी साहब तथा मिसेज खन्ना

के समक्ष प्रस्तुत करतीं। थकान के बावजूद ललिता को यह काम बुरा नहीं लगता क्योंकि उसे सुन्दर महिलाओं से मिलने और बातचीत करने का अवसर मिलता। कभी-कभी भीड़ में उसे कोई चेहरा रेखा की याद दिला देता तब वह सोचती कि रेखा यहां होती तो वतनी साहब और मिसेज खन्ना की जान-पहचान से उसे नगर सुन्दरी पुरस्कार अवश्य मिल जाता।

विभिन्न स्थानों पर चल रही इन गतिविधियों का धड़कन केन्द्र नगर-श्री निदेशालय बना हुआ था। आई० ए० एस० डायरेक्टर श्री दयानिधि शर्मा का कमरा आधुनिकतम फैशन में सुसज्जित किया गया था क्योंकि वहां हर रोज शहर के बड़े-बड़े रईस अपने कुत्तों को लेकर आ रहे थे। इन में खद्दरधारी रईसों की संख्या काफी होतीथी। बड़े-बड़े सरकारी अफसर, मशहूर उद्योगपति, नवउद्यमी याने स्वतन्त्रभारत का नवधनाढ्यवर्ग अपनी हिन्दुस्तानी मेमों और विदेशी नस्ल के कुत्ते-कुतियों के साथ पधार रहा था। दफ्तर के सहन में एक शामियाना लगाया गया था ताकि विदेशी नस्ल के कुत्ते वहां आराम से खड़े हो सकें या लेट सकें। पास की मजदूर बस्ती के जो बच्चे स्कूल से लौटते समय कूलर का पानी पीने के लिए दफ्तर के बरामदे में घुस आते थे, उनके तमाम रास्ते बन्द कर दिए गए थे।

दफ्तर के ढांचे में भी काफी परिवर्तन किया गया था। छोटे-छोटे कमरों और पार्टीशनों को हटाकर दफ्तर के सारे स्टाफ को एक बड़े हाल में बिठाया गया था और वर्षों पुरानी फाइलों और कागजों के ढेर को छंटवाकर जलाया जा रहा था। चार दिन चले इस सफाई अभियान में एक ट्रक भरकर मिट्टी भी निकली थी। दफ्तर की बिल्डिंग की नये सिरे से पुताई, रंगाई कराई गई थी और टूटे-फूटे फर्नीचर की जगह नया फर्नी-चर खरीदा गया था। अधिकारियों के कमरों में एयरकण्डीशनर लगाए गए थे और अन्य कर्मचारियों के बैठने वाली जगह याने बड़े हाल में पंखों और कूलरों की पर्याप्त अग्रिम व्यवस्था कर ली गई थी ताकि गरमी के मौसम में काम ठीक प्रकार से चलता रहे।

दफ्तर की सभी योजनाओं को सौन्दर्य प्रतियोगिता की योजना से लिंक कर दिया गया था। सचिव श्री तारकनाथ चूंकि नगर-प्रशासन मंत्री

की प्रेरणा से इस काम में सक्रिय रुचि ले रहे थे अतः वित्त विभाग की तरफ से कोई अड़चन महसूस नहीं की जा रही थी। वित्तीय स्वीकृति के जितने प्रस्ताव भेजे गए थे, सब मंजूर हो गए थे और तत्काल खर्चों के लिए पर्याप्त राशि एडवांस के रूप में निकालने की मंजूरी भी मिल गई थी। दफ्तर के नवीनकरण कूलर, कण्डीशनर और कालीनों की व्यवस्था प्लान के खर्च से ही की गई थी।

निदेशक श्री दयानिधि शर्मा की टीम और उनके सहयोगी कर्मचारी युद्ध स्तर पर काम कर रहे थे। डा० श्याम मोहन लम्बी छुट्टी लेकर घर बैठ गए थे। वरिष्ठ उपनिदेशक वर्मा साहब की देख-रेख में सारा काम चल रहा था। श्री फ्रैंकदास और श्री सुभाष कपूर अपनी-अपनी योजनाओं के काम को ही देख रहे थे लेकिन चूंकि इन योजनाओं को सौन्दर्य प्रतियोगिताओं से लिंक कर दिया गया था अतः उन्हें वर्मा जी की सलाह पर चलना पड़ रहा था। समारोह के दो स्थान थे। श्री जयरथ के दस एकड़ के प्लाट पर सुन्दर वन का विकास किया जा रहा था और कुमारी प्रभा होटल के स्विमिंग पूल के इर्द-गिर्द पारिजात निकुंज बनाया जा रहा था। फ्रैंकदास ने सारे शहर में पचास होर्डिंग लगवाने का ठेका बाकायदा टेंडर मंगवाकर अपने ग्राहक सोनी मल्होत्रा कम्पनी को दे दिया था। होर्डिंगों का विषय था सौन्दर्य प्रतियोगिताएं। तीन रंग के पांच लाख पोस्टर छपवाकर शहर की दीवारों पर चिपकवा दिए गए थे। श्री सुभाष कपूर ने वृक्षारोपण और कंक्रीट विकास के लिए मिली योजना राशि सुन्दरवन के विकास के निमित्त प्रसिद्ध ठेकेदार दीवान बस्सरमल के हवाले कर दी थी। गंदी बस्तियों के सुधार के लिए मिली राशि को दफ्तर के सहन की कायाकल्प करने में लगा दिया गया था। प्रदर्शनियों और मेलों के लिए निर्धारित राशि का उपयोग सुन्दर वन में एक विशाल और भव्य प्रदर्शनी लगाने के लिए किया जा रहा था। इस प्रदर्शनी की रूपरेखा नगरविकास मन्त्री की अध्यक्षता में विशेष समिति ने बनाई थी। मुद्दा यह था कि मोहनजोदड़ो से गांधी-नेहरू युग तक के कला सौन्दर्य विकास का विशाल, चित्रों, कलाकृतियों, चार्टों और दुर्लभ सिक्कों के रूप में प्रदर्शित किया जाए। इस भव्य प्रदर्शनी के आयोजन के लिए नगर के सुप्रसिद्ध कला

महाविद्यालय को दस लाख का ठेका दिया गया था। समारोह के अवसर पर विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों के आयोजन का काम भी कला महाविद्यालय को दिया गया था जिसके संरक्षक अध्यक्ष वतनी साहब थे। सांस्कृतिक कार्यक्रमों में नृत्य, गायन, नाटक के अतिरिक्त रामलीला, नौटंकी और तमाशे की भी व्यवस्था की गई थी और इसके लिए पांच लाख रुपये के खर्च की मंजूरी ले ली गई थी।

सारांश यह कि नगरश्री निदेशालय की पुरानी योजनाओं के लिए मिली चालीस लाख की राशि और सौंदर्य प्रतियोगिताओं की योजना के लिए मिली तीस लाख की राशि को खर्च करने की मुकम्मिल व्यवस्था हो गई थी। निदेशक श्री दयानिधि शर्मा और उनके बॉस श्री तारकनाथ जी बहुत खुश थे कि योजना का लक्ष्य वित्त-वर्ष समाप्त होने से पहले प्राप्त कर लिया जाएगा।

समारोहों के लिए जो कार्यक्रम बना था, उसके अनुसार 27 जनवरी को मोटर कार रैली का उद्घाटन प्रधान मंत्री के हाथों होने वाला था। रैली के लिए दिल्ली से आगरा और वापसी का मार्ग तय किया गया था। प्रादेशिक सरकार से बातचीत करने के बाद यह तय हुआ था कि दिल्ली-आगरा सड़क 27 जनवरी को सुबह 8 बजे से लेकर शाम 6 बजे तक अन्य यातायात के लिए बंद रहेगी। सारे मार्ग पर स्कूलों के बच्चे रंग-बिरंगी झंडियां हिलाकर कारों को 'चीयरअप' करने के लिए तैयार खड़े रहेंगे। इस बात की व्यवस्था भी की गई थी कि प्रत्येक बच्चे को डबलरोटी, छः आलू चिप्स, दो समोसे आदि का पौष्टिक अल्पाहार दिया जाए जिस पर एक रुपया प्रति बच्चे के हिसाब से खर्च किया जाए। रैली के वापस दिल्ली पहुंचने पर उसका स्वागत स्कूली बच्चों द्वारा फूल मालाएं पहनाकर और तीन सौ कलाकारों के आर्केस्ट्रा से किया जाए।

28 जनवरी को सुंदरवन के प्रमुख कार्यक्रम चलेंगे। पुरुषों, बच्चों और कुत्तों की सौंदर्य प्रतियोगिताओं के लिए अलग-अलग स्थान निश्चित किए गए थे। लंगोटी पहने पुरुष उम्मीदवारों को एक विशाल प्रांगण में योगा करतब दिखाने थे। बच्चों को कई प्रश्नों के उत्तर देकर अपना आई० क्यू० दिखाना था और कुत्तों को अपने मालिक के आदेश पर तरह-तरह

के करतब और साथ ही भद्राचारी द्वारा सिखाए गए योगा व्यायाम प्रदर्शित करने थे। इन सारे खेलों का तमाशा देखने वालों के लिए संदरवन के तीन किनारों पर कुर्सियां और लकड़ी के स्टैंड बने थे। खेल खत्म होने के बाद प्रत्येक उम्मीदवार को जजों की समिति के आगे से गुजरना था। शाम को इसी स्थान पर सांस्कृतिक कार्यक्रम होने थे।

उसी दिन रात को कुछ चुनींदा दर्शकसमूह के समक्ष कुमारी प्रभा होटल में महिलाओं की सौंदर्य प्रतियोगिता पारिजात निकुंज के मनमोहक वातावरण में होने वाली थी। श्रीकृष्णप्रसाद के साड़ी एम्पोरियम के दस बढ़िया डिजाइन चुने गए थे और प्रत्येक महिला उम्मीदवार को बारी-बारी प्रत्येक डिजाइन की साड़ी पहनकर पारखी जजों के सामने से गुजरना था। उसके बाद महिला उम्मीदवारों को स्विमिंग ड्रेस पहनकर तालाब में नहाना था और फिर तालाब से निकलकर सीधे जजों के आगे से गुजरना था। सारे आयोजन के दौरान दर्शकों को किनारों पर लगी कुर्सियों में अंधेरे में बैठना था ताकि वे फ्लडलाइट में सहस्र गुणा तीव्र होते स्त्री-सौंदर्य को पूर्ण रूप से आत्मसात् करें।

आयोजन की विभिन्न तैयारियों को प्रेस-विज्ञप्तियों, प्रेस कान्फ्रेन्सों और प्रेस पार्टी के दौरों के माध्यम से एक सुनियोजित तरीके से प्रचारित किया जा रहा था। विभिन्न स्थलों पर विशेष लेख समाचार-पत्रों में लिखाए जा रहे थे। आयोजन से सात दिन पहले सभी प्रमुख समाचार-पत्रों में दो पृष्ठों का सप्लीमेंट दिया जाना था। 26 जनवरी की परेड में निकलने वाली प्रादेशिक झांकियों में शहर की ओर से सुंदरवन और पारिजात निकुंज की झांकियां शामिल की जा रही थीं। इस प्रकार के कारण सौंदर्य प्रतियोगिताओं को वर्ष का भव्यतम राष्ट्रीय समारोह सर्वसाधारण द्वारा माना जाने लगा था।

ऐसे भव्य समारोह को देखने के लिए लाखों लोग उत्सुक थे। सरकारी समारोह होने के कारण दर्शकों के लिए कोई प्रवेश शुल्क नहीं रखा जा सकता था, इसलिए प्रवेश केवल निमंत्रणपत्र पर सीमित किया गया था। नगरश्री निदेशालय के सब कर्मचारी शहर के सम्भ्रांत नागरिकों के नाम-पते इकट्ठे करने और उन्हें डाक से निमंत्रणपत्र वितरित करने में लगा

दिए गए थे। प्रशासन अधिकारी श्री खुल्लर और श्री रस्तोगी को यह काम सौंपा गया था। उन्होंने गणतंत्र दिवस की परेड पर आमंत्रित व्यक्तियों की सूची गृह मंत्रालय से प्राप्त कर ली थी। राष्ट्रपति भवन से 'एटहोम' के लिए आमंत्रित व्यक्तियों की सूची भी मंगवा ली गई थी। इसके अतिरिक्त स्थानीय नेताओं, भूतपूर्व पार्षदों आदि की सूचियां तथा राजधानी के महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों की सूचियां भी तैयार कर ली गईं थीं। पूरे स्टाफ को लिफाफों पर पते लिखने के लिए लगा दिया गया था और सबके लिए ओवरटाइम भत्ते की व्यवस्था कर दी गई थी। लड़कियों को छोड़कर शेष सभी स्टाफ-कर्मचारी रात दस बजे तक काम करने के लिए तैयार थे।

निमंत्रण कार्ड प्राप्त करने के लिए संसद सदस्यों, सरकारी अफसरों और राजनैतिक क्षेत्र से जुड़े कार्यकर्ताओं में हाय-तौबा मची हुई थी और खुल्लर तथा रस्तोगी को दिन-भर टेलीफोन पर लोगों की पूछताछ के उत्तर देने पड़ते थे। उनके अतिरिक्त शहर के व्यापारी, उद्योगपति, ठेकेदार आदि धनी तबकों के लोग निमंत्रण पत्र पाने को उत्सुक बैठे थे। पैसे के बल पर संभ्रांतजनों की सूची में नाम दर्ज कराने के लिए वे कुछ भी करने को तैयार थे, इसलिए खुल्लर और रस्तोगी इन लोगों के दलालों से घिरे रहते थे। सौ रुपये से लेकर पांच सौ रुपये प्रति कार्ड तक सौदा तय हो जाता था। इसकी भनक उपनिदेशक श्री वर्मा और उनके अन्य दो सहयोगियों, फ्रैंकदास तथा सुभाष कपूर को मिल गई तो उन्होंने डायरेक्टर से कहकर कार्डों के वितरण का काम पांचों अफसरों में बंटवा दिया था।

वर्मा साहब के लिए ये दिन उनकी पूरी सर्विस के सर्वोत्तम दिन थे। डायरेक्टर साहब सचिव के साथ अक्सर मंत्री की मीटिंगों या प्रेस कांफ्रेंसों में व्यस्त रहते थे और दफ्तर का एकछत्र शासन वर्मा जी के हाथ था। पांच बजे वे अपने स्टाफ को ओवरटाइम पर बिठाकर खुद स्टाफकार लेकर घर चले जाते थे और व्हिस्की के दो पैग चढ़ाकर तथा एक अद्धा जेब में रखकर सात बजे के करीब दफ्तर लौट आते थे। नौ बजे तक उनके पीने का सिलसिला चलता। फिर प्रदर्शनी की मदद में निकाली गई एडवांस रकम से ड्राइवर को पैसे देकर मोतीमहल से चिकन तंदूरी इत्यादि मंगाया

जाता। जब तक भोजन आता वर्मा साहब धुत हो चुके होते। कांपते हाथों से जैसे-तैसे चिकन तंदूरी मुंह में ठूंसते जिससे उनके हाथ, मुंह और कपड़े सब लथपथ हो जाते। इसके बाद चपरासी जैसे-तैसे उनके हाथ-मुंह तौलिये से पोंछता और वर्मा साहब कोच पर गिरकर ढेर हो जाते। स्टाफकार उन्हें लादकर घर छोड़ आती।

सात बजे से नौ-दस बजे तक का समय वर्मा साहब के शाही संस्कारों के जागृत होने का समय होता। इस समय यदि उनसे कोई तर्क-वितर्क करने लगता तो उसे तुरंत सस्पैंड करने या डिसमिस करने का आदेश देते। अक्सर ऐसे समय में डायरेक्टर के वापस दफ्तर आने की संभावना नहीं होती थी, इसलिए वर्मा साहब डायरेक्टर को सस्पैंड करने के आदेश भी दे देते थे। एक बार जब वे डायरेक्टर श्री दयानिधि शर्मा और सचिव श्री तारकनाथ को सस्पैंड करने के आदेश दे रहे थे तो दोनों अधिकारी उस कमरे में आ गए। सारा दृश्य देखने के बाद सचिव श्री तारकनाथ ने शर्मा से कहा कि इस आदमी को जल्दी से जल्दी रिटायर कर दो वरना यह सारे दफ्तर को बदनाम करेगा। उन्होंने प्रतियोगिता के काम से उसे हटाने का भी सुझाव दिया। दूसरे दिन वर्मा साहब को इसकी खबर मिली तो शर्मा के पैरों पर सिर रख रोने लगे। भविष्य में दफ्तर में कभी शराब न पीने का वायदा करके उन्होंने माफी मांगी। शाम तक वे अपना वायदा भूल गए।

समारोह से सात दिन पहले मंत्री महोदय को पारिजात निकुंज और सुंदरवन में फुलड्रेस रिहर्सल देखकर पूरा यकीन हो गया कि समारोह की सम्पूर्ण तैयारी हो चुकी है। उस दिन समाचारपत्रों में सप्लीमेंट देने का निश्चय हो गया और शहर की दीवारों पर नये सिरे से पोस्टर लगवाने का निर्णय हुआ।

दूसरे दिन शहर की दीवारें पोस्टरों से रंगी हुई दिखाई देने लगीं। सभी पत्रों में दो पृष्ठ का सप्लीमेंट छपा जिसमें लगभग सभी केन्द्रीय मंत्रियों और प्रदेश के मुख्य मंत्रियों के चित्र तथा उनके आशीर्वचन छपे थे। तीन समाचारपत्रों में सप्लीमेंट के अतिरिक्त प्रतियोगिताओं से संबंधित एक छोटा-सा विज्ञापन भी छपा था जिसमें युवाशक्ति-मंच की ओर

से युवकों को सम्बोधित किया गया था कि वे गरीब जनता के पैसे से हो रहे इस फूहड़ सरकारी प्रदर्शन के खिलाफ आवाज उठाने के लिए वोट क्लब पर होने वाली जनसभा में शामिल हों। जनसभा का समय उसी दिन शाम को पांच बजे रखा गया था।

इस छोटे-से विज्ञापन ने तारकनाथ और दयानिधि शर्मा को ही नहीं, नगर प्रशासन मंत्री को भी बेचैन कर दिया। दफ्तर पहुंचते ही शर्मा को तारकनाथ का संदेश मिला कि मंत्री जी ने फौरन बुलाया है। जब वे दोनों मंत्री के कक्ष में पहुंचे तो वहां पुलिस के उच्च अधिकारी तथा दिल्ली विकास समिति आदि संस्थाओं के उच्च अधिकारी भी मौजूद थे।

मंत्री जी ने पुलिस अधिकारी की तरफ देखकर कहा—

"यह युवाशक्ति-मंच क्या चीज है?"

"पता नहीं सर। यह कोई नया संगठन लगता है।" पुलिस अधिकारी ने नम्रता से उत्तर दिया।

"यह कोई रजिस्टर्ड संस्था है?"

"रजिस्टर्ड तो नहीं लगती।"

"आपसे क्या उन्होंने जनसभा करने की अनुमति नहीं ली?"

"सर, परमिशन जुलूस, रैली के लिए लेनी पड़ती है। या शामियाने वगैरह लगाकर कोई बड़ी जनसभा हो तो परमिशन की जरूरत होती है। दस-बीस पचास लोग खुले लॉन में बैठकर बातचीत करें तो उसके लिए परमिशन की जरूरत नहीं होती।"

"आप कैसे कह सकते हैं कि वहां दस-बीस पचास लोग इकट्ठे होंगे। हो सकता है वहां पांच-सात हजार लोग जमा हों और कुछ खुराफात कर बैठें।"

"सर, इसके लिए हम बंदोबस्त कर रहे हैं।"

"देखो भई, मुझे तो लगता है कि यह किसी विरोधी दल की शरारत है। इसके साथ सख्ती से निपटना पड़ेगा। आप इस मीटिंग में सफेद वर्दियों में भी अपने आदमी भेजिए। वे इस बात का पता लगाएं कि इसमें कौन-कौन लोग हैं और उनके क्या इरादे हैं। मीटिंग में दिए गए भाषणों की रिपोर्ट तैयार कराइए और मुझे भेजिए।" फिर दूसरे अधिकारियों की

तरफ देखकर मंत्री जी बोले—

"आप सबको इन समाज-विरोधी तत्त्वों से सावधान रहना है। जो काम चल रहे हैं उनपर दिन-रात निगरानी रखी जाए। सिक्योरिटी के सारे प्रबंध ठीक-ठाक कर लिए जाएं। प्रधान मंत्री जी इसमें इन्वाल्व हैं। देश के कई और नेता इसमें इन्वाल्व हैं। कुछ गड़बड़ी हुई तो तुम सबके ऊपर जिम्मेवारी आएगी।"

सब अधिकारियों की तरफ से हर तरह की सावधानी बरतने का आश्वासन पाकर मीटिंग बर्खास्त हुई। जब सब लोग चले गए और दयानिधि शर्मा तथा तारकनाथ मंत्री के कक्ष में रह गए तो शर्मा ने कहा—

"सर, हमारे सीनियर अफसर डा० श्याम मोहन लंबी छुट्टी लेकर घर बैठ गए हैं। जबसे उनके हाथ से यह काम लिया गया है, वे छुट्टी पर हैं। मुझे तो इस शरारत में उनका भी हाथ लगता है।"

मंत्री जी ने कहा—

"पता लगाइए और उनका हाथ इसमें दिखाई देता है तो उन्हें डिसमिस कीजिए।"

"जी सर।" कहकर दयानिधि शर्मा नम्रता से झुक गए।

तारकनाथ और दयानिधि शर्मा जब मंत्री के कक्ष से निकले तो उनके चेहरे पर काफी संतोष झलक रहा था।

शाम को पांच बजे से पहले बोट क्लब पर एक सौ लाठीधारी पुलिस के कर्मचारी किसी भी गड़बड़ी को रोकने के लिए तैयार थे। जानी, राजू, विक्की और गुल्लू जब वहां पहुंचे तो उन्होंने लाठीधारी पुलिस की भीड़ देखकर अनुमान लगाया कि यहां कोई बड़ी राजनैतिक रैली होने वाली है। वे बोट क्लब से काफी दूर इंडिया गेट के लॉन में चले गए। वहां उन्होंने कपड़े का बैनर निकाला और दो डंडे गाड़कर लटका दिया। बैनर पर लिखा था 'युवाशक्ति-मंच'। वहीं बैठकर वे अपने दोस्तों का इंतजार करने लगे। थोड़ी देर बाद असीम, नासिर, विपिन, अजय, गुरदयाल और उनके साथ पंद्रह-बीस और लड़के आ गए। पांच बजे तक वहां पचास-साठ लड़के जमा हो गए। तीस-चालीस लड़कों के आने की और उम्मीद थी, इस

लिए आयोजकों ने पंद्रह-बीस मिनट और इंतजार करने का फैसला किया। सवा पांच बजे तक संख्या सौ के लगभग हो गई । अब राजू ने खड़े होकर भाषण देना शुरू किया—

"भाइयो, आप लोग जानते हैं कि इस शहर में सौन्दर्य प्रतियोगिताओं के नाम पर एक फूहड़ सरकारी तमाशा होने वाला है और उसमें गरीब जनता की गाढ़ी कमाई के लाखों रुपये बरबाद होने वाले हैं । आप यह भी जानते हैं कि सरकारी और गैर-सरकारी स्तर पर ये तमाशे क्यों किए जाते हैं । इसलिए किए जाते हैं कि भुखमरी, बेकारी के नीचे पिसती हुई भोली-भाली जनता का ध्यान अपनी बेबसी से हटाकर इन तमाशों की तरफ मोड़ दिया जाए । इन तमाशों के खिलाफ आवाज उठाने की जिम्मेदारी युवकों पर आती है क्योंकि देश की अधिकांश जनता इन तमाशों के पीछे छिपे असली मनसूबों को नहीं समझती है । सुविधाभोगी वर्गों के इन चोंचलों में देश का इतना धन हर साल बरबाद होता है कि उस धन को यदि सही कामों में लगाया जाए तो हमारी तमाम समस्याएं हल हो जाएं । मेरा आप लोगों से निवेदन है कि यदि आप इन कामों को गलत समझते हैं तो खुलकर इनका प्रतिकार करने के लिए आगे आएं । मैं चाहता हूं कि जो लोग इस काम में हमारा हाथ बंटाने को तैयार हों, वे खुलकर 'हम तैयार हैं' का नारा लगाएं ।"

राजू की बात समाप्त होते ही आसमान में 'हम तैयार हैं' का नारा गूंजा । इस अचानक उठे नारे को सुनकर लाठीधारी पुलिस का ध्यान उनकी तरफ गया और वे अपनी-अपनी लाठियां सम्हालकर उस स्थान की तरफ दौड़े । पुलिस के धावे को देखकर बोट क्लब के आसपास खड़े या बैठे लोग भी चौंके और किसी तमाशे की उम्मीद में उस तरफ जाने लगे । यूनिवर्सिटी के लड़कों का एक छोटा-सा दल जो वहां घूमने आया था, उस तरफ मुड़ गया और सभा में शामिल हो गया । इंडिया गेट के लॉन में पिकनिक मनाने के लिए आए स्त्री-पुरुष भी सभा-स्थल पर जमा हो गए ।

लाठीधारी पुलिस ने सभा को चारों तरफ से घेर लिया तो सभा में बैठे युवकों का उत्साह दुगुना हो गया । जानी ने उठकर नारा लगाया—

"व्यूटी कम्पीटीशन···"

तुमुल ध्वनि में उसका उत्तर मिला, "मुर्दावाद।"

"फिजूलखर्ची···"

"वंद करो···"

"खेल तमाशे···"

"वंद करो···"

"प्रद्युम्नकुमार···"

"मुर्दावाद···"

समाचारपत्रों के तीन-चार फोटोग्राफर और संवाददाता भी वहां पहुंच गए थे।

इस हड़वड़ाहट में राजू को कुछ देर के लिए अपना भाषण रोकना पड़ा। इस बीच दो लड़के साइकिलों के पीछे कागजों के वंडल रखे वहां आ पहुंचे। साइकिलें खड़ी करके उन्होंने वंडल खोले।

'प्रतिकार' नामक साप्ताहिक पत्र का प्रवेशांक छपकर आया था। लड़कों ने उसकी एक-एक प्रति सभा में उपस्थित लोगों में बांटनी शुरू की। पुलिसवालों ने एक-एक प्रति ली और पढ़ने लगे। तमाशा देखने के लिए जुटे बाहर के लोगों ने भी आगे बढ़-बढ़कर अखबार ले लिया।

राजू ने अपना भाषण फिर शुरू किया—

" भाइयो, यह अखबार जो आपके हाथ में है, आपको यह वताएगा कि युवाशक्ति-मंच क्या करना चाहता है, उसके उद्देश्य क्या हैं और उसका रास्ता क्या है। आप इस पत्र को घर ले जाइए। खुद पढ़िए अपने परिवार के लोगों को पढ़ाइए और अपने मित्रों-परिचितों को दिखाइए। अगर इसे पढ़ने के बाद आप लोगों को लगे कि हम जो कुछ कर रहे हैं उसमें हाथ वंटाना आप लोगों का भी कर्त्तव्य है तो तीस रुपये का चंदा भेजकर इसके स्थायी ग्राहक वनिए और हमारे कामों में सक्रिय या नैतिक सहयोग दीजिए।

" संक्षेप में, मैं आपको बता दूं कि युवाशक्ति-मंच ऐसा युवक संगठन है जो सामाजिक बदलाव के लिए उन शक्तियों का प्रतिकार करेगा जो सामाजिक जीवन में जड़ता लाती हैं। अन्याय, शोषण, भ्रष्टाचार का

वातावरण हमारे चारों तरफ फैलता जा रहा है। सरकारी दफ्तरों में, कोर्ट कचहरियों में, स्कूल-कालेजों में, अस्पतालों-डिस्पेंसरियों में जहां नजर जाती है, भ्रष्टाचार और बेईमानी दिखाई देती है। हम सब इसे देखते हैं और इसे नियति मानकर चुपचाप बर्दाश्त कर लेते हैं। मैं समझता हूं, यह कायरता ही नहीं, पाप भी है। मनुष्य अगर सही मायनों में मनुष्य है तो उसे अपनी परिस्थितियों पर सकारात्मक ढंग से रिएक्ट करना चाहिए। जो परिस्थितियां स्वस्थ सामाजिक जीवन के लिए बाधक हैं उनका प्रतिकार करना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य होना चाहिए। लेकिन प्रतिकार शस्त्र के बल से नहीं, विचार और विश्वास के बल से करना चाहिए। आप इसे महात्मा गांधी का सत्याग्रह का रास्ता कहना चाहें तो कह सकते हैं। हमारा प्रतिकार से अर्थ सत्याग्रह से ही है और वह अहिंसात्मक है। जहां कहीं भी कोई गलत काम होगा, हम उसके खिलाफ आंदोलन करके उसे जनता के सामने लाएंगे और उस गलत काम को रोकने के लिए धरना देंगे, सत्याग्रह करेंगे, जेल भी जाएंगे।

"अपने आंदोलन के श्रीगणेश के लिए हमने इस शहर में होने वाली सौन्दर्य प्रतियोगिताओं के मौके को चुना है। आप इस पत्र में पढ़ेंगे कि इस वाहियात तमाशे में देश का कितना धन बरबाद हो चुका है और होने वाला है। हम चाहते हैं कि इस देश का प्रत्येक प्रबुद्ध व्यक्ति इस बात को सोचे—पांच योजनाएं लागू हो चुकने पर भी हमारी गरीबी-बेरोजगारी और भुखमरी क्यों दूर नहीं हुई? योजनाओं का यह अरबों-खरबों रुपया कहां गया? किनकी तिजोरियां भरीं? राजाओं-महाराजाओं जैसी शान-शौकत से जीने वाली यह बहुत बड़ी जमात कैसे तैयार हुई? और फिर उसे स्वयं निर्णय करना होगा कि जो गलत काम हो रहे हैं, उन्हें चुपचाप बरदाश्त करना है या उनका प्रतिकार करना है। प्रतिकार के अनेक तरीके हो सकते हैं। हम यह नहीं कहते कि आप सबको हमारे साथ धरने या सत्याग्रह में शामिल होना चाहिए। आप व्यक्तिगत प्रतिकार भी कर सकते हैं। आप प्रतिकार करने वालों को नैतिक और आर्थिक बल दे सकते हैं। मुख्य बात यह है कि आप अहिंसात्मक प्रतिकार को एक स्वस्थ सामाजिक क्रिया के रूप में आदर दें। अगर आप ऐसा नहीं करेंगे तो

हमारी सामाजिक विसंगतियां हमें भयानक रक्तपात की ओर ले जाएंगी, जिसका मतलब होगा हथियारों की शक्ति की विजय और यह मनुष्यता का सबसे बड़ा अपमान होगा।

"हमारा तत्काल कार्यक्रम है कि हम 27 तारीख को सुन्दरवन को जाने वाले सभी रास्तों पर धरना देंगे। जो हमारा साथ देने के लिए तैयार हैं, वे उस दिन काला बैज पहनकर सुन्दरवन के पास पहुंच जाएं।"

राजू का भाषण समाप्त होते ही जानी ने नारे लगाए—

"ब्यूटी कम्पीटीशन···"

"मुर्दाबाद···"

"फिजूलखर्ची···"

"बंद करो···"

"खेल-तमाशे···"

"बन्द करो···"

"प्रद्युम्न कुमार···

"मुर्दाबाद···

नारों के शोर में सभा विसर्जित हुई। जैसे ही लोग इधर-उधर जाने लगे, सफेद वर्दी में पुलिस के दस आदमी आगे आए। उन्होंने राजू और जानी को घेर लिया और उनसे थाने चलने को कहा। राजू के एतराज करने पर पुलिस उन्हें जबर्दस्ती पकड़कर ले जाने लगी। इसपर साठ-सत्तर लड़कों ने सफेद वर्दी वालों को घेर लिया और उनसे अपने दोस्तों को छुड़ाने लगे। अब लाठीधारी पुलिस ने हस्तक्षेप किया। हलके लाठी चार्ज के बाद उन्होंने भीड़ को तितर-बितर किया और राजू जानी समेत दस लड़कों को जबर्दस्ती पुलिस की गाड़ियों में बिठाकर ले गए। तीन लड़के लाठी की चोटों से जखमी हुए थे। दो लड़के उन्हें टैक्सी में बिठाकर अस्पताल ले गए। शेष पचास-साठ लड़के नारे लगाते हुए पार्लियामेंट स्ट्रीट थाने की ओर चल दिए। उनके साथ-साथ समाचारपत्रों के दो संवाददाता और फोटोग्राफर भी थे।

पार्लियामेंट स्ट्रीट थाने के बाहर लड़कों ने नारे लगाने शुरू किये। इस बीच पी० टी० आई० और यू० एन० आई० ने टेलीप्रिंटर लाइन पर लाठी

चार्ज और दस लड़कों की गिरफ्तारी की खबर भेज दी। थोड़ी देर में थाने में कई संवाददाता पहुंच गये। पुलिस के अधिकारी ने लड़कों की भीड़ को बताया कि जरूरी पूछताछ के लिए उनके साथियों को रोका गया है और जल्दी ही उन्हें छोड़ दिया जाएगा। लड़कों को उनकी बात पर विश्वास नहीं हुआ और वे नारे लगाते रहे। आधे घण्टे तक यह सिल-सिला चला और उसके बाद राजू, जानी और उनके साथी बाहर आ गये।

बात बहुत मामूली-सी थी लेकिन दूसरे दिन के समाचारपत्रों ने उस घटना को पहले पृष्ठ पर तस्वीर के साथ छापा। उसके साथ 'प्रतिकार' पत्र का जिक्र भी किया गया था जिसके सम्बन्ध में कई पत्रों ने कहा था कि इस पत्र के पीछे एक सुविचारित योजना है और यह अहिंसात्मक प्रति कार की भावना के प्रसार के लिए शुरू किया गया है। समाचारपत्रों ने इस पत्रिका के उद्धरण भी प्रकाशित किए जिनमें दिखाया गया था कि नगरश्री निदेशालय की वार्षिक योजना की सत्तर लाख रुपये की राशि किस तरह ठेकेदारों, व्यापारियों, सरकारी अफसरों और राजनैतिक नेताओं के बीच बट रही है। कुमारी प्रभा होटल के मालिक निर्मलसिंह, एक मोटर कम्पनी के मालिक जयरथ, साड़ी व्यापारी श्रीकृष्णप्रसाद, स्वतन्त्रता सेनानी शहीद, सरफरोश और वतनी साहब तथा भद्राचारी के योगाश्रम को प्राप्त हो रहे लाभों का विस्तृत विवरण देने के साथ यह भी बताया गया था, किस आदमी को कितनी रकम का ठेका कैसे मिला। नगर प्रशासन मंत्री श्री प्रद्युम्न कुमार के साथ उसके सहयोगी युवा कार्यकर्ताओं और विभाग के सचिव श्री तारकनाथ और डायरेक्टर श्री दयानिधि शर्मा के मनसूबों का भी पत्र में पर्दाफाश किया गया था। वतनी साहब के निवास-स्थान पर चलने वाली सुन्दरी लीला और कुमारी प्रभा होटल के चार विशेष सूटों में होने वाले सुरा-सुन्दरी सत्रों की झलक को भी पत्र में प्रस्तुत किया था। निमन्त्रण-कार्डों की अवैध बिक्री से किस-किस अधि-कारी को कितना लाभ हो रहा था, इसकी विस्तृत जानकारी भी पत्र में दी गई थी।

ये तमाम सूचनाएं पत्रों के लिए नई थीं और सरकार की टांग खींचने

के हर मौके की ताक में बैठे समाचारपत्रों ने इन घटनाओं के सूत्र को पकड़कर अपनी अन्वेषणात्मक रिपोर्ट छापनी शुरू की। उससे अगले दिन कुछ घटनाओं को जबर्दस्त काण्ड के रूप में समाचार पत्रों ने छापा।

मन्त्री द्वारा व्यापारियों से इकट्ठा किये गए रुपये का विवरण एक अखबार ने नमक-मिर्च लगाकर छापा। उससे अगले दिन वतनी साहब, स्वतन्त्रता सेनानी द्वारा झूठे प्रमाण पत्रों की सहायता से कई लोगों को पेंशनें दिलाने और उनसे माहवारी वसूल करने की कहानी छपी। एक पत्र ने वतनी साहब और मिसेज खन्ना का पुराना इतिहास खोज निकाला। इसके अनुसार जब वतनी साहब शरणार्थी शिविरों में सेवा का काम करते थे, तो मिसेज खन्ना को जो उस समय मिस छाबड़ा थीं उन्होंने एक बहुत बड़े वी० आई० पी० को सादर भेंट किया था। कई वर्ष वी० आई० पी० की कोठी में रहने के बाद जब वी० आई० पी० रिटायर हुए तो उनकी शादी कर दी गई और होस्टल की वार्डन बना दिया गया। वतनी साहब ने वी० आई० पी० से कई काम कराये और उनके रिटायर होने के बाद अपनी पूंजी भी वापस ले ली।

दो-तीन दिनों में समाचारपत्रों ने सौन्दर्य प्रतियोगिताओं के खिलाफ ऐसा वातावरण बना दिया कि सरकारी अधिकारी भयभीत हो गए। मन्त्री की छवि धूमिल हो गई और उनके साथ जुड़े राजनैतिक कार्यकर्ताओं की अच्छी बदनामी हो गई। पुलिस अधिकारियों ने पता लगाया कि 'प्रतिकार' नाम का पत्र मदनगीर के पास बनी झुग्गी-झोंपड़ी कालोनी में पच्चीस गज जमीन पर बने एक छोटे-से मकान से प्रेमदास नाम के एक व्यक्ति द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है। पत्र का प्रकाशक, संपादक और मुद्रक यही व्यक्ति है जो थोड़ा-सा लिखना-पढ़ना भर जानता है और एक सरकारी कर्मचारी का बाप है। उसका बेटा कुशक एक ओजस्वी प्रगतिशील कवि होने के साथ नगरश्री निदेशालय में वरिष्ठ सहायक है। पत्र को कई तरुण लेखकों का सहयोग मिल रहा हैं जिनमें श्याम मोहन नाम का एक व्यक्ति भी है जो पत्र के प्रकाशनस्थान अर्थात् 27/5 जे० जे० कालोनी, मदनगीर में ही रहता है।

पुलिस रिपोर्ट के आधार पर सचिव श्री तारकनाथ ने डॉ० श्याम

मोहन और कुशक को सेवा-निलंबित कर दिया और उनके खिलाफ सर-कारी रहस्यों को खोलने का आरोप लगाकर विभागीय जांच शुरू कर दी गई।

लेकिन पुलिस पत्र के प्रकाशन पर कोई रोक नहीं लगा सकी। पत्र शुरू करने के लिए जो घोषणापत्र भरा गया था वह वैध था और उसके प्रकाशन में प्रेस अधिनियम की किसी धारा का उल्लंघन नहीं होता था। उधर समाचारपत्रों ने प्रतिकार के पक्ष में मोर्चा ले लिया था और उसके प्रकाशन पर किसी भी प्रकार का प्रतिबन्ध लगने की स्थिति में वे तमाम सरकारी खबरों का बहिष्कार करने की धमकी देने लगे थे। इस बीच प्रतिकार का वार्षिक ग्राहक बनने के लिए लगभग दो हजार व्यक्तियों ने तीस-तीस रुपये का चन्दा भेज दिया था और पत्र की आर्थिक स्थिति काफी मजबूत हो गई। समाचारपत्र विक्रेताओं से अगले अंक की पांच हजार प्रतियों के आदेश प्राप्त हो चुके थे।

दूसरे अंक की दस हजार प्रतियां छपीं और 25 जनवरी को विभिन्न पुस्तक-स्टालों में पहुंचा दी गईं। इसके अतिरिक्त 26 जनवरी की परेड के समय कई युवक इंडिया गेट में जुटी भीड़ में घूम-घूमकर अखबार बेचने लगे। बीस-तीस-आठ आकार के बतीस पृष्ठों के पत्र की कीमत एक रुपया रखी गई थी और उसकी प्रतियां हाथों-हाथ बिक रही थीं। इस अंक में स्वतन्त्रता-सेनानी वतनी साहब द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न धन्धों की जानकारी दी गई थी जिनमें स्त्रियों का अवैध धन्धा भी था। सरफरोश के नेहरू बाल संगठन में बच्चों के अभिभावकों से वसूले जा रहे चन्दे का वर्णन और भद्राचारी के योगाश्रम में शहीद साहब के दबादब पैसा पीटने का रोचक वर्णन भी प्रस्तुत किया गया था।

'प्रतिकार' ने चिनगारी दी और दूसरे पत्रों ने जो सनसनीखेज खबरों की ताक में थे, हवा दी। माहौल सौन्दर्य प्रतियोगिताओं के खिलाफ हो गया। वही अखबार जो कुछ दिन पहले प्रतियोगिताओं के राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व के सम्बन्ध में, राजा-रानी की अंग्रेजी या अमरीकी अपभ्रंश में प्रशंसात्मक लेख लिख रहे थे, प्रतियोगिताओं से जुड़े हुए लोगों की अंतरंग कहानियां शहीदाना अंदाज में छापने लगे थे। एक बड़े सेठ की

चाकरी में लगे एक तरुण पत्रकार ने, जिसने हाल ही में एक राजनैतिक काण्ड का पर्दाफाश करते हुए तमाम लोकतान्त्रिक संस्थाओं को दो कौड़ी का सिद्ध करके परोक्ष रूप से तानाशाही की वकालत की थी, पिछले दिन प्रतियोगिताओं पर एक तीखा लेख लिखा था, जिसने नगर प्रशासन मन्त्री को बहुत बेचैन किया था, इसलिए उन्होंने 26 जनवरी की शाम को गणतन्त्र दिवस के रंगीन समारोहों से दूर, कुमारी प्रभा होटल में एक हंगामी मीटिंग बुलाई थी। मीटिंग में प्रतियोगिताओं से सम्बन्धित सभी विभागों के अधिकारी, पुलिस, सी० आई० डी० और प्रतियोगिताओं का काम करने वाले ठेकेदार व्यापारी सब को बुलाया गया था। कुमारी प्रभा होटल के बुकेहाल में तीस-पैंतीस लोगों की बैठक होनी थी और बैठक के बाद काकटेल, डिनर आदि की व्यवस्था थी।

दिलोदिमाग पर सम्मोहिनी करने वाली रंग-बिरंगी रोशनियों के नीचे राजाओं-महाराजाओं के ड्राइंग-रूमों की सजधज को फीका करने वाले मखमली गलीचों, गद्देदार सोफों, कुर्सियों में बिराजकर राष्ट्रीय संकट पर विचार करने के लिए जो सभा जुटी, वह शास्त्रों की दृष्टि से सही मायनों में सभा थी, क्योंकि उसमें जितने भी लोग भाग ले रहे थे, उनमें मन्त्री महोदय को छोड़कर, सब अधेड़ उम्र पार कर चुके थे और वृद्धों की श्रेणी में आते थे। सब के सब धर्म की बात करने वाले थे और उनका धर्म सत्य से युक्त था तथा सत्य निश्छलता की पन्नी में लिपटा हुआ था।

मन्त्री महोदय ने सभा की कार्रवाई शुरू की। कार्यसूची का पहला विषय पुलिस की व्यवस्था थी जिसपर वे पहले ही पुलिस अधिकारियों से बात कर चुके थे। दूसरे उपस्थित सज्जनों की जानकारी के लिए उन्होंने बताया कि पुलिस का पूरा बन्दोबस्त हो चुका है और किसी भी गड़बड़ी को सख्ती से दबाने का प्रबन्ध कर लिया गया है।

इसके बाद विभाग की तरफ से होने वाले कामों का लेखा-जोखा लिया जाने लगा। सचिव श्री तारकनाथ ने बताया कि नगरश्री निदेशालय की समग्र योजना राशि सत्तर लाख रुपये है जिसे खर्च करने की मुकम्मिल व्यवस्था हो गई है। कार रैली के लिए दिल्ली से आगरा तक सड़क के दोनों ओर के टेढ़े-मेढ़े पेड़ों को कटवा दिया गया है और पचास

पचास मीटर की दूरी पर सरु जाति के सुन्दर पेड़ लगा दिये गए हैं और उन पर लाल, हरी, नीली रोशनियां लगाने का काम भी पूरा हो गया है। हनुमान मन्दिर से टीका लगवाकर सीधे आए व्यक्ति की तरफ इशारा करते हुए उन्होंने कहा, "ठेकेदार साहब अभी-अभी सारी व्यवस्था देखकर आए हैं। इन्होंने बिना कोई एडवांस लिए दो दिनों में सोलह हजार सरु के पेड़ लगाए हैं। इस सारी व्यवस्था पर आठ लाख नव्बे हजार एक सौ पन्द्रह रुपये का अनुमान लगाया गया था लेकिन समय कम होने की वजह से शायद असली खर्च ज्यादा हो जाए। यह खर्च हमारी योजना के खर्च के अतिरिक्त है और इसके लिए स्पेशियल सैंक्शन मांगी गई है।"

मन्त्री ने बीच में कहा, "वह सैंक्शन मैंने आज दिलवा दी है। उतनी पेमेंट फिलहाल कर दो, बाकी के खर्च के लिए अलग से मंजूरी मिल जायेगी।"

सुन्दरवन के विकास का ठेका जिन सज्जन को दिया गया था वे अपनी जेब से छोटी सी किताब निकालकर उसका पारायण करने लगे थे। पुस्तक में विष्णु सहस्रनाम, गुरबानी, तुलसी के दोहों के साथ-साथ कुछ महत्त्वपूर्ण राजनैतिक व्यक्तियों, रेस के घोड़ों और तस्करों के नाम-पते भी थे और यह कहना मुश्किल था कि वे इस समय किसका पारायण कर रहे थे। सुन्दरवन का जिक्र छिड़ते ही उन्होंने किताब को माथे से लगाकर बन्द किया और जेब में डाल लिया। प्रगति के सम्बन्ध में पूछे जाने पर उन्होंने बताया कि उनके साथ घोर अन्याय हुआ है। उनका कहना था कि जब कुछ साल पहले श्रीमती धनपाल ने प्रगति मेले का आयोजन किया तो उसका ठेका इस ठेके से तीन गुना था जबकि इस बार एक बिलकुल उजाड़ जगह में नया नगर बसाया गया है। जब ठेका दिया गया था तो सुन्दर-वन की कल्पना वैसी नहीं की गई थी, जैसी कि बाद में बनी। श्रीमती धन पाल के प्रगति मेले में या आगाजान बैलोस के मेले में, जो पिछले दो साल से लगातार चल रहा है, सभी सरकारी विभागों ने मदद की है। बैलोस साहब के मेले में तो रोज सरकार की तरफ से फिल्में भी दिखाई जाती हैं जिन पर टिकट लगाकर बैलोस साहब को अपना घाटा पूरा करने में कोई दिक्कत नहीं होती। नाटक, कव्वालियां और नाच-गाने के सरकारी

प्रोग्रामों पर भी टिकट होता है। लेकिन यहां जितने भी कार्यक्रम हो रहे हैं, सब बिना टिकट के हैं।

मन्त्री ने उन्हें सांत्वना देते हुए कहा, "आपकी मुश्किल को हम समझ रहे हैं। आपका जो भी फालतू खर्च होता है, उसका इन्तजाम हम करेंगे। आप फंक्शन के वाद तारकनाथ जी और दयानिधि शर्मा के साथ बैठकर सब कुछ तय कर लीजिए। हम आपका नुकसान नहीं होने देंगे। और फिर आपसे हमें भविष्य में भी तो कई काम लेने हैं।"

इसके वाद काररैली के आयोजन की स्थिति जानने के लिए उन्होंने जयरथ साहब की तरफ देखा। जयरथ ने बताया कि कुल मिलाकर डेढ़ सौ कारें रैली में भाग ले रही हैं। इनमें से सौ से ज्यादा इम्पोर्टेड कारें हैं। पैट्रोल की कुछ अड़चन आ रही थी लेकिन अब सब ठीक हो गया है। "नो प्रॉबलेम सर।"

दिल्ली विकास समिति, नगर-निगम, उद्यान विभाग, नाच विभाग, कवि सम्मेलन का आयोजन करने वाले साहित्य कला विभाग, बच्चों के झुंड इकट्ठा करने वाले शिक्षा विभाग, सड़कों और कार पार्कों का निर्माण करने वाले लोक निर्माण विभाग, मेलों-खेलों के आयोजन में विशेषज्ञता रखने वाले विकास विभाग के अधिकारियों ने अपने-अपने कामों की रिपोर्ट मन्त्री महोदय को दी। उन्होंने बताया कि अपने-अपने विभागों की योजना राशि का किस प्रकार इस मौके परसदुपयोग किया जा रहा है। मोटे तौर पर हिसाब लगाकर मन्त्री महोदय ने देखा, कुल मिलाकर पांच करोड़ की योजना राशि के व्यय की व्यवस्था हो गई है। संतोष की सांस लेते हुए मन्त्री ने उपस्थित सज्जनों को बताया कि यह आयोजन निर्विघ्न समाप्त हो गया तो यह अपने में एक कीर्तिमान होगा और इसका सेहरा आप सब लोगों के सिर पर होगा। श्री दयानिधि शर्मा की तरफ देखकर बोले "आप अपने सारे स्टाफ को ड्यूटी पर लगाइए। रात बड़ी देर तक उन्हें फंक्शन में रहना पड़ेगा। उनके लिए ओवरटाइम की व्यवस्था तो होनी ही चाहिए साथ-साथ उनके खाने-पीने की भी अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए।"

उसके वाद काकटेल और डिनर के साथ मीटिंग विसर्जित हुई।

27 जनवरी को सुबह आठ बजे कार रैली का उद्घाटन प्रधानमन्त्री

के करकमलों से होने वाला था। संभावित गड़बड़ी की आशंका के कारण पुलिस-सुरक्षा की पूरी व्यवस्था कर ली गई थी। सुबह पांच बजे से ही सुन्दरवन को आने वाले सभी रास्तों पर लाठीधारी पुलिस तैनात थी। लगभग पांच हजार पुलिस सिपाही लाठियों और बेंत की ढालों से सुसज्जित होकर, काले बैज वाले लोगों को पकड़ने के लिए तैयार खड़े थे। भारी संख्या में सफेद पुलिस भी समारोह के विभिन्न स्थानों पर लगा दी गई थी। कार्यक्रम के अनुसार सभी आमन्त्रित व्यक्तियों को पौने आठ बजे तक अपनी-अपनी सीटों पर बैठ जाना था। आठ बजे प्रधानमन्त्री को आना था। पंडाल में संक्षिप्त भाषण के बाद ठीक सवा आठ बजे उन्हें झंडी हिलाकर कार रैली का उद्‌घाटन करना था।

निमन्त्रित व्यक्ति सात बजे से ही आने लग गए। विभिन्न नाकों पर तैनात पुलिस प्रत्येक व्यक्ति के कार्ड देखकर उन्हें अन्दर जाने देती थी। चूंकि निमन्त्रण कार्ड नगर के चुने हुए संभ्रांत व्यक्तियों को ही दिए गए थे अतः पुलिस कर्मचारी कार्डधारियों से ज्यादा पूछताछ नहीं कर रहे थे। लेकिन काला बैज लगाए लोगों के प्रति वे चौकन्ने थे। साढ़े सात बजे तक पंडाल लगभग भर गया लेकिन तब तक काले बैज वाला एक भी व्यक्ति उन्हें नहीं दिखाई दिया। पौने आठ बजे तीस-चालीस लड़कों का एक दल काली झंडियां हाथ में लिए और काले बैज लगाए, नारे लगाता हुआ मुख्य द्वार की ओर बढ़ा। पुलिस के जवान उनपर टूट पड़े और उन्हें जल्दी-जल्दी पुलिस की गाड़ियों में भरा जाने लगा। लड़के नारे लगाते हुए, पुलिस से हाथापाई करने लगे लेकिन उनपर काबू पा लिया गया और नारों से गूंजती हुई तीन पुलिस गाड़ियां घटनास्थल से चल दीं।

फिर सब शांत हो गया। आयोजन करने वाले उच्च अधिकारियों ने इस बात पर संतोष प्रकट किया कि प्रधान मन्त्री के आने से पहले-पहले हल्ला-गुल्ला समाप्त हो गया और विरोध करने के लिए तीस-चालीस लोग ही आगे आए।

ठीक आठ बजे प्रधान मन्त्री का समारोह स्थल पर आगमन हुआ। स्कूल के बच्चों ने उनका स्वागत किया। मंच पर खड़े होकर उन्होंने विभिन्न संस्थाओं और कार्यकर्ताओं की ओर से लगभग दो दर्जन फूल-

मालाएं स्वीकार कीं फिर औपचारिक परिचय आदि के बाद संक्षिप्त भाषण दिया। भाषण में कहा गया कि जो आयोजन आज और कल यहां हो रहा है वह दिखाता है कि हमारा देश कितनी तरक्की कर रहा है। आज सारी दुनिया में हमारी नाक ऊंची हो गई है। सारी दुनिया के लोग हमारी तरफ देख रहे हैं। फिर भी कुछ लोग इस तरक्की को नहीं देख रहे हैं और हमारे हर अच्छे कदम का विरोध करने पर तुले हैं। इसका मतलब क्या है? मतलब साफ है कि हम इस देश की गरीब जनता के लिए जो करना चाहते हैं ये मुट्ठी-भर लोग उसे नहीं होने देना चाहते। उसमें रोड़े अटकाते हैं। यह क्यों ऐसा करते हैं? इसलिए करते हैं कि ये लोग खुद तो कुछ कर नहीं सकते और हम करते हैं तो इनको ईर्ष्या होती है। इनका कोई उद्देश्य नहीं है, कोई कार्यक्रम नहीं है। इनका एकमात्र कार्यक्रम सिर्फ हमारा विरोध करना है। ये लोग पूंजीपतियों के पिट्ठू हैं। इसका सबूत यह है कि पूंजीपतियों के अखबार इनकी मामूली बातों को भी बढ़ा-चढ़ाकर छापते हैं। जब तक आप सब लोग मिलकर इन समाजविरोधी तत्त्वों का मुकाबला नहीं करेंगे, हमारा देश आगे नहीं बढ़ेगा, तरक्की नहीं करेगा।

करतल ध्वनि के साथ यह प्रथम कार्यक्रम खत्म हुआ। अब प्रधान मन्त्री को सड़क के पास चलकर कार रैली का उद्घाटन करना था। लेकिन पंडाल के पीछे खड़े दस-बारह सफाई कर्मचारियों ने काली झंडियां हिलाकर नारे लगाने शुरू किए—

"ड्यूटी कम्पिटीशन···"

"मुर्दाबाद···"

"कार रैली"

"मुर्दाबाद···"

"फिजूलखर्ची···"

"बंद करो···"

"खेल-तमाशे···"

"बंद करो···"

इस अप्रत्याशित घटना के लिए कोई तैयार नहीं था। बाहर खड़े

पुलिस के जवान जब तक भीतर घुसें, सफेद वर्दी वाले पुलिस के जवानों ने नारे लगाने वालों को दबोच लिया था। तभी पंडाल के बीच से सात-आठ नौजवान उठे और उन्होंने नारे लगाते हुए सैकड़ों हैंडबिल हवा में उछाल दिए। प्रधान मन्त्री के अंगरक्षकों और रक्षा पुलिस ने मंच को घेर कर प्रधानमन्त्री को सुरक्षित किया। पुलिस के बीस-पच्चीस जवान पंडाल में घुस गए और नारे लगाने वाले युवकों को पकड़ने लगे। पंडाल में बैठे लोगों में भगदड़ मच गई। बच्चे रोने लगे, औरतें चीखने लगीं। लेकिन दो-तीन मिनट में सब कुछ शांत हो गया। हुल्लड़ मचाने वाले पच्चीस युवकों को पकड़ लिया गया और उन्हें उठाकर पुलिस की गाड़ियों में ठूंस दिया गया।

इसके बाद प्रधानमन्त्री द्वारा कार रैली का उद्घाटन शांत वातावरण में हुआ और कोई अप्रिय घटना नहीं हुई।

कार-रैली का उद्घाटन हो जाने के बाद, हालांकि कोई कार्यक्रम उस दिन नहीं होने वाला था, फिर भी लोगों की भीड़ सुन्दरवन में जुटी रही। सुरक्षा पुलिस आदि की बाधा हट जाने से सारा आयोजन एक खुले मेले की शक्ल में बदल गया। जिन्हें निमन्त्रणपत्र नहीं मिल सके थे, वे भी अब बेरोकटोक मेले में आ सकते थे। व्यवस्था करने वालों ने वहां छोटे-बड़े झूलों, बच्चों के लिए मिनिगाड़ी, चटोरी भीड़ के लिए चाट-पकौड़ी की दुकानों और जुआरी लोगों के लिए तरह-तरह के खेलों के रूप में जुए की दुकानों का बंदोबस्त कर रखा था। नकली गहने, सिले-सिलाए कपड़े इम्पोर्टिड माल के नाम पर तस्करी से लाई गई घड़ियां, ट्रांजिस्टर, वीडियो टेप, रंगीन नीली फिल्मों की कतरनें आदि मेले का बहुत बड़ा आकर्षण थीं। कला महाविद्यालय की ओर से लगाई गई कला संस्कृति प्रदर्शनी का विशाल मंडप भी भीड़ के लिए काफी बड़ा आकर्षण था और इसमें अत्यंत आधुनिक वेश-भूषा वाली सम्भ्रांत महिलाओं की जितनी भीड़ थी, आभूषणों से लदे, गदराए देहों वाली सेठानियों और बनियाइनों की भीड़ उससे कम नहीं थी। खुजराहो के चित्रों, राजा-महाराजाओं की रानियों और दासियों के मुगल, राजपूत और पहाड़ी शैली के चित्रों से लेकर आधुनिक शैली के नग्न, अर्धनग्न चित्रों में सबकी भरपूर रुचि

दीखती थी।

लेकिन सबसे बड़ी भीड़ तो श्री कृष्णप्रसाद के साड़ी एम्पोरियम की तरफ से लगे साड़ी स्टाल पर थी। समाचारपत्रों ने उस साड़ी एम्पोरियम की खबरें अच्छे और बुरे संदर्भों में इतनी बार छापी थीं कि उसका नाम हरएक की जुबान पर चढ़ गया था। अफसरों की बीवियों और सेठ, व्यापारियों, दुकानदारों की बीवियों में साड़ियां खरीदने के लिए होड़ लगी हुई है। अफसरों की बीवियां जो अपनी पढ़ाई-लिखाई और रुतबे की वजह से अपने को श्रेष्ठ मान रही थीं, यहां अपनी हीनता अनुभव कर रही थी। जब पंडाल में फंक्शन चल रहा था और प्रधानमंत्री का भाषण हो रहा था तो अगली पंक्तियों में केवल अफसरों की बीवियों को ही बैठने का मौका मिला था और सेठ-दुकानदारों की बीवियां डरती-डरती पिछली पंक्तियों में बैठी थीं। जब प्रधानमंत्री के गले में फूलों की मालाएं डाली जा रही थीं, तो आगे बैठने वाली अफसरों की बीवियों को अपने पतियों के साथ प्रधानमंत्री के बदले में स्वयं मुस्कराने, सिर झुकाने और प्रधानमंत्री के सामने तालियां बजाने का अवसर मिला था जबकि सेठ, दुकानदारों की बीवियां न प्रधानमंत्री को ठीक तरह से सुन सकी थीं और न उनकी नजरों से नजरें मिलाकर कृतार्थ हो सकी थीं। प्रधानमंत्री के भाषण के समय अपने भारी नितंबों से गद्दों पर उछल-उछलकर दाद देने का मौका भी अफसरों की बीवियों को ही मिला था। लेकिन कृष्णप्रसाद के साड़ी काउंटर पर सेठानियां और बनियाइनें अगली-पिछली सारी कसर निकाल रही थीं। अफसरों की बीवियां किसी साड़ी को घुमा-फिराकर बीसियों बार परखतीं और भाव-ताव करतीं और एक या ज्यादा से ज्यादा दो साड़ियां खरीदतीं, वहां दुकानदारों की बीवियां एक बार डिजाइन पर सरसरी नजर डालकर दर्जनों साड़ियों का आर्डर दे रही थीं। दोनों वर्गों की महिलाओं के बीच साड़ियों की छीना-झपटी भी हो जा रही थी। एक बालकटी छरहरे बदन वाली अफसर की बीवी और एक थुलथुल शरीर वाली महिला में तो एक साड़ी की खींचातानी में हाथापाई भी हो गई। पहली महिला बड़ी देर से एक साड़ी के डिजाइन को देख रही थी, दूसरी ने उसे उसके हाथ से झटककर सेल्समैन से उसे बांधने के लिए कहा। पहली महिला ने देखा

कि दूसरी महिला उस दर्जी की पत्नी है जिसकी उनकी मार्केट में छोटी-सी कोठरी है। दूसरी महिला भी पहली महिला को जानती थी।

"यह साड़ी मैंने पसंद की है। अफसर की बीवी ने बड़े रोब से कहा।

"आप आधे घंटे से देख रही हैं इसे, लेकिन आर्डर नहीं दे रहीं। मैंने पहले आर्डर दिया है।" दर्जी की बीवी ने आंखें तरेरकर कहा।

"यह क्या बदतमीजी है?" अफसर की बीवी ने साड़ी खींची।

"बदतमीज तुम हो।" दर्जी की बीवी ने और जोर से साड़ी खींची।

दोनों गुत्थमगुत्था हुईं और इस छीना-झपटी में साड़ी फट गई। सेल्समैन दोनों पर बरस पड़ा—

"यह आपने क्या किया? इस साड़ी के आधे-आधे पैसे आप दोनों को देने पड़ेंगे।"

"हम क्यों दें?" अफसर की बीवी गरजी।

दर्जी की बीवी ने कहा—"यह साड़ी इन्हें दे दो और बिल मेरे बिल में जोड़ दो। लाओ मेरी बारह साड़ियां।"

सेल्समैन ने बिल बनाया। दर्जी की बीवी ने पर्स से सौ-सौ के नोटों का बंडल निकाला, पैसे दिए और एक व्यंग्य-भरी नजर अफसर की बीवी पर डालकर चली गई।

दिन-भर मेले की गहमा-गहमी चलती रही। शाम पांच बजे से रैली की कारें वापस आने लगीं। मेले में जमे हुए लोग सड़कों के किनारे खड़े होकर तालियां बजाकर उनका स्वागत करने लगे। पहली, दूसरी और तीसरी कार पर विजय के उपलक्ष्य में फूलों के हार पहनाए गए। बाद में आने वाली कारों की तरफ किसीने ध्यान नहीं दिया और मेला रात दस-ग्यारह बजे तक चलता रहा।

दूसरे दिन के कार्यक्रम सुबह साढ़े नौ बजे नगर प्रशासन मंत्री के उद्घाटन से शुरू हुए। उस दिन चूंकि सारा दिन कार्यक्रम चलने थे, इसलिए बिना टिकट के लोगों के आने की संभावनाएं नहीं थीं। फिर भी सुरक्षा की पूरी व्यवस्था की गई। नगर प्रशासन मंत्री के अलावा योजना मंत्री श्री एम० मोहन मुख्य अतिथि के रूप में पधारे थे और कई अन्य वी० आई० पी० मौजूद थे।

भीड़ आज शांत थी। लोगों के बैठने की व्यवस्था में थोड़ा परिवर्तन कर दिया गया था। दर्शकसमूह को तीन किनारों में लगी कुर्सियों और गैलरी में बिठाया गया था और बीच के स्थान को प्रतियोगियों के प्रदर्शन के लिए खुला छोड़ा गया था। जजों के बैठने के लिए एक अलग मंच बनाया गया था और जजों के मंच के साथ एक छोटा मंच कार्यक्रमों का निर्देश करने वाले के लिए था।

सबसे पहला आइटम पुरुष प्रतियोगिता का था। आइटम शुरू करने से पहले उद्घाटन की रस्म अदा की गई। इसमें स्कूल के बच्चों ने वंदे मातरम् गाया। कला महाविद्यालय के छात्रों ने वाद्यवृंद के साथ सरस्वती वंदना प्रस्तुत की। एक कवि ने देश भक्ति की कविता फिल्मी गाने की तर्ज पर गाई और फिर मंत्री जी ने उद्घाटन भाषण दिया। मंत्री ने अपने भाषण में लगभग वही बातें दोहराईं जो पिछले दिन प्रधान मंत्री के भाषण में कही गई थीं। उसके अलावा जो उन्होंने कहा उसका सार था कि वे प्रधान मंत्री के सिपाही हैं और उनकी सेवा में सर्वस्व अर्पण करना उनके जीवन का एकमात्र ध्येय है। समाचारपत्रों की आलोचना पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने कहा कि समाचारपत्र पूंजीपतियों के हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जनता की आकांक्षाओं का नहीं, इसलिए उनका कोई महत्त्व नहीं है। उन्होंने सौन्दर्य प्रतियोगिताओं के आयोजन को अभूतपूर्व, ऐतिहासिक और क्रांतिकारी घोषित किया और आयोजकों को बधाई देते हुए जनता से अपील की कि वे प्रधान मंत्री के हाथ मजबूत करें।

मंत्री का उद्घाटन भाषण समाप्त होने के बाद पुरुष प्रतियोगिताएं शुरू हुईं। जजों के मंच के साथ बने छोटे मंच पर स्वामी भद्राचारी जी पद्मासन की मुद्रा में बैठे। श्वेत धवल अधोवस्त्र के एक छोर से अपने वक्ष एवं स्कंध के कुछ भाग को ढके, नग्न मांसल भुजाओं, सिर-दाढ़ी के लहराते काले केशों में भद्राचारी जी सारे दर्शक समूह पर सम्मोहिनी डाल रहे थे। उनके सामने पचास युवक केवल लंगोट पहने अपनी स्निग्ध, कोमल, मांसल देहों का भव्य प्रदर्शन करते हुए नमस्कार की मुद्रा में खड़े थे। भद्राचारी जी ने कहना शुरू किया—

"योग विद्या हमारे रिसियों-मुनियों की अनुपम देन है। आदि योगी

भगवान संकर से मिली इस विद्या का संबंध सरीर के अनुसासन से ही नहीं, मन के अनुसासन से भी है। सरीर और मन दोनों का अनुसासन जब आता है तो सुंदरता प्रकट होती है, इसलिए योगी हर सुंदर चीज से प्रेम करता है। सुंदर इस्त्री हो या सुंदर पुरुष हो उससे प्यार करना योगी का सहज धर्म है। यह सुंदर नौजवान जो आपके सामने खड़े हैं अपनी योग विद्या का प्रदर्सन करके दिखाएंगे कि किस तरह हमारे नौजवानों को योगाभ्यास करना चाहिए और समाज को ऊंचा उठाना चाहिए…"

इसके बाद उन्होंने नौजवानों से भिन्न-भिन्न प्रकार के आसन कराए। प्रत्येक आसन के बारे में वे धाराप्रवाह कमेंटरी भी करते जा रहे थे और रामायण, महाभारत तथा अन्य शास्त्रों से उदाहरण देकर उनका महत्त्व समझाते जा रहे थे। कबीर के रहस्यवादी पदों को मधुर स्वर में गा-गाकर वे इंगला, पिंगला, सुषुम्ना और कुंडलिनी के रहस्यों को खोलते जा रहे थे।

आसनों का प्रदर्शन करने के बाद सब प्रतियोगी युवक एक-एक करके निर्णायकों के आगे से और फिर सारे दर्शकों के सामने से गुजरे। तालियों की गड़गड़ाहट से उनका उत्साहवर्धन किया गया और उसके बाद वे पंक्तिबद्ध अपने कक्ष में चले गए।

बच्चों की प्रतियोगिता दो चरणों में हुई। पहले शिशुओं की प्रतियोगिता हुई। मां के साथ शिशु को छोटे मंच पर लाया गया। एक व्यक्ति शिशु से सवाल पूछता था और शिशु इशारों से उसका जवाब देता था। प्रश्नों का क्रम कुछ इस तरह था—

"तुम्हारा हैड कहां है ?"

बच्चा सिर पर हाथ रखता…

"नोज…?"

बच्चा नाक पकड़ लेता…

"माऊथ…?"

बच्चा मुंह पर अंगुली रखता।

"हैंड्स…"

बच्चा हाथ ऊपर उठाता।

"आईज़..."

बच्चा दोनों आंखें मीच लेता।

बड़े बच्चों की प्रतियोगिताओं में भी माताओं का योगदान रहा। कुछ माताएं बच्चों को नाचने के लिए कहतीं और वह ठुमक-ठुमककर नाचने लगता। कुछ बच्चे मां के कहने पर नकल करके दिखाते कि बाबा कैसे खांसते हैं, कुत्ता कैसे भौंकता है, चिड़िया कैसे बोलती है, गधा कैसे रेंगता है आदि आदि। लेकिन उनकी परीक्षा साथ खड़ा दूसरा व्यक्ति भी लेता। उसके प्रश्न होते—

"व्हट्स योर नेम...?"

"व्हट्स योर पापाज़ नेम ?"

"व्हट्स योर मम्मीज़ नेम ?"

बच्चा अपनी सामर्थ्य अनुसार जवाब देता। उसे कविता सुनाने के लिए कहा जाता तो वह ट्विंकल-ट्विंकल...या 'हिकरी डिकरी' सुनाता। उसे गाना सुनाने के लिए कहा जाता तो वह कोई फिल्मी गीत का मुखड़ा सुना देता। उससे स्कूल का व्यायाम कराया जाता और अंत में जयहिंद बुलवाकर वापस भेज दिया जाता।

कुत्तों की प्रतियोगिता का कार्यक्रम सबसे रोचक था। भद्राचारी के योगाश्रम में कुत्तों को कुछ योगा करतब सिखाए गए थे। प्रशिक्षक की सीटी पर उठना, बैठना, दाएं-बाएं घूमना, पीछे पलटना, हवा में उछलना, जमीन पर लेटना और दोनों पंजे उठाकर नमस्कार करना आदि करतब इतने आकर्षक थे कि दर्शक दम साधे बैठे रहे। आज्ञा-पालन और अंग-संचालन का अनुशासन इतना पूर्ण था कि इस तरह की पूर्णता अब तक किसी सैन्य प्रदर्शन या आर० एस० एस० की परेड में भी नहीं देखी गई थी। इनके अतिरिक्त मालिकों ने उन्हें गेंद, कलम, कागज-रूमाल आदि के जो-जो खेल सिखाए थे उनका प्रदर्शन भी हुआ।

सभी कार्यक्रम इतने रोचक थे कि दर्शक लगातार तीन घंटे बैठे रहे। आधे घंटे के अंतराल के बाद निर्णायकों ने इनाम घोषित किए और योजना मंत्री श्री एम० मोहन ने पुरस्कार बांटे।

इसी के साथ सुंदरवन के कार्यक्रम समाप्त हुए। शाम छः बजे से वहां

सांस्कृतिक कार्यक्रम, नाच, कव्वाली, कवि-सम्मेलन आदि होने वाले थे और तब तक लोग मेले का मजा ले सकते थे।

उधर सात बजे से कुमारी प्रभा होटल में सुंदरी प्रतियोगिता होने वाली थी। इस आइटम के सबसे अधिक आकर्षण होने की वजह से यहां भीड़ जुटने की आशंका थी, इसलिए खास-खास लोगों को ही निमंत्रण कार्ड दिए गए थे। फिर भी ब्लैक में कार्ड खरीदने वालों की संख्या इतनी ज्यादा थी कि पुलिस को तीन बार लाठी चलानी पड़ी।

पारिजात निकुंज की शोभा सचमुच स्वर्ग का दृश्य उपस्थित कर रही थी। निश्चित स्थान और योजना से लगे विदेशी वृक्षों और रंग-बिरंगी रोशनियों के बीच पैंतालीस सुंदरियां अपनी विविध अदाओं में प्रकट हो रही थी। श्री कृष्णप्रसाद साड़ी वाले के एम्पोरियम से चुने हुए उत्कृष्ट डिजाइनों की साड़ियां पहनकर प्रत्येक सुंदरी दर्शक-समूह के सामने से जब गुजरती थी तो सैंकड़ों बिजलियां टूटती थीं। स्विमिंड ड्रेस में सद्यःस्नात सुंदरियों की छटा तो दर्शक-समूह में उन्माद की स्थिति पैदा करने वाली थी। लोग अपनी-अपनी जगह खड़े होकर तालियों से उनका अभिनंदन कर रहे थे। सभ्य और सुसंस्कृत मजमा होने के कारण कहीं से सीटियां नहीं बजीं और न कोई और अभद्र प्रदर्शन किया गया।

मामूली-सी गड़बड़ी के बावजूद, सारा आयोजन कुल मिलाकर बहुत सफल रहा। अधिकारियों ने एक-दूसरे को बार-बार बधाई दी। नगर प्रशासन मंत्री ने वतनी साहब, तारकनाथ, दयानिधि शर्मा को व्यक्तिगत रूप से बधाई दी और उनके काम की प्रशंसा की। कार कंपनी के मालिक श्री जयरथ, कुमारी प्रभा होटल के मालिक श्री निर्मलसिंह, साड़ी एम्पोरियम के मालिक श्री कृष्णप्रसाद, शहीद साहब और सरफरोश साहब के सहयोग के लिए मंत्री महोदय ने व्यक्तिगत आभार प्रकट किया।

चूंकि समारोह रात देर तक चला और सब लोग बहुत थक गए थे, निर्मलसिंह ने वतनी साहब, दयानिधि शर्मा, मिसेज खन्ना और तारकनाथ से अनुरोध किया कि वे होटल में ही आराम करें। मिसेज खन्ना के साथ आई उसकी सहायिका ललिता को भी रोक लिया गया और मिसेज खन्ना के कमरे में उसके सोने की व्यवस्था हुई। चूंकि ललिता बहुत थक गई थी,

वह अपने कमरे में सोने चली गई। शेष चार मेहमानों के लिए निर्मल-सिंह ने व्हिस्की, चिकन-कबाब आदि की व्यवस्था की और उनसे विदा ली।

उधर सुंदरवन में नगरश्री निदेशालय के कर्मचारियों के लिए यह दिन वर्ष का सर्वश्रेष्ठ दिन था क्योंकि इस दिन उनके दफ्तर की योजनाओं का उद्धार हो रहा था। सुंदरवन के मुख्य कार्यक्रम सम्पन्न होने के बाद शाम के विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों की व्यवस्था का भार वरिष्ठ उपनिदेशक श्री वर्मा के कंधों पर आ गया था क्योंकि निदेशक श्री दया निधि शर्मा और सचिव श्री तारकनाथ कुमारी प्रभा होटल में सुंदरी प्रतियोगिता की व्यवस्था करने चले गए थे। निदेशालय के सभी अधिकारी रस्तोगी, खुल्लर, कपूर तथा फ्रैंकदास और सभी अधीनस्थ कर्मचारी, लड़कियों को छोड़कर, रात देर तक ड्यूटी पर थे और उन सबके ऊपर निगरानी रखने का काम वर्मा साहब को सौंपा गया था। पंडाल के पिछले हिस्से में स्टाफ के लिए दो छोलदारियां थीं, एक अधिकारियों के लिए और एक अधीनस्थ कर्मचारियों के लिए।

शाम के सांस्कृतिक कार्यक्रम शुरू होने के बाद निदेशालय के कर्मचारी अपने को काफी रिलेक्स महसूस कर रहे थे। अब उनका काम नाच-कव्वाली के कर्मचारियों या कवियों के लिए चाय-कॉफी की व्यवस्था करना भर रह गया था। फुटकर खर्चों के तत्काल भुगतान के लिए अच्छी-खासी रकम एडवांस में निकालकर कोषाध्यक्ष वहां मौजूद था। खर्च के वाउचरों को चैक करने और पास करने के लिए लेखा-सहायक और प्रशासन अधिकारी मिस्टर खुल्लर थे। मिस्टर रस्तोगी, फ्रैंकदास और कपूर का वहां अब कोई काम नहीं था लेकिन ड्यूटी उन्हें भी बारह बजे तक निभानी थी। दफ्तर के तीन ड्राइवर, दस क्लर्क और छः चपरासी भी ड्यूटी पर थे और इन सबके ऊपर थे वर्मा साहब, जो नलीदार पतलून, डबलब्रेस्ट कोट और बो पहनकर और तीखी गंध वाले इतर का छिड़काव कर दिन-भर पंडाल में इधर से उधर फिरकी की तरह घूमते रहे थे और अब पंडाल से उठाकर लाए गए सोफे पर पड़े बड़बड़ा रहे थे। उनके पास कपूर और फ्रैंकदास कुर्सियों पर बैठे थे। रस्तोगी और खुल्लर पास ही

खड़े थे, टहलने की मुद्रा में।

मिस्टर वर्मा को कुमारी प्रभा होटल में सुंदरी प्रतियोगिताओं की व्यवस्था के लिए जाने से डायरेक्टर ने रोक दिया था। यह सोचकर कि वे छः बजे के बाद पीए बिना नहीं रहेंगे, उन्होंने वर्मा को कुमारी प्रभा होटल में ले जाना ठीक नहीं समझा और उन्हें वहीं रहने का आदेश दिया था। वर्मा साहब मन ही मन इस बात पर जले-भुने बैठे थे। अपनी खीज मिटाने के लिए वे नाच-कव्वाली का प्रोग्राम पेश करने वालों के ग्रीन रूम में लड़कियों से मजाक-वजाक करते रहे। पार्टी की इन्चार्ज मिस भारती से पुरानी जान-पहचान के कारण वे नई लड़कियों के हाथ छूने या ठुड्डी पकड़ने जैसे करतब बड़ी सहजता से करते और उसमें असीम सुख प्राप्त करते रहे। इश्क, मोहब्बत, चिलमन, जिगर, शमां, परवाना और बुलबुल से घिसे-पिटे शब्दों के उर्दू शेर उन्हें भरपूर मात्रा में याद भी थे और खुद भी इन शब्दों को जोड़-तोड़कर शेर लिख लेते थे। बच्चन की मधुशाला, प्रसाद के आंसू और सुमित्रा नंदन पंत की कविताओं की किसलय कोमल मधु-चुआती, आंसू टपकाती शब्दावली में गीत लिखने का भी शौक था। इसी साहित्यिक सामर्थ्य के बल पर वे लड़कियों में बहुत जल्दी लोकप्रिय हो जाने के दावे करते थे और उस दिन ग्रीनरूम में उन्होंने उन दावों को सत्य सिद्ध करने का निश्चय कर रखा था। लेकिन तभी दफ्तर के चपरासी भगवानचंद्र ने उन्हें बताया कि निर्मलसिंह की चिट्ठी लेकर उन्हें कोई मिलने आया है।

वर्मा जी अपनी शायरी को भुलाकर तपाक से बाहर निकले। निर्मल सिंह का आदमी व्हिस्की की छः बोतलें लाया था। कड़ाके की ठंड से बचने के लिए दफ्तर के स्टाफ के लिए भेजी गई उन छः बोतलों में से एक तो वर्मा ने तौलिये से लपेटकर प्रेमानंद ड्राइवर को दे दी ताकि वह उसे गाड़ी में छिपा आए और चुपाचाप घर पहुंचा दे। एक बोतल अपने लिए खोल ली और बाकी चार सारे स्टाफ के लिए अपने विश्वासपात्र कपूर के हवाले कर दीं। डेढ़ पेग एकसाथ नीट गटकने के बाद वर्मा ने किंगसाइज सिगरेट सुलगाई और सोफे पर टांगें फैलाकर लेट गए। कुछ देर लेटे-लेटे जड़ीभूत नजरों से दूर देखने के बाद उन्होंने कपूर को आवाज दी।' कपूर

पास आया तो वर्मा सोफे पर उठ बैठे और बोले—

"निकले तेरी गली से जब कारवां हमारा

चिलमन के पीछे तुम हो यह देखने का अरमां है···"

क्या समझे···?"

"बहुत खूब !" कपूर ने दाद दी।

कवि सम्मेलन के कवियों के लिए लाए गए काजू का पैकेट खोलकर उन्होंने एक तश्तरी में डाल लिया और सारे स्टाफ को बुलाने का आदेश दिया। अफसर, क्लर्क, चपरासी, ड्राइवर सब वर्मा साहब के दरबार में हाजिर हुए तो वर्मा बोले—

"आप लोगों को पता है यह मेरा आखिरी साल और आखिरी फंक्शन है। माबदौलत का हुक्म है कि इस दिन को धूमधाम से मनाया जाए। मैंने आप सब लोगों के लिए व्हिस्की और काजू की व्यवस्था की है। मैं चाहता हूं कि तुम लोग आज की इस महफल में शरीक हो। जो इसमें शरीक नहीं होगा, मैं उसे इसी वक्त सस्पेंड करूंगा।"

वर्मा जी ने एक और भारी पैग भरा और नीट पी गए। जो लोग नहीं पीते थे वे चुपचाप वहां से खिसक गए। बाकियों ने अपने-अपने पैग भरे और वर्मा जी के सेहत के जाम टकराए। वर्मा जी ने शेर पढ़ा :

"इस ओर कसक है, पीड़ा है,
उस ओर न जाने क्या होगा
पलकों का साया दे दो प्रिय
कल भोर न जाने क्या होगा ?"

"वाह। वाह ! कमाल है वर्मा जी···" आप तो आशुकवि हैं।" खुल्लर ने तारीफ की।

"अरे, हम जब लखनऊ युनिवर्सिटी में पढ़ते थे तो बच्चन हमारे सामने कविता पढ़ने से डरते थे।"

कैशियर दिलीप को सामने देखकर अचानक वर्मा को भोजन की याद आई।

"मिस्टर दिलीप। टाइम क्या है ?"

"हजूर। नौ बजे हैं।"

"नौ बजे हैं और खाना अभी तक नहीं आया। फौरन प्रेमानद के साथ गाड़ी में जाओ और मोती महल से चिकन तंदूरी, नान, बिरियानी लाओ। सारे स्टाफ के लिए।"

"लेकिन साहब, इसके लिए पैसे···"

"बकवास बंद करो। यह मेरा आर्डर है। फौरन तामील हो वरना अभी सस्पेंड करूंगा।"

"साहब, मैं कैशियर हूं। मुझसे कोई एडवांस ले ले। बाद में वाउचर के साथ हिसाब दे दे।"

"कपूर के नाम एडवांस दो।"

एक पर्ची पर कपूर के नाम एडवांस की अर्जी लिखी गई। वर्मा जी के कांपते हाथ को पकड़कर उसपर दस्तख्त कराए गए और पांच सौ रुपये निकालकर प्रैंकदास और कपूर को प्रेमानंद की गाड़ी में मोती महल भेजा गया।

तीसरा पैग लेने के बाद वर्मा जी गरजे—

"व्हेर इज दयानिधि शर्मा? व्हेर इज तारकनाथ?···उन्होंने क्या समझ रखा है? कुमारी प्रभा होटल वे किससे पूछकर गए? आई सस्पेंड देम इमीडिएटली···मिस्टर सधवा।"

स्टेनोग्राफर मिस्टर सधवा आगे बढ़कर बोला—

"जी साहब।"

"डिक्टेशन लो···आई हियरबाई सस्पेंड तारकनाथ एण्ड डी० एन० शर्मा फोर्थविद। जाओ आर्डर टाइप कर के लाओ।"

सधवा अपने हिस्से के दो पैग ले चुका था, बोला :

"साहब, मुझे छः सौ उनतालीस रुपये चालीस पैसे मिलते हैं···"

"तो क्या हुआ···?"

"साहब, इस महीने पांच सौ निन्यानवे रुपये चालीस पैसे हो जाएंगे।"

"तुम गधे हो···यह कैसे हो सकता है?"

"साहब, फेस्टिवल एडवांस के चालीस रुपये कटने लगेंगे।"

"बकवास बंद करो। आर्डर टाइप करो।"

"साहब, पांच सौ निन्नयानवे रुपये चालीस पैसे का टाइम खत्म हो

गया ।"

"मिस्टर सधवा । आई सस्पेंड यू ।"

"साहब···सेलटैक्स में चार साल नौकरी कर चुका हूं और छः साल सिविल सप्लाई में···कर दीजिए सस्पेंड ।"

"आई से यू गेट आउट···"

वर्मा चीखने से पहले तपाक से उठे और चीखने के बाद लड़खड़ा कर गिर पड़े । लोगों ने पकड़कर उन्हें सोफे पर लिटाया । थोड़ी देर में वर्मा जी ढेर हो गए ।

दूसरी छोलदारी में रस्तोगी और खुल्लर काजू चबाए जा रहे थे । उनके आधे गिलास तिपाई पर पड़े थे । रस्तोगी कह रहा था—

"खुल्लर साहब, आप जीनियस हैं । भगवान कसम, आप किसी प्राइवेट फर्म में होते तो इस वक्त आठ हजार रुपये तनख्वाह लेते । क्या ड्राफ्टिंग है ! क्या नोटिंग है ! कोई साला आई० ए० एस० क्या लिखेगा ?"

"आई० ए० एस०···?" खुल्लर ने कड़वे स्वाद-सा मुंह बनाते हुए कहा, "साले सिफारिशी होते हैं । एक बार मेरी झड़प हो गई के० के० तिवारी से । सीधे आई० ए० एस० होकर ज्वाइंट सेक्रेटरी बना था । मेरा नोट सेक्शन आफिसर, अंडर सेक्रेटरी, डिप्टी सेक्रेटरी से होता हुआ उसके पास पहुंचा । हमारे एक साथी के खिलाफ विजिलैंस का केस था । मैंने लिखा, मोटिव सिद्ध हुए बिना भ्रष्टाचार सिद्ध नहीं होता । उसने बुलाकर पूछा, मैं फैसला देने वाला कौन होता हूं ? मैंने कहा, मैंने फैसला नहीं, सुझाव दिया है । गलत है तो आप बदल दीजिए । तीन महीने उसने फाइल अपने पास रोके रखी । फिर चुपचाप दस्तखत कर दिए ।"

रस्तोगी गद्गद होकर बोला—

"खुल्लर भाई, इसीलिए तो मैं तुम्हें अपना गुरु मानता हूं । देखो, हम दोनों एक ही स्केल में है, फिर भी तुम मुझसे बड़े हो । मुझे तुम्हारे पांव छूने में भी कोई शरम नहीं होगी । उस कुशक के बच्चे ने ऐसा केस बनाया है मेरे खिलाफ कि बस तुम्हीं बचा सकते हो ।"

रस्तोगी ने खुल्लर के पांव पकड़ लिए । खुल्लर बोला—

"पांव मत छुओ । हम भाई-भाई हैं । जहां तुम्हारा पसीना गिरेगा,

वहां मैं अपना खून बहाऊंगा। लेकिन वायदा करो उस साले वर्मा की बातों में नहीं आओगे।"

"वर्मा को मैं दो कौड़ी से ज्यादा एहमियत नहीं देता।"

"तो फिर सुनो। कुशक और डा० मोहन के खिलाफ मैंने ऐसा केस बनाया है कि उनका डिसमिसल सौ फीसदी तय है।"

"लेकिन मेरे खिलाफ जो केस है···"

"उसे मैं रफादफा कर दूंगा। इतना भी नहीं कर सका तो लानत है मेरी पच्चीस साल की नौकरी को। एफ आर, एस आर, सी एस आर, जी एफ आर सब मेरी जुबान पर हैं।"

दूसरी छोलदारी से वर्मा के डकारने की आवाज आई। खुल्लर और रस्तोगी ने अपने-अपने गिलास गटके और दूसरी छोलदारी में गए। वर्मा ने कै कर दी थी और वह सोफे से लुढ़ककर नीचे गिर पड़ा था। खुल्लर ने जीप के ड्राइवर श्यामस्वरूप को बुलाया। दो-तीन लोगों ने वर्मा को उठाकर जीप में डाला और जीप वर्मा को घर छोड़ने चली गई।

कुमारी प्रभा होटल के कमरे में ललिता गहरी नींद सोई थी। पिछले एक महीने से उसे इतना काम करना पड़ा था कि वह इस सारे माहौल से भागकर एकान्त में जी भर सोना चाहती थी। वह बिना खाए-पिए अपने कमरे में आकर सो गई थी। थोड़ी देर तक तो उसे नींद नहीं आई क्योंकि साथ वाले कमरे से तारकनाथ, मिसेज खन्ना, वतनी और दयानिधि शर्मा के हंसने खिलखिलाने की आवाजें आ रही थीं। फिर वह नींद में बेसुध हो गई।

अचानक उसने अपनी छाती पर भार महसूस किया। उसका दम घुटने लगा तो नींद टूट गई। उसने देखा मिसेज खन्ना हांपती हुई उसके ऊपर गिरी है। उसका शरीर बिल्कुल नंगा था। ललिता ने देखा उसकी साड़ी भी उतार दी गई हैं और वह भी नंगी है। हड़बड़ाकर उसने मिसेज खन्ना की पकड़ से अपने को छुड़ाने की कोशिश की लेकिन मिसेज खन्ना की भैंसे जैसी जकड़ से छूटना उसके लिए संभव नहीं हुआ। मिसेज खन्ना के मुंह से शराब की बदबू आ रही थी और वह अपने उस बदबूदार मुंह से बार-बार ललिता के होंठों को छूने का प्रयास कर रही थी। थोड़ी देर तक

ललिता के जिस्म को अपने थुलथुल शरीर से मसलने के बाद मिसेज खन्ना के गले से एक सिसकार भरी चीख निकली और फिर वह निढाल होकर एक तरफ लुढ़क गई। ललिता उठी। उसने अपने कपड़े संभाले। तीव्र घृणा से मिसेज खन्ना को देखा। नग्नावस्था में चित पड़े हुए उस मांस के लोथड़े को देखकर उसे उबकाई आने को हुई। इस लोथड़े से कुचली जाने के कारण उसे अपने से भी घृणा होने लगी। उसे लगा कि उसके अपने शरीर पर कीड़े रेंग रहे हैं। एक पल में उसे न जाने क्या सूझा कि वह दौड़कर खिड़की के पास गई और तीन मंजिल नीचे कूद पड़ी।

दूसरे दिन के समाचारपत्रों में सौंदर्य प्रतियोगिताओं के भव्य समारोह के रोचक, सचित्र विवरण छपे और उस समारोह को वर्ष-भर का भव्यतम समारोह कहकर प्रशंसित किया गया। उस सारे विवरण में प्रतिकार करने वाले नवयुवकों का उल्लेख तीन-चार पंक्तियों में किया गया था और उस कार्यक्रम की चरम परिणति अर्थात् औरत द्वारा औरत के बलात्कार की घटना का कोई उल्लेख न उस दिन के समाचारपत्रों में हुआ न अगले दिन के समाचारपत्रों में। अलबत्ता कुछ दिन बाद पुलिस स्रोतों के हवाले से अखबारों में एक छोटी घटना छपी कि जमुना के किनारे पुल के नीचे रेत के तट पर एक लड़की की लाश मिली। गहरे सांवले रंग की लड़की की कोई शिनाख्त नहीं हो सकी। लड़की के शरीर पर ऊंचाई से गिरने की चोटें पाई गईं। पुलिस ने आत्महत्या का मामला दर्ज कर लिया है।

नौ

आई० ए० एस० के प्रशिक्षण के लिए मसूरी संस्थान में जाने के बाद रेखा को एक डेढ़ महीने तक हर सप्ताह श्याम मोहन का पत्र मिलता रहा। फिर एक दिन श्याम मोहन को मॉडल टाऊन के पते पर लिखा गया पत्र वापस आ गया। लिफाफे के बाहर ऊबड़-खाबड़ लिखाई में डाकिये ने लिखा था "घर छोड़ दिया है।" रेखा को इसपर हैरानी हुई। फिर

उसने दफ्तर के पते पर पत्र लिखा। वह भी वापस आ गया। इसके बाद उसने ललिता को पत्र लिखा कि वह श्याम मोहन के दफ्तर से पता लगाए कि वे कहां हैं और कैसे हैं। ललिता ने पूछताछ करने के बाद उसे बताया कि वे लम्बी छुट्टी पर चल रहे हैं। रेखा के लिए यह सब रहस्य था। हालांकि वह जानती थी कि श्याम मोहन का दफ्तर में भी दिल नहीं लगता था लेकिन लम्बी छुट्टी पर जाने का कोई कारण उसकी समझ में नहीं आ रहा था। उसकी इच्छा हो रही थी कि वह कुछ दिन की छुट्टी लेकर श्याम मोहन से मिलने जाए लेकिन आवधिक परीक्षाओं के कारण वह समय नहीं निकाल सकी। फरवरी के प्रथम सप्ताह में तीन दिन की छुट्टी लेकर वह दिल्ली आई।

दफ्तर वालों से पूछताछ के बाद रेखा को मदनगीर की झुग्गी-झोंपड़ी कालोनी का वह पता मिला जहां अखबार में छपी खबरों के अनुसार श्याम मोहन रहता था। रेखा जब उस पते पर पहुंची तो एक मैली-सी धोती और कमीज पहने एक वृद्ध व्यक्ति को झोंपड़ीनुमा मकान में बीड़ी पीते हुए पाया। पहले तो रेखा कुछ पूछने से हिचकिचाई, फिर उस वृद्ध व्यक्ति को अपनी ओर देखते पाकर पूछ बैठी—

"यहां कोई डा० श्याम मोहन रहते हैं ?"

बूढ़े ने दो-तीन बार होंठ ऊपर-नीचे किए जैसे कुछ चबा रहा हो फिर थू: करके कोने में थूक दिया। खाट से उठकर उसने दोनों हाथ रेखा की तरफ जोड़े और अन्दर आने का इशारा किया। उस कमरे के साथ लगा हुआ दूसरा कमरा था। रेखा को वह दूसरे कमरे में ले आया और एक कुर्सी पर बैठने का इशारा किया। रेखा ने देखा, यह कमरा काफी साफ-सुथरा है। एक बांस की खाट, दो-तीन कुर्सियां, फर्श पर चटाई, बेंत के बने दो बुकरैकों पर किताबों और कागजों के ढेर, एक कोने में पड़े आठ-दस ब्लाक।

"आप कहां से आई रहें सरकार।" कुछ देर के बाद बूढ़े ने खड़े-खड़े ही पूछा। अभी भी वह दोनों हाथ जोड़े खड़ा था। रेखा को बड़ी परेशानी हो रही थी। वह कुर्सी से उठ खड़ी हुई और बोली :

"आप बैठिए न बाबा।"

बूढ़ा सकपकाया, "नाहीं, नाहीं सरकार, हम न बैठिहैं उहां। हम इहां बैठिहैं।" और वह जमीन पर उकड़ूँ बैठ गया। हाथ अभी भी जुड़े हुए थे।

"मैं श्याम मोहन से मिलने आई हूं। कहां हैं वे ?" रेखा ने धड़कते दिल से पूछा।

"सरकार, वो लड़कन के साथ जेल में जाइ रहिहैं। जल्दी ही आवनगे। काम का है सरकार ?"

सरकार शब्द रेखा के दिल में छुरी की तरह चुभ रहा था और उस बूढ़े की आंखों में देखने का उसे साहस नहीं हो रहा था। "जेल में क्यों गए वे ? क्या किया था उन्होंने ?"

बूढ़ा खिसककर पिछली तरफ के दरवाजे के पास गया और बाहर की तरफ मुंह करके थूकने के बाद बोला—

"हम कुछ न जानिहै सरकार। ओ लड़कन का-का कीन्ह। गोरमंट बूट कमटीशन कराई रहेन सरकार···। थूः··· । लड़कन नारे-वारे लगाइ रहेन पुलिस ने दबोच लीन्हें सरकार···थूः···"

कोने में पड़ी 'प्रतिकार' की एक प्रति उठाकर रेखा को देते हुए बूढ़ा आगे बोला, " इहो परचा निकालि रेहन श्याम बाबू। पुलिस आई के छीन लीन्ह सारे परचा और हमको धकियाए के कहिन···थूः···कहिन की प्रेमदास, तुम्हारे पास रुपया कहां से आया···थूः···सो सरकार, हम का बताई उनकूं ? पैसा श्याम बाबू दीन्ह। मकान छोड़ छः सौ रुपया किराये का बचाई लीन्ह और परचे में लगाई दीन्ह···हफीसरी छोड़ के इहां झोंपड़ी में खाट डाल पड़े रहिन श्याम बाबू। हमको कहिन तुम्हारे नाम से परचा निकालिहैं। हम कहिन, सरकार हम अनपढ़ गंवार। गोरमंट बहादुर माई-बाप सरकार···थूः···हम माई-बाप सरकार से दुसमनी काहे को मोल लेवें···गोरमंट बहादुर हमारी भलाई कूं वास्ते दिन-रात सरकार बेजार। थूः गोरमंट हमकूं पच्चीस गज का पिलाट दीन्ह सरकार···हम गोरमंट का नमक खाई रहें सरकार···थूः··· गोरमंट बहादुर हमकूं ऊपर उठायन में लगी रहें सरकार···थूः···हम न उठिहै तो एमां गोरमंट बहादुर का का कसूर सरकार··· भगवान को जो मंजूर होइहै, ओही तो होइहै सरकार···थूः श्याम बाबू कहिन भगवान-सगवान सब बेकार···गोरमंट

बेकार थू:···गोरमंट गरीब लोगन को काहे को उठावेगी ? उसका अपना पेट भरे तो दूसरे को उठावन की बात सोचे···थू:···सरकार श्याम बाबू कहिन रहे गोरमंट में लखपति करोड़पति होई रहें थू:···और झोपड़ी में रहिवे जो लोग वो कखपति के कखपति बने रहवेंगे···थू:···हम कहिन सरकार कि गोरमंट समाजवाद को लाई रहि···थू:···बड़े-बड़े ओहदेदार मंत्री, वकील, लीदर कहि रहिन, समाजवाद आइहै तो सब ठीक होई जाइहै···थू:···लेकिन सरकार, इन लड़कन बालनका का कसूर जो पुलिस जब मरजी, घर पकड़ कर लेई जेहै थू:···बड़े बंगला मा बैठा कोई कहि दीन्ह कि फलाने के छोकरे को धरपकड़ो। बस पुलिस भड़भड़ करि आ जाहिं···थू:···मारपीट करि के हवालात में बेकसूर को ठूंस दीन्ह···थू:···इन पुलिस वालन के बाल बचो नहीं का सरकार ? थू···जज-मलिस्टेट के पास फरियाद लेके जाहिहै सरकार तो घूस बिना कोई बे न सुने···थू:··· मैं कहिन श्याम बाबू, तुम काहे कूं हलकान होय हो। भगवान जब तलक हमारी फरियाद न सुनिहै तब तलक और कौन सुनिहै···थू:···सरकार भगवान···थू:···"

अचानक बूढ़े को याद आया कि उसने रेखा को पानी भी नहीं पिलाया। साथ की छोटी-सी कोठरी में जाकर घड़े से पानी लिया और गिलास रेखा के हाथ में देते हुए बोला, "सरकार, हम लाचार होई गईन। जब तें हमारी जोरु हमें छोड़ि के चली गईन रहि, घर खाली-खाली होई गईन। राजू को पुलिस हवालात में बंद करी दीन्ह तो हमारी जोरु बेहोस होई के गिर पड़िन और हस्पताल में जाइकै प्रान छोडि दीन्ह।···हम एहि घर छोड़ि कै कुशकवा के पास भी नहीं रहि सकिन सरकार···एहि घर में ओ की आतमा बसे रहे न···श्याम बाबू इहां रहन लगे परांत सरकार फिर चहिल-पहिल होई गई सरकार···गैस के चूल्हा मां ओह एक मिनट में चाय-वाय बनाई दई सरकार···हमको गैस का चूल्हा जलावन मां डर लागे सरकार···आप बैठो हम बाजार से···" कहते-कहते बूढ़ा रुका। थूकने की इच्छा पर काबू पाकर वह दूसरे कमरे से बाहर हो गया और थोड़ी देर में एक छोटे लड़के को साथ ले आया। लड़के के हाथ में चाय की केतली और दो कप थे।

"आपने चाय क्यों मंगवाई ?" रेखा ने संकोच से कहा, बूढ़ा मुस्कराया। मुंह बंद करके दूसरे कमरे में जाकर धीरे से बाहर थूका और दरवाजा बंद करके कमरे में लौट आया।

"आप सरकार, कोई बात का सोच-संकोच मत करिओ। इह चाय-वाय का खरचा परचे के नाम से निकल जईहै। हमार रोटी-पानी, चाय-बीड़ी-सीड़ी का सारा खर्च श्याम बाबू कहिन परचे के नाम जईहै। भगवान की किरपा सरकार···थूः···बंक मां परचे के नाम साठ हजार जमा हो गईन सरकार···श्याम बाबू लौट के आई है तो परचा फिर चालू होई जाईहै। हमकूं कहि गईन श्याम बाबू कि यहां रहो और मनेडर वगैरा आई रहिन ते लेई के दस्तखत करि देओ। लोग इहां आई के कबू-कबू तीस रुपया चंदा देई देहन सरकार। हम सब पैसा बंक मां डाल आईहैं सरकार···छुट-पुट खरच कूं वासते श्याम बाबू हमको तीन सौ रुपये दीन्ह सरकार···हम का करे ओहे का ? हमार का खरच सरकार ? दो कप चाय, एक बंडल बीड़ी···रोटी घर से आई जेहै। हम कहि रहिन, इह रुपया परचे के नाम को होईहै तो परचे पर ही लागे चाहिए सरकार···। पैसा बड़ी चीज सरकार···पैसा भगवान···थूः···"

रेखा बहुत थक गई थी। सुबह से न जाने कितनी जगहों में श्याम मोहन की तलाश में भटकी थी। अब जब वह उस स्थान पर पहुंची थी जहां श्याम मोहन उसे मिल सकता था, लेकिन नहीं मिला, तो उसकी हिम्मत जवाब दे गई। उसकी इच्छा हो रही थी कि यहीं लेट जाए।

"आप कुछ बता सकते हैं, श्याम बाबू कब तक छूटकर आएंगे ?" उसने बूढ़े से पूछा।

"हम कहि न सकत सरकार," बूढ़े ने कहा, "दो दिन मां भी आई सकत और एक महिना, दो महिना भी लगि सकत। गोरमंट माई बाप सरकार थूः पुलिस माई बाप सरकार···थूः···जजन के आगे मामला जाइन सरकार तो का कहि सकत थूः···जज-मलिस्टेट···माई-बाप सरकार···थूः···कानून की बात सरकार थूः···हम का कहि सकत कानून जो कहिगो सो होईगो सरकार···थू···"

रेखा ने एक कागज पर छोटा-सा पत्र लिखा :

" प्रिय मोहन,

मैं आई थी, तुम्हारी खोज में। तुम नहीं मिले। लेकिन तुम्हारे बारे में जो कुछ जाना वह तुम्हारे साथ रहकर भी न जान सकी थी। तुमने मेरे लिए जो परीक्षा निर्धारित की है, वह बहुत कठिन परीक्षा है। लेकिन मुझे विश्वास है कि मैं उसे अवश्य पार करूंगी। मेरी प्रतीक्षा करना।

तुम्हारी ही
रेखा "

पत्र को मोड़कर उसने किताबों के रैक में पेपरवेट के नीचे दबा दिया। इशारे से बूढ़े को समझाया कि यह पत्र श्याम मोहन को देना है। फिर धीरे-धीरे कदमों से मकान के बाहर आ गई और बस स्टाप की तरफ चल दी।

